अन्तर्राष्ट्रीय स्तर पर हिन्दी की स्थितियाँ एवं समस्याएँ

(मॉरिशस के विशेष सन्दर्भ में)

(हैदराबाद विश्वविद्यालय की पी-एच.डी. (हिन्दी) उपाधि हेतु प्रस्तुत शोध-प्रबंध)

2004

अनुसंधित्सु

प्रेमचंद्र

विभागाध्यक्ष :
प्रो.नूरजहाँ बेगम, डी.लिट्.
हिन्दी विभाग,
हैदराबाद विश्वविद्यालय,
हैदराबाद - 500 046.

निर्देशक :
प्रो.सुवास कुमार पी.एच.डी
हिन्दी विभाग,
हैदराबाद विश्वविद्यालय,
हैदराबाद - 500 046.

DEPARTMENT OF HINDI
School of Humanities,
University of Hyderabad,
Hyderabad - 500 046.

Date :

This is to certify that I, **Prem Chandra** have carried out the research embodied in the present dissertation entitled **"Antarrashtriya Star Par Hindi Ki Sthitiyan Evam Samasyayen" (Mauritius Ke Vishesh Sandarbh Mein)** for the period prescribed under Ph.D., ordinances of the University of Hyderabad.

I declare to the best of my knowledge that no part of this dissertation was earlier submitted, for the award of research degree of any University.

Head, Department of Hindi 29/1/05

(Signature of Candidate)
Name: PREM CHANDRA
Reg. No. 98HHP01.

27/1/05
Dean, School of Humanities
DEAN
School of Humanities
University of Hyderabad
Central University P.O.
HYDERABAD - 500 046.

(Signature of the Supervisor)

भूमिका

'हिन्दी' एक विश्व भाषा है। इसकी सीमा आज दुनिया भर में विस्तार पा चुकी है। इसकी वैश्विकता के कारण हिन्दी भाषा और साहित्य के प्रति मेरी रुचि और जिज्ञासा धीरे-धीरे बढ़ती गई। मेरे एम.फिल. लघु शोध प्रबंध का विषय 'मॉरिशस का हिन्दी साहित्य' ('लाल पसीना' के सन्दर्भ में) था। इसके कारण मुझे प्रचुर सामग्री मिली और काफ़ी जानकारी प्राप्त हुई। भारत समेत दुनिया के सैकड़ों देशों में हिन्दी विद्यमान है। इसकी उपस्थिति भारत और विदेशों के शिक्षण संस्थानों में, मनोरंजन, आम बोलचाल की भाषा तथा मनोरंजन के रूप पायी जा सकती हैं। विश्व के करीब 150 शिक्षण संस्थाओं में हिन्दी का पठन-पाठन हो रहा है।

दुनिया की आबादी का एक बड़ा हिस्सा इस भाषा का प्रयोग करता है। इसका साहित्य विपुल है और यह अपनी विविध भूमिकाओं के लिए विश्वविख्यात है। इसके बारे में कुछ अधिक और व्यापक स्तर पर जानने की आकांक्षा होना लाज़िमी है। मेरे पी.एच.डी. शोध प्रबंध का विषय है - **''अन्तर्राष्ट्रीय स्तर पर हिन्दी की स्थितियाँ और समस्याएँ (मॉरिशस के विशेष संदर्भ में)''**। 'हिन्दी की अन्तर्राष्ट्रीयता' पर बहुत कम शोध कार्य हुआ है। हिन्दी भाषा आज के युग में अपना अन्तर्राष्ट्रीय महत्व स्थापित करने में लगी है। भारत अब दुनिया के लिए एक विराट बाजार बन चुका है। भारत का अन्तर्राष्ट्रीय संबंध, कूटनीति, आर्थिक व्यवस्था, शिक्षा, विज्ञान एवं तकनीक के क्षेत्रों में विकास जैसे कई कारणों पर हिन्दी की अन्तर्राष्ट्रीय स्थिति निर्भर करती है। अन्तर्राष्ट्रीय संबंधों को गरिमा, गरमी एवं स्थायित्व प्रदान करने में सांस्कृतिक आदान प्रदान की आवश्यकता होती है। सांस्कृतिक संबंधों को मज़बूती प्रदान करने में भाषा की अहम भूमिका होती है। भारतीय भूभाग की राजभाषा, संपर्क भाषा हिन्दी का इसमें अग्रणी योगदान रहा है।

हिन्दी, विदेशों में बसे प्रवासी भारतीयों की अस्मिता एवं अस्तित्व को रूपायित करती है। यह उनकी पहचान है। मेरा एम.फिल शोध कार्य मॉरिशसीय कथा साहित्य से संबंधित होने के कारण मॉरिशसीय भाषा और साहित्य संबंधी यथेष्ट सूचना और सामग्री की उपलब्धि के कारण 'मॉरिशस का विशेष संदर्भ में' लेने पर मुझे सुविधा हुई। इस तरह जिज्ञासा, भाषा प्रेम, कुछ नया और उपयोगी करने की ललक, उच्चतर उपाधि की आकांक्षा और गुरुजनों के सुझाव एवं आशीर्वाद की फलश्रुति के रूप में यह शोध-प्रबंध लिखा गया। समूचे शोध प्रबंध को पाँच अध्यायों में विभाजित किया गया है।

प्रथम अध्याय में हिन्दी भाषा के खड़ीबोली के रूप में विकास आरंभ के साथ भारत में इसकी स्थिति का विश्लेषण किया गया है। तीन उपविभागों के अंतर्गत हिन्दी का ऐतिहासिक परिप्रेक्ष्य, इसकी विविध भूमिकाएँ और इसके स्वातंत्र्योत्तर परिप्रेक्ष्य पर विचार किया गया है। विस्तृत भूगोल की अधिकारिणी होने के कारण अब यह सिर्फ़ भारत तक सीमित नहीं है। अब यह दुनिया के कई देशों में व्यवहृत होती है।

द्वितीय अध्याय में विदेशों में हिन्दी के स्वरूप के अंतर्गत भिन्न-भिन्न देशों में हो रहे हिन्दी भाषा और साहित्य के द्रुत विकास को दर्शाया गया है। अध्ययन की सुविधा हेतु विदेशों में हिन्दी का विवेचन, और गिरमिटिया देशों (मॉरिशस, सूरीनाम, फीजी, ट्रिनिडाड, गयाना और दक्षिण अफ़्रीका) के साथ-साथ विश्व के अन्य देशों में हिन्दी के स्वरूप पर प्रकाश डाला गया है। इसमें विश्व के सभी महादेशों में हिन्दी के अद्यतन विकास की स्थिति को प्रस्तुत करने का प्रयास किया गया है। इस पाठ का भाषिक, साहित्यिक एवं सूचनात्मक महत्व है।

तृतीय अध्याय, मॉरिशस में हिन्दी भाषा और साहित्य के क्रमिक विकास से संबद्ध है। विभिन्न स्त्रोतों से मॉरिशस में हिन्दी भाषा-साहित्य से संबंधित जानकारी को संयोजित करने का प्रयास किया है। यह कोशिश की गई है कि मॉरिशस में हिन्दी भाषा और साहित्य का प्रारंभ, विकास और संभावनाओं का सही मूल्यांकन हो

सके। कई हजार भारतीयों को शर्तबन्द बंधुआँ मजदूर के रूप में मॉरिशस ले जाया गया। वहाँ उनकी विवशता, शोषण, संघर्ष और आजादी से संबंधित ऐतिहासिक पृष्ठभूमि का खुलासा करते हुए हिन्दी की वर्त्तमान परिस्थिति एवं संभाव्य स्थिति को आँकने का प्रयास किया गया है। इसमें हिन्दी साहित्य की प्रायः सभी विधाओं में हो रहे साहित्य सृजन पर दृष्टिपात किया गया है।

चौथे अध्याय में विश्व हिन्दी सम्मेलनों की अन्तर्राष्ट्रीयता, उनकी आवश्यकता, उनका इतिहास, उपलब्धियाँ, सीमाएँ एवं अपेक्षाएँ और संभावनाओं पर विचार किया गया है। अब तक कुल मिला कर सात विश्व हिन्दी सम्मेलन हो चुके हैं। इनमें से तीन भारत में, एक मॉरिशस में, एक ट्रिनिडाड में, एक इंग्लैण्ड में और एक सूरीनाम में उत्साहपूर्वक आयोजित किया गया। इन विश्व हिन्दी सम्मेलनों का लेखा इसमें प्रस्तुत किया गया है।

पाँचवा अध्याय अंतिम अध्याय है। इस अध्याय में विश्व पटल पर हिन्दी की स्थिति और उससे जुड़ी समस्याएँ और संभावनाओं का विश्लेषण अन्तर्राष्ट्रीय परिप्रेक्ष्य में किया गया है। इस तरह अन्तर्राष्ट्रीय स्तर पर हिन्दी की स्थिति को नजदीक से देखने की कोशिश की गई है। वहाँ हो रहे प्रचार-प्रसार एवं शिक्षा जगत में खुलते नए आयामों को इस शोध-प्रबंध के प्रतिपाद्य के रूप में सुव्यवस्थित आकार देने का प्रयास किया गया है।

अंततः उपसंहार के रूप में समूचे शोध का अवलोकन करके शोध कार्य संबंधित मूल अभिप्रेत को रेखांकित किया गया है।

इस शोध प्रबंध से पहले डॉ.कैलाश कुमारी सहाय ने 'प्रवासी भारतीयों की हिन्दी सेवा' पर शोध कार्य किया है। मॉरिशस में हिन्दी पर कई ग्रन्थ लिखे जा चुके हैं। इनके बावजूद नवीन सामग्री की उपलब्धि का प्रयोग और मौलिक प्रयास के साथ-साथ वैज्ञानिक दृष्टिकोण इस प्रबंध का लक्ष्य है। शोध प्रबंध लेखन हेतु कई लेखकों, कवियों की पुस्तकों और रचनाओं से सहायता मिली है। इन सभी का गवेषणात्मक और सूचनात्मक महत्व है। आशा है कि भविष्य में यह शोध-प्रबंध,

शोधार्थियों एवं विद्यार्थियों की ज्ञान पिपासा की तुष्टि करेगा और विश्व में हिन्दी की भौगोलिक स्थिति को समझने में उपादेय साबित होगा।

सर्वप्रथम मैं अपने निर्देशक श्रद्धेय प्रो.सुवास कुमार का पूर्ण ह्रदय से कृतज्ञता ज्ञापन करता हूँ, जिनके विद्वतापूर्ण निर्देशन, आत्मीय परामर्श अमूल्य सहयोग और अपार धैर्य के कारण.आज मैं शोध-प्रबंध प्रस्तुत कर रहा हूँ।

मैं विभागाध्यक्षा श्रीमती नूरजहाँ बेगम के प्रति भी आभार व्यक्त करता हूँ जिनसे मुझे अमूल्य सुझाव और शोध संबंधी परेशानियाँ सुलझाने में सहायता प्राप्त हुई।

मैं हिन्दी विभाग के आदरणीय अध्यापकों, अध्यापिकाओं प्रो.शशि मुदीराज, डॉ.रवि रंजन, डॉ.वी.कृष्ण, डॉ.चतुर्वेदी, डॉ.सर्राजु, डॉ.श्याम राव का आभारी हूँ जिनके स्नेह, सद्भाव और सत्परामर्श से मैं प्रत्यक्ष और परोक्ष रूप से लाभान्वित हुआ।

विभागीय कर्मचारी श्री बाशा, श्रीमती सुजाता और श्री गोपाल, जिन्होंने वांछित सहयोग दिया, इस अवसर पर धन्यवाद के पात्र हैं।

प्रो.चन्द्रशेखर भट्ट (डायरेक्टर, सेन्टर फॉर डायस्पोरा), डॉ.प्रशांत पाणीग्राही (भौतिक विज्ञान), प्रो.पंचानन महन्ती (भाषा विज्ञान), प्रो.सच्चिदानंद महन्ती (अंग्रेजी विभाग) और प्रो.सारंगी (राजनीति विज्ञान) का भी मैं आभार ज्ञापन करना चाहूँगा जिनके समय-समय पर प्रोत्साहन के कारण मुझे संबल प्राप्त हुआ।

मर्मज्ञ विद्वान डॉ.मुनीश्वरलाल चिन्तामणि (मॉरिशस) भी मेरी कृतज्ञता के पात्र हैं जिनकी भेजी हुई सामग्री के कारण शोध कार्य में सहायता मिली।

गगनांचल पत्रिका के संपादक श्री अजय गुप्त का मैं विशेष रूप से आभारी हूँ, जिनसे शोध संबंधी सहायक सामग्री प्राप्त हुई।

इंदिरा गांधी मेमोरियल लाइब्रेरी, हैदराबाद विश्वविद्यलय और जवाहरलाल नेहरू विश्वविद्यालय लाइब्रेरी और उसके कर्मचारी गण निश्चित रूप से धन्यवाद के

पात्र हैं जिनकी मदद से शोध सामग्री खोजने में सुविधा हुई।

पंचानन दलाई, अजय साहू और भारत भूषण विशेष धन्यवाद के पात्र हैं जिनकी सहायता से मुझे शोध सामग्री संबंधी जानकारी एवं अन्य सहायता मिली।

यूनिवर्सिटी प्रशासन विभाग के कर्मचारी और अफ़सर श्री वेंकटेश्वर्लु (परीक्षा नियंत्रक), श्री अर्जुन, श्री वेंकट सुब्बय्या, श्री सत्यदास और श्री अविनाश विशेष धन्यवाद के अधिकारी हैं जिन्होंने समय पर मेरी मदद की।

मैं अपने सारे मित्रों के प्रति कृतज्ञता अभिव्यक्त करता हूँ, जिनके सौजन्य, अपरिमित सहयोग, असीम प्यार, अमूल्य परामर्श और अपनत्व के कारण मेरा निवास एवं शिक्षा काल प्रसन्नतापूर्ण और सार्थक रहा। उनमें कुछ हैं - प्रमोद सिंह, कल्याण, अमनदीप, नरेन्द्र चौधरी, सुरजीत गुहा, संजय, निरंजन, प्रुफुल्ल, सौभाग्या उमा, बामा, मानस, प्रणय, शिवा, नितम, टीटो, सुब्रत, सुजीत महापात्रा, सुजीत के.एस.फेन्टा, रतिकांत, बीसू, खरोध, बीभू प्रमोद महंती, जयन्त, दामू, सुमन, विभूति एलेन, अमरेश, रुद्रा, विधान, राना, विनायक, महुवा, जेस्सी, मैगी, किट्टी, रोशनी, प्रिया, श्याम भाई, राजेन्दर, हेगडे, थामस, नरसिंह, राम निवास, दिनेश, अनुज, आंजनेयुलु, सत्या, सलिल, सेन्थिल, विजय, कामेश, वेणु, प्रताप, सरोज, राजु, सुधांशु, विनीत, विष्णु, हरि, देवाशिष भाई और सत्यजीत।

श्री सी.रामय्या, श्री रामदास और श्री रामलिंग स्वामी ने मेरा उत्साहवर्द्धन किया और प्रेरणा प्रदान की तथा मुझे अपने औदार्य का भाजन बनाया। इसके लिए मैं उनका आभारी हूँ।

श्रीमती सौम्या, श्री डी.एस.राव और श्री आर.के.बी.शर्मा, जिन्होंने समय पर आवश्यकतानुरूप मेरी सहायता की व उपयोगी परामर्श दिया, जिससे मेरा शोध कार्य बिना किसी रुकावट के पूर्ण हो सका । सभी धन्यवाद के हकदार हैं।

गुरुकुल के मेरे शुभ चिंतक मित्रगण और सुहृदयी साथियों के स्नेह एवं आत्मीयता का मैं हृदय से शुक्रगुजार हूँ।

माँ-बाप जिनके वजूद का मैं हिस्सा हूँ, उन्हें धन्यवाद दिया बिना मेरे यहाँ होने का कोई मायने ही नहीं। मेरे भाई-बहन, मेरे जीवन के हिस्से हैं। उनके प्यार-प्रोत्साहन और आशीर्वाद के लिए मैं सदा आभारी रहूँगा। मयंक और रेणु जिनको मैं अपनी विवशता और व्यस्तता के कारण, उनका समय उन्हें नहीं दे पाया, धन्यवाद देकर मैं उनकी भावनाओं को चोट नहीं पहुँचाना चाहता।

- प्रेमचन्द्र

विषय सूची

पृष्ठ.सं.

भूमिका I-VI

प्रथम अध्याय

हिन्दी का ऐतिहासिक परिप्रेक्ष्य 1.41

1.1 हिन्दी का विकास 1-13

1.1.1 राजदरबारों और राज-काज में हिन्दी

1.2 हिन्दी भाषा : अपनी विविध भूमिकाओं में 13-34

1.2.1 हिन्दी : मातृभाषा के रूप में

1.2.2 हिन्दी : राष्ट्रभाषा के रूप में

1.2.3 हिन्दी : राजभाषा के रूप में

1.2.4 हिन्दी : संपर्क भाषा के रूप में

1.2.4.1 भारतीय रेलवे और संपर्क भाषा हिन्दी

1.2.4.2 सुरक्षा संस्थाएँ एवं संपर्क भाषा हिन्दी

1.2.4.3 विभिन्न कार्यालयों में संपर्क भाषा हिन्दी

1.2.4.4 मनोरंजन और खेल जगत में हिन्दी

1.2.4.5 अंतर्जातीय एवं अन्तर्प्रांतीय विवाह संबंध और हिन्दी

1.2.4.6 धार्मिक स्थानों या संस्थाओं में हिन्दी का संपर्क भाषा स्वरूप

1.2.4.7 राजनीतिज्ञों की सभाओं में जन संबोधन का सम्पर्क माध्यम : हिन्दी

1.2.5 विश्वभाषा हिन्दी

1.3 हिन्दी भाषा : स्वातन्त्र्योत्तर संदर्भ में 34-41

द्वितीय अध्याय

विदेशों में हिन्दी का स्वरूप 42-120

2.1अंग्रेजी शासन में गिरमिटिया मजदूरों की भर्ती 47-79

(मॉरिशस, ट्रिनिडाड, गयाना, फीजी, दक्षिण अफ्रीका और सूरीनाम के सन्दर्भ में)

2.1.1 मॉरिशस में गिरमिटिया मजदूरों की भर्ती

2.1.2 गयाना में गिरमिटिया और हिन्दी

2.1.3 ट्रिनिडाड में गिरमिटिया और हिन्दी

2.1.4 दक्षिण अफ्रीका में गिरमिटिया और हिन्दी

2.1.5 सूरीनाम में गिरमिटिया और हिन्दी

2.1.6 फीजी में गिरमिटिया और हिन्दी

2.1.6.1 फीजी में भारतीय

2.1.6.2 फीजी में हिन्दी

2.2 विश्व के अन्य देशों में हिन्दी का स्वरूप 79-120

2.2.1एशिया में हिन्दी

2.2.1.1नेपाल में हिन्दी

2.2.1.2 बर्मा में हिन्दी

2.2.1.3 चीन में हिन्दी

2.2.1.4 श्रीलंका में हिन्दी

2.2.1.5 पाकिस्तान में हिन्दी

2.2.1.6 जापान में हिन्दी

2.2.1.7 कोरिया में हिन्दी

2.2.1.8 खाड़ी के देशों में हिन्दी

2.2.1.9 एशिया के अन्य देशों में हिन्दी

2.2.2 उत्तर अमेरिका में हिन्दी

2.2.2.1 संयुक्त राज्य अमेरिका में हिन्दी

2.2.2.2 कैनेडा में हिन्दी

2.2.3 दक्षिण अमरीकी देशों में हिन्दी

2.2.4 अफ्रीका में हिंदी

2.2.5 आस्ट्रेलिया महाद्वीप में हिन्दी

2.2.6 यूरोप में हिन्दी

2.2.6.1 इंग्लैण्ड में हिन्दी

2.2.6.2 पोलैण्ड में हिन्दी

2.2.6.3 रूस में हिन्दी

2.2.6.4 फ्रॉंस में हिन्दी

2.2.6.5 बेल्जियम में हिन्दी

2.2.6.6 जर्मनी में हिन्दी

2.2.6.7 हालैण्ड में हिन्दी

2.2.6.8 यूरोप के अन्य देशों में हिन्दी

तृतीय अध्याय

मॉरिशस में हिन्दी : ऐतिहासिक विकास 121-175

3.1 मॉरिशस : एक देश 121-139

3.1.1मॉरिशस और हिन्दी भाषा

3.1.1.1 स्वतंत्रता पूर्व हिन्दी की स्थिति

3.1.1.2 मॉरिशस में हिन्दी भाषा : प्रथम चरण

3.1.1.3 मॉरिशस में हिन्दी भाषा : द्वितीय चरण

3.1.2 स्वतन्त्र मॉरिशस में हिन्दी भाषा का विकास

3.2 मॉरिशस में हिन्दी साहित्य : एक अवलोकन 139-175

3.2.1 मॉरिशस में हिन्दी साहित्य : पृष्ठभूमि और परिवेश

3.2.2 मॉरीशस में हिन्दी साहित्य : उद्‌भव और विकास

3.2.2.1 मॉरीशस का हिन्दी काव्य साहित्य

3.2.2.2 मॉरीशस का हिन्दी गद्य साहित्य

3.2.2.2.1 मॉरीशस का हिन्दी कहानी साहित्य

3.2.2.2.2 मॉरीशस का हिन्दी उपन्यास साहित्य

3.2.2.3 मॉरीशसीय हिन्दी साहित्य की अन्य विधाएँ

चतुर्थ अध्याय
विश्व हिन्दी सम्मेलन और हिन्दी की अन्तर्राष्ट्रीयता 176-205
4.1 विश्व हिन्दी सम्मेलनों की आवश्यकता 177-179
4.2 विश्व हिन्दी सम्मेलन का इतिहास 179-192
4.2.1 प्रथम विश्व हिन्दी सम्मेलन
4.2.2 द्वितीय विश्व हिन्दी सम्मेलन
4.2.3 तृतीय विश्व हिन्दी सम्मेलन
4.2.4 चतुर्थ विश्व हिन्दी सम्मेलन
4.2.5 पंचम विश्व हिन्दी सम्मेलन
4.2.6 छठाँ विश्व हिन्दी सम्मेलन
4.2.7 सातवाँ विश्व हिन्दी समेलन
4.3 विश्व हिन्दी सम्मेलनों की उपलब्धियाँ 193-197
4.4 विश्व हिन्दी सम्मेलन की सीमाएँ 197-201
4.5 विश्व हिन्दी सम्मेलन : अपेक्षाएँ और संभावनाएँ 201-205
पंचम आध्याय
विश्व पटल पर हिन्दी की स्थिति 206-217
5.1 विश्व पटल पर हिन्दी की स्थिति : अपेक्षाएँ और संभावनाएँ 208-217
5.1.1 हिन्दी और अन्तर्राष्ट्रीय संगोष्ठी एवं सम्मेलन
5.1.2 विश्वपटल पर हिन्दी की स्थिति और प्रचार संस्थाएँ
5.1.3 विश्वपटल पर हिन्दी की समस्याएँ
उपसंहार *218-229*
परिशिष्ट - 1 230-238
परिशिष्ट - 2 238-252
संदर्भ ग्रन्थ सूची 253-259

प्रथम अध्याय

हिन्दी का ऐतिहासिक परिप्रेक्ष्य

1.1 हिन्दी का विकास :

विश्व भर में करीब हजारों भाषाएँ बोली जाती हैं। भिन्न-भिन्न देशों में बोली जाने वाली भाषाओं में कभी-कभी एक ही भाषा कतिपय अपरिहार्य कारणों से कमोबेश परिवर्तन के साथ दुनिया के अन्य हिस्सों में भी प्रसार पा जाती है। भाषाओं का विस्तार कई कारणों से होता है। हिन्दी ऐसी भाषा है जिसका भारत के अधिकांश राज्यों में सरकारी अथवा गैर सरकारी तौर पर प्रयोग किया जाता है। विदेशों में भी हिन्दी कई देशों में कहीं अधिक तो कहीं आंशिक तौर पर अपना अस्तित्व बनाए हुए है। भाषा का प्रश्न समाज और उसकी संस्कृति की पहचान के साथ जुड़ा हुआ है। भाषा परिवर्तनशील होती है, मगर साथ ही सामाजिक परिवर्त्तन की प्रक्रिया में अपना योगदान भी करती है और स्वयं परिवर्त्तित होती रहती है।

हिन्दी की पृष्ठभूमि पर दृष्टिपात करने से पता चलता है कि हिन्दी के आज के स्वरूप के पीछे एक लंबी ऐतिहासिक विकास-परम्परा रही है। हिन्दी भाषा का वर्त्तमान स्वरूप प्रायः पिछले हजार-बारह सौ वर्षों के दौरान होने वाले कई बाह्य और आन्तरिक परिवर्तनों का परिणाम है। हिन्दी भारोपीय भाषा की शतम् शाखा की आधुनिक भाषाओं की श्रेणी में आती है। आधुनिक भारतीय आर्य भाषाओं के स्रोत का सम्बन्ध अपभ्रंश की बोलियों से है जिसका समय प्रायः 500ई. से 1000ई. तक है। इसके आरंभिक समय के बारे में डॉ.भोलानाथ तिवारी लिखते हैं - "अपभ्रंश मोटे रूप में एक हजार ई. के लगभग समाप्त हुआ और आधुनिक भाषाओं का आरंभ हुआ।"[1] आगे वे पुनः लिखते हैं "500ई. से प्रायः एक हजार ई. तक अपभ्रंश के अंश अधिक रहे होंगे और आधुनिक भाषाओं के अंश कम, किन्तु 1000ई. से

1100 या कुछ बाद तक अपभ्रंश के अंश धीरे-धीरे कम होते गए और आधुनिक भाषाओं के अंश बढ़ते गए।''[2] पश्चिमी हिन्दी, पूर्वी हिन्दी और बिहारी का विकास, शौरसेनी, अर्ध मागधी और मागधी अपभ्रंश से हुआ है। आज जिसे हम मानक हिन्दी की संज्ञा देते हैं, वह इन्हीं अपभ्रंशों द्वारा विकसित ब्रज, कन्नौजी, अवधी, बुन्देली, बघेली, छत्तीसगढ़ी, मगही और भोजपुरी जैसी कई बोलियों के भाषा-समूह का प्रतिनिधित्व करती है। स्पष्ट है कि भाषा को परिवर्तित होकर नया रूप लेने में काफ़ी समय लगता है। अपभ्रंशों के परवर्ती रूप में ही प्रारम्भिक हिन्दी का बीज है। हिन्दी की प्रारम्भिक निर्माण प्रक्रिया में अपभ्रंश के प्रचुर शब्द-भण्डार देखने को मिलते हैं।

अपभ्रंश और हिन्दी के सम्बन्धों के निर्धारण में एक विवाद यह उठता रहा है कि अपभ्रंश को हिन्दी भाषा और साहित्य का अंग माना जाय या मूल स्रोत। डॉ.नगेन्द्र हिन्दी भाषा के सम्बन्ध में कहते हैं कि - ''वह तत्वतः 17-18 बोलियों का एक सामूहिक नाम है।''[3] हिन्दी की इन बोलियों के समूह का एकान्वित विकास नहीं हुआ। विशेषकर साहित्यिक विकास तो हरगिज नहीं। इन बोलियों का क्षेत्र भारत वर्ष का मध्य देश था जो एक विशाल भू भाग है। इस विस्तृत क्षेत्र में कई छोटी-छोटी बोलियों ने अपना-अपना राग अलापा। 'हिन्दी के विकास में अपभ्रंश का योगदान' नामक पुस्तक में डॉ.नामवर सिंह लिखते है - ''इन बोलियों में सबका विकास एक-सा और एक साथ नहीं हुआ। ऐतिहासिक दृष्टि से राजस्थानी और मैथिली बोलियों का उदय पहले हो गया, इनके बाद अवधी का हुआ। ब्रजभाषा और खड़ीबोली का उदय लगभग एक साथ ही हुआ। लेकिन साहित्यिक दृष्टि से ब्रजभाषा, खड़ीबोली से पहले लोकप्रिय हो गई।''[4] इसके पीछे वे खड़ीबोली का दक्षिण प्रवास, उसका विदेशी भाषा भाषियों के हाथ में पड़ना, विदेशी धर्म प्रचार का साधन बनना और सामान्य जन समुदाय से दूर जाकर राज दरबार में बँध जाना मानते हैं, जबकि ब्रजभाषा का विकास इसलिए हुआ वह ठेठ जन्मभूमि में पली।

आगे चलकर उन्होंने अवधी, ब्रज और खड़ीबोली को ही मुख्य साहित्यिक बोलियाँ मानकर उन्हें एक जातीय भाषा के रूप में विकसित होते हुए दिखाया है। उनकी यह बात वज़नदार मालूम होती है कि - ''राजस्थानी भेदों के बावजूद अवधी, ब्रज और खड़ीबोली एक हिन्दी के विकास की विभिन्न अवस्थाएँ हैं, लेकिन यह न भूलना चाहिए कि इन तीनों बोलियों का एक जातीय भाषा के रूप में संगठित होने का कार्य अभी पूरा नहीं हुआ है।''[5]

भाषा विज्ञानवेत्ता डॉ.भोलानाथ तिवारी मानते हैं कि ''हिन्दी शब्द का सम्बन्ध प्रायः संस्कृत शब्द सिन्धु से माना जाता है।''[6] आगे वे कहते हैं कि ''यह सिन्धु शब्द ईरानी में जाकर हिन्दू और फिर हिन्द हो गया और इसका अर्थ था सिन्ध प्रदेश।''[7] हिन्दी के श्रेष्ठ साहित्यकार आचार्य महावीर प्रसाद द्विवेदी हिन्दी शब्द की उत्पत्ति पर अपना विचार इस तरह से प्रकट करते हैं, ''हिन्दी के दो अर्थ हैं। एक हिन्दुओं की भाषा, दूसरा हिन्द (हिन्दुस्तान) की भाषा। ये दोनों अर्थ बहुत व्यापक हैं। दोनों ही यह सूचित करते हैं कि इस देश की प्रधान भाषा हिन्दी है। हिन्दी शब्द फ़ारसी भाषा का है। जान पड़ता है हिन्दी से ही अंग्रेजी शब्द 'इण्डिया' की उत्पत्ति हुई है।''[8] संस्कृत की भाँति प्रारम्भ से ही हिन्दी की लिपि देवनागरी रही है। शायद इसीलिए कभी-कभी हिन्दी का उल्लेख नागरी के रूप में मिलता है। यह गलत है। नागरी एक भाषा नहीं, लिपि है जिसे देवनागरी लिपि के नाम से भी जानते हैं और इसमें हिन्दी के अलावा मराठी-सहित अन्य कई भाषाएँ भी लिखी जाती हैं।

इस तरह बीज रूप में प्राकृत और अपभ्रंश से होते हुए अरबी, फ़ारसी, तुर्की, पोर्चुगीज तथा अंग्रेजी के शब्दों को आत्मसात् करती हुई और आधुनिक अंग्रेजी भाषा से भी किंचित् प्रभावित होती हुई अपना आज का स्वरूप प्राप्त कर सकी है। अन्य भाषाओं के साथ सम्पर्क में आने पर किसी भी भाषा में प्रभाव- स्वरूप परिवर्तन हो जाना स्वाभाविक है। हिन्दी भाषा और इसकी बोलियों में आज भी अनेक देशी-

विदेशी भाषाओं के शब्द प्रचुर मात्रा में मिलते हैं। जीवन्त भाषाएँ अपने भीतर दूसरी भाषाओं के शब्द-भण्डार का पचाने की क्षमता रखती हैं। हिन्दी ऐसी ही जीवन्त भाषा है - जिन्दा जुबान है। वह विश्व-भाषाओं के शब्द-भण्डार को आत्मसात् करती हुई अपने विस्तार की अपार क्षमता रखती है। हिन्दी के एक समर्थ भाषा के रूप में विकसित होने में बुद्धिजीवी वर्ग, मनीषी, धर्म प्रचारक, सुधारवादी संत पुरुष, जन कवि और हिन्दी तथा अहिन्दी प्रदेशों के शासकों का योगदान भी कम महत्वपूर्ण नहीं रहा है। आन्ध्र, कर्नाटक तथा केरल के शासकों के यहाँ भी हिन्दी को प्रश्रय मिलता रहा। स्वयं कई शासकों ने विभिन्न राग रागिनियों और कविताओं में संगीत की रचना करके इसको संबल प्रदान किया।

दक्षिण (या दक्खिनी, दकनी) हिन्दी, हिन्दी भाषा का ही मगर थोड़ा अलग-सा रूप है। इसके प्रचार-प्रसार में दक्कन (दक्षिण) के मुसलमान शासकों ने सराहनीय सहयोग प्रदान किया। आज भी फलस्वरूप दक्षिणी हिन्दी का जीवन्त रूप आज हमारे सामने अपनी पूरी आभा के साथ उपस्थित है। कुलीकुतुबशाह का काल इस दृष्टि से महत्वपूर्ण है। प्रमुख रूप से आन्ध्र के हैदराबाद और तेलंगाना क्षेत्र, कर्नाटक के गुलबर्गा, महाराष्ट्र के औरंगाबाद से मुंबई तक के क्षेत्रों में यह आज भी कमोबेश बोली जाती है।

हिन्दी की उत्पत्ति एवं विकास के सन्दर्भ में प्राचीन एवं मध्य कालीन शिलालेखों के अध्ययन को भी उपयोगी माना जा सकता है। कई अहिन्दी भाषी कवियों और शासकों को भी हिन्दी प्रेमी के रूप में देखा जा सकता है। शिवाजी महाराष्ट्र के थे। परन्तु उनके तथा अन्य मराठा शासकों के राजकाल की भाषा हिन्दी थी। शिवाजी के दरबारी कवि भूषण ने हिन्दी में उच्च कोटि की रचनाएँ की हैं। महावीर प्रसाद द्विवेदी ने अपने एक लेख में कवियों द्वारा लिखे सर्वमान्य ग्रन्थ न होने के बावजूद भी वेणा, पुष्प और जगनिक जैसे कवियों का उल्लेख किया है, जिन्होंने हिन्दी में काव्य रचना की। महाराष्ट्र के संत कवि ज्ञान देव और नामदेव के भी नाम इस सन्दर्भ में लिए जा सकते हैं।

प्राचीन हिन्दी साहित्य अपनी विविधता और विदग्धता के साथ अपनी शास्त्रीय गरिमा भी लिए हुए है। कविताओं ने जीवन, राष्ट्र, व्यक्ति, समाज, वस्तु,. देश-काल की विशेषता, आत्मबोध, धर्म चिन्तन, भक्ति, नीति, प्रेम, श्रृंगार का दर्शन, राज प्रशस्ति, राजनीति आदि विशेष प्रवृत्तियाँ देखने को मिलती हैं। श्री द्वारिका प्रसाद सक्सेना इसे ''पर्याप्त समृद्ध, गुरुत्वपूर्ण गांभीर्य से ओतप्रोत, महान उद्देश्य और महती काव्य प्रतिभा से परिपूर्ण''[9] मानते हैं।

हिन्दी साहित्य को प्राचीन तथा आधुनिक दो भागों में बाँटने पर पूर्वार्द्ध काल के प्रमुख कवियों के अन्तर्गत चन्दबरदायी, कबीर, विद्यापति, जायसी, सूर, मीरा, तुलसी, केशव, बिहारी, भूषण, देव, घनानन्द आदि का नाम मुख्य रूप से उभरता है जिन्होंने अपनी प्रतिभा के बल पर साहित्य और समाज की महान सेवा की। नामदेव, कुतुबन, मतिराम, भिखारी, श्रीपति, खुसरो और रसखान आदि नाम भी महत्वपूर्ण हैं। इन सबने व्यापक जीवन और जगत से संबंधित बातों को विषय वस्तु बनाकर काव्य-रचना की। कबीर, सूर और तुलसी ने साहित्य और भाषा के बिखरते रूप को सदा सर्वदा के लिए दृढ़ कर दिया। महावीर प्रसाद द्विवेदी ने यही कार्य उत्तरार्द्ध में किया। तुलसी ने रामचरित मानस के रूप में हिन्दी भाषा और साहित्य को जो उपहार दिया है, वह अद्वितीय है। लल्लन प्रसाद व्यास मानस और तुलसी का गुणगान करते हुए कहते हैं कि ''रामायण (रामचरित मानस) ने ही भाषा और संस्कृति बचाई। अपनी शाश्वत संस्कृति से ऐसे अभिन्न, अभेद रूप से जुड़ जाने की नियति ने ही हिन्दी को कालान्तर में सम्पर्क भाषा, राष्ट्रभाषा, राजभाषा और अब विश्व भाषा की अद्वितीय स्थिति प्रदान की है।''[10] यह बात निश्चित रूप से मजदूर के रूप में अन्य देशों को गए प्रवासी भारतीयों की भाषा और संस्कृति के सम्बन्ध में ज्यादा सटीक बैठती है। परन्तु अशक्य रूप से बाहर गए वे सारे लोग या फिर वहाँ उनकी सन्ततियाँ भी इसी विश्व समुदाय का हिस्सा है। उत्तर भारत की आम बोलचाल की भाषा में मानस के उद्धरण आम बात हैं। इसमें सबसे बड़ी बात यह है कि यह (मानस) आम नागरिक की भाषा और भावना की समीपता के साथ जुड़ा

हुआ है। यह (मानस) करोड़ों लोगों का आदर्श और जीवन-सम्बल है। 'रामचरित मानस' शायद भारत में भाषा के अलावा साहित्यिक और धार्मिक दृष्टि से सबसे ज्यादा पढ़ी जाने वाली रचना है। हो सकता है दुनिया में भी यह अव्वल नम्बर की पढ़ी जाने वाली रचनाओं में से हो। इस तरह निश्चित रूप से मानस हिन्दी साहित्य के पूर्वार्द्ध काल का स्तम्भ ग्रन्थ है। यह तत्कालीन भाषा और संस्कृति का धरोहर है।

हिन्दी साहित्य का द्वितीय भाग जिसे हम उत्तरार्द्ध काल मान सकते हैं, वह भाषा और साहित्य की दृष्टि से कम उतार-चढ़ाव का काल नहीं था। पूर्वार्द्ध काल की प्रायः प्रत्येक कृति में अगर भाषा का वैविध्य देखने को मिलता है तो उत्तरार्द्ध में यही बात विषय के साथ है। भाषा का परिवर्त्तन, सान्निध्य अथवा संकरीकरण इसी समय शुरू हुआ। इसी काल में हिन्दी ने अपनी प्रान्तीय या देशीय परिधि बढ़ाकर वैश्विक स्वरूप लेना आरंभ किया। आधुनिक काल में हिन्दी की कई विधाओं का जन्म हुआ। हिन्दी शासन-प्रशासन का हिस्सा बनने की ओर बढ़ी। शिक्षा का माध्यम, विचारों और भावनाओं की अभिव्यक्ति का माध्यम, विज्ञान और तकनीकी का माध्यम तथा राजनीति आदि का माध्यम बनने से हिन्दी का व्यवहार एवं कार्यक्षेत्र विस्तृत बन गया। हिन्दी साहित्य में गद्य लेखन की शुरुआत एक महत्वपूर्ण बिन्दु है, जिसे उत्तरार्द्ध काल का आरंभिक बिन्दु माना जाता है। भारतेन्दु हरिश्चन्द्र, महावीर प्रसाद द्विवेदी, श्रीधर पाठक, हरिऔध, रामचन्द्र शुक्ल, मैथिली शरण गुप्त, जयशंकर प्रसाद, निराला, पंत, महादेवी, सुभद्रा कुमारी चौहान, हजारी प्रसाद द्विवेदी, माखनलाल चतुर्वेदी, मुक्तिबोध, प्रेमचंद, यशपाल, राहुल सांकृत्यायन, अज्ञेय, नन्ददुलारे वाजपेयी, गिरिराज किशोर आदि को प्रमुख रूप से माना जा सकता है। इन सब को उत्तरार्द्ध काल के स्वतन्त्रतापूर्व के साहित्यकारों की पंक्ति में रखा गया है। इनमें से कुछ ने स्वातंत्र्योत्तर काल में भी लेखन कार्य किया है। प्रायः सभी साहित्यकारों ने भाषा और भावों दोनों में ही वैविध्य पूर्ण नई दिशा खोजी है। प्रायः पचहत्तर वर्षों का यह साहित्यिक काल हिन्दी साहित्य की रीढ़ है।

स्वातन्त्र्योत्तर काल के हिन्दी साहित्यकारों ने विवधिता भरे विषयों और वादों को आगे बढ़ाया। परन्तु वे उतना जनप्रिय और महत्वपूर्ण नहीं हो सके, जितनी महान् विरासत इन्हें मिली थी। इस समय के कुछ विशेष लेखकों और साहित्यकारों में शिवमंगलसिंह सुमन, दिनकर, हरिवंशराय बच्चन, नरेश मेहता, धर्मवीर भारती, सर्वेश्वरदयाल सक्सेना, विष्णु प्रभाकर, श्रीकांत वर्मा, डॉ.नगेन्द्र, डॉ.रामविलास शर्मा, केदारनाथ अग्रवाल, डॉ.नामवर सिंह, जैनेन्द्र, नागार्जुन, फणीश्वरनाथ रेणु, उपेन्द्रनाथ अश्क, अमृतलाल नागर, डॉ.रामकुमार वर्मा, रघुवीर सहाय आदि आते हैं।

भाषा के प्रयोग के रूप में हिन्दी के अपने कई रूप थे। 1000 ईस्वी के आसपास अपभ्रंश से विकसित होने वाली प्रायः सभी नयी-नवेली बोलियों का प्रतिनिधित्व करने वाली कोई एक भाषा नहीं थी और संयोग की बात थी कि राजनीतिक या शासकीय तौर पर किसी एक राजा या बादशाह का पूरे देश (या उत्तर-मध्य देश) पर एकछत्र शासन भी नहीं था। 'चार कोस पर पानी बदले आठ कोस पर बानी' वाली कहावत में सच्चाई अवश्य है। हिन्दी की अनेक बोलियाँ हैं और उन बोलियों की अपनी-अपनी उपबोलियाँ भी है। भारतवर्ष की ही भाँति हिन्दी को भी अनेक बार बाह्य आक्रमणों का सामना करना पड़ा है। आरम्भ के पाँच सौ सालों के दौरान हिन्दी का स्वरूप गढ़ा जा रहा था अतः उसके स्तर और स्थिति में लगातार परिवर्तन होते रहे। समाज में तो इसका व्यवहार निरन्तर होता रहा। परन्तु शासन में इसके प्रयोग (राजकाज की भाषा के रूप में) में अक्सर उतार-चढ़ाव होता रहा। इस सबके पीछे उत्तर भारत के विशाल भूभाग में होने वाली राजनीतिक उथल-पुथल को प्रमुख रूप से ज़िम्मेदार माना जा सकता है। लेकिन इतना सब कुछ होते हुए भी हिन्दी निस्संदेह सर्वाधिक प्रयोग में आने वाली भाषा के रूप में बनी रही।

1.1.1 राजदरबारों और राज-काज में हिन्दी :

राज दरबारों में हिन्दी का प्रयोग 11वीं- 12वीं शताब्दी में शुरू हो चुका था। फ़ारसी और उर्दू के प्रयोग का युग इसके बहुत बाद में आता है। पृथ्वीराज के शासन के दौरान आरंभिक हिन्दी के प्रयोग के प्रमाण मिलते हैं। 'मुसलमानों के राज-काज में हिन्दी ' नामक लेख में राम बाबू शर्मा लिखते हैं कि ''शाहबुद्दीन (गौरी) ने अपने शासन का कामकाज देवनागरी लिपि और हिन्दी भाषा के माध्यम से करने के आदेश दिए।''[11] सोलहवीं शताब्दी में शेरशाह सूरी ने भी अपने राजकाज में हिन्दी को स्थान दिया था। मुगलों के शासन काल में देखें तो अकबर ने ब्रज भाषा की सम्पन्नता के कारण इसे अपने राजकाज की भाषा बनाया था। बिहारी जैसे महान कवि भी दरबारी थे। वे जयपुर के राजा जयसिंह के दरबार की शोभा बढ़ा चुके थे। अनगिनत कवियों ने राज्याश्रयों में रहकर हिन्दी भाषा और साहित्य की सेवा की। रामबाबू शर्मा के अनुसार मुगलों के शासन के दौरान ''प्रशासन और प्रशासकों तथा उस समय के शिष्ट, सभ्य और शिक्षित समाज में खड़ीबोली भी अपना स्थान बना चुकी थी।''[12] इब्राहिम आदिल शाह ने तो अपने राज्य में फ़ारसी को समाप्त कर हिन्दी को स्थान दिया। ''इब्राहिम आदिल ने फ़ारसी ज़बान को दफ़्तर से ख़ारिज करके हिन्दी उसकी जगह रायज की। इब्राहिम आदिल ने बरहमनों के सामने एख्तयार किया।''[13] इसके अलावा कई देशी रियासतों जैसे जोधपुर, बीकानेर, उदयपुर, कोरा, बूंदी, इंदौर और ग्वालियर आदि के अभिलेख कार्यालयों में हिन्दी भाषा में प्रचुर सामग्री मिलती है जिससे पता चलता है कि तब हिन्दी भाषा का सरकारी तौर पर प्रयोग होता था। मराठों के राजकाज में हिन्दी के प्रयुक्त होने के अनेक प्रमाण उपलब्ध हैं। अंग्रेजों के शासन काल में भी शासकीय व्यवस्था के अन्तर्गत गृह विभाग आदि में सर्वसाधारण की सूचनाओं की जानकारी के लिए सरकारी सूचनाओं और घोषणाओं को हिन्दी भाषा में अनूदित कराया जाता था जबकि अंग्रेजी साम्राज्य में देशी रियासतों के राजकाज सीधे हिन्दी में ही हुआ करते थे। स्वतन्त्रता के पहले भारतीय नेताओं ने सर्वसम्मति से इसका प्रयोग आम

सभाओं को संबोधित करने के लिए किया। यह सब इसलिए संभव हुआ क्योंकि हिन्दी आरंभ से ही आम लोगों की भाषा रही है। स्वतन्त्र भारत में तो संवैधानिक तौर पर कानून पास करके हिन्दी को राजभाषा के रूप में स्वीकार किया गया।

मुगलों का शासन काल, भारत; विशेषकर उत्तर भारत के लिए महत्वपूर्ण समय था। इस दौरान सामाजिक, राजनीतिक, सांस्कृतिक, धार्मिक, कला और साहित्यिक दृष्टि से महत्वपूर्ण कार्य हुए। यही समय था जब बाहर से आने वाली जातियाँ और भारत में रहने वाले आपसी संसर्ग में आए। इस संसर्ग का नतीजा यह हुआ कि सब कुछ आपस में घुल मिला गया और दोनों एक दूसरे से प्रभावित हुए । तब हिन्दी को भी प्रश्रय मिलता रहा और उसकी उन्नति होती रही। अकबर, जहाँगीर और शाहजहाँ के जमाने में हिन्दी भाषा की दशा सुधरी हुई थी। 16वीं शताब्दी के उत्तरार्द्ध से अठारहवीं शताब्दी के पूर्वार्द्ध के समय तक साहित्य के सृजन का कार्य मूल रूप से आदर्शवादी, उपदेशात्मक, भक्तिपरक और शास्त्रीय परम्परा के अनुकूल है। धार्मिकता विषय की प्रमुख धुरी रही है। संयोग से भारत के कुछ इतिहासकार शाहजहाँ के शासनकाल को कला की दृष्टि से मध्यकालीन इतिहास का स्वर्णकाल मानते हैं। हिन्दी साहित्य के इतिहासकारों ने 'मध्यकालीन हिन्दी साहित्य को हिन्दी साहित्य का स्वर्ण काल माना है। हिन्दी साहित्य के प्रमुख आलोचक विद्वान और इतिहासवेत्ता आचार्य रामचन्द्र शुक्ल ने भी हिन्दी भाषा और साहित्य की सर्वाधिक उन्नतिशील अवस्था इसी काल में देखी। फलतः भक्तिकाल को हिन्दी साहित्य के स्वर्णकाल की संज्ञा दे डाली।

हिन्दी भाषी क्षेत्रों के अलावा हिन्दी का दक्खिनी रूप आन्ध्र के बहमनी और कुतुबशाही शासन के दौरान भाषा और साहित्य दोनों स्तरों पर फलता-फूलता नजर आता है। आज भी दक्खिनी भाषा और साहित्य का अपना स्थान है। भाषा के स्तर पर यह हिन्दी का थोड़ा बदला हुआ रूप है। दक्षिण में हिन्दी बोलियों का आपसी

आदान-प्रदान सम्भव नहीं है फिर भी हिन्दी यहाँ की क्षेत्रीय बोलियों के संस्पर्श में आकर उनकी शब्दावली से लेन-देन करती रही है। दक्षिणी हिन्दी की व्यापक परिधि के अन्तर्गत गुजरात, महारष्ट्र (विशेषकर मुम्बई), कर्नाटक (बीजापुर, गुलबर्गा आदि), केरल (मोपाला और मालाबार क्षेत्र) तथा आन्ध्र का हैदराबाद प्रमुख हैं। आज भी दक्खिनी हिन्दी अपनी विशिष्टता के कारण जनता और साहित्य की भाषिक अभिव्यक्ति का माध्यम है। डॉ.वी.पी.कुंजमेत्तर सत्रहवीं शताब्दी से केरल के मुसलमानों में हिन्दी को प्रचलित मानते हैं। उन्होंने लिखा है - ''दक्खिनी समुदाय के जनों के सैयद, शेख़, मुगल और पठान चार प्रभेद हैं। इनकी मातृभाषा दक्खिनी है। इन दक्खिनी मुसलमानों की हिन्दी, मलयालम से बहुत प्रभावित है।''[14] उत्तर मालाबार में दक्खिनी को मदरसे में स्थान दिए जाने की बात भी वे लिखते हैं। आधुनिक हिन्दी के विकास की परम्परा को देखते हुए डॉ.कुंज मेत्तर ने माना है कि आधुनिक खड़ीबोली हिन्दी का सर्वाधिक विकास दक्षिण के हिन्दीतर क्षेत्रों से हुआ। वे लिखते हैं ''हिन्दी का जो रूप हमारे सामने है उसका पूर्ववर्ती रूप दक्षिण में विकसित हुआ। खड़ी बोली के दक्षिण में व्यवहृत पुराने स्वरूप को देखकर हम यह विश्वास करने को बाध्य हो जाते हैं कि भाषा की दृष्टि से आधुनिकता के तत्व आरम्भकालीन दक्खिनी में अभिव्यक्त हुए थे। इसलिए आधुनिक हिन्दी का स्रोत दक्खिनी में ढूँढ़ा जा सकता है। दक्खिनी हिन्दी को आधुनिक हिन्दी का पूर्ण रूप मानने में हमें संकोच नहीं करना चाहिए।''[15] आगे चलकर डॉ.कुंज मेत्तर पुनः लिखते हैं कि ''दक्खिनी हिन्दी खड़ीबोली का पूर्ववर्ती रूप है जिसे हिन्दी भाषी ही नहीं बल्कि उर्दू भाषी भी अपनी विरासत समझते हैं। दक्खिनी हिन्दी का विकास बारहवीं-तेरहवीं शती के उस हिन्दी से हुआ जो दिल्ली और सीमावर्ती प्रदेशों में व्यवहृत होती थी और जिसमें संस्कृत, अपभ्रंश, हरियाणवी, पंजाबी, राजस्थानी और सिंधी आदि भाषाओं के तत्व वर्त्तमान हैं।''[16] नामवर सिंह भी खड़ी बोली को ब्रज और अवधी का समकालीन मानते हैं और इसका दक्खिनी में आना भी स्वीकार करते हैं। इस तरह डॉ.नामवर सिंह खड़ीबोली को अवधी और ब्रज के साथ स्वीकार

करते हैं और मानते हैं कि यह खड़ी बोली दक्षिण पहुँचकर दक्खिनी हिन्दी के रूप में विकसित हुई जबकि डॉ.कुंजमेत्तर का मानना है कि दक्खिनी भले ही दिल्ली और सीमावर्ती प्रदेशों में निकली हों परन्तु खड़ी बोली का विकास इसके द्वारा ही हुआ। यह खड़ी बोली का पूर्ववर्ती रूप है। निश्चित तौर पर दक्खिनी हिन्दी उत्तर भारत की आरंभिक बोलियों के स्रोत से निकली है। आगे चलकर यह मुसलमान शासकों और जनता के आश्रय और सान्निध्य में विकसित होती रही। इस तरह यह शासन और जनता दोनों की भाषा थी।

आधुनिक युग में हिन्दी भाषा और साहित्य में संरचना और भाव के स्तर पर विराट परिवर्तन हुए। साहित्य में यह गद्य के शुरुआत का भी समय था। भारतेन्दु हरिश्चन्द्र गद्य साहित्य की आरंभिक कड़ियों में थे। इस तरह 19वीं शताब्दी भाषा और साहित्य की दृष्टि से उत्तरार्द्ध कालीन हिन्दी के विकास का आधुनिक समय माना जा सकता है। आज हिन्दी भाषा के मानक स्तर को खड़ी बोली का पर्याय माना जाता है। यह एक विचारणीय विषय है। 20वीं शताब्दी के प्रारंभ से ही आचार्य महावीर प्रसाद द्विवेदी ने हिन्दी के स्वरूप को रचनात्मक स्तर पर परिष्कृत करना शुरू किया। यहीं से ब्रज और अवधी जैसी बोली भाषा का महत्व घटने लगा। साहित्य के गद्य और पद्य दोनों भाषा रूपों में विविध विधाओं की रचनाओं का सृजन एक परिष्कृत हिन्दी भाषा में प्रारंभ हुआ। मैथिली शरण गुप्त, अयोध्या सिंह उपाध्याय 'हरिऔध', जयशंकर प्रसाद, सुमित्रानंदन पंत, महादेवी वर्मा, निराला, प्रेमचंद, माखनलाल चतुर्वेदी, आचार्य हजारी प्रसाद द्विवेदी, राहुल सांकृत्यायन और रामचन्द्र शुक्ल आदि के नाम लिये जा सकते हैं। इससे पहले लल्लूजी लाल और सदल मिश्र का नाम खड़ी बोली में रचना के आरंभ कर्त्ताओं के रूप में लिया जा सकता है।

मौखिक स्तर पर लोगों के बीच में हिन्दी-उर्दू और क्षेत्रीय बोलियों से मिश्रित हिन्दी भाषा का प्रयोग प्रायः सामाजिक कामों के लिए किया जाता था। स्वतन्त्रता

प्राप्ति के पूर्व तक जनता की भाषा के रूप में नेताओं (गाँधी आदि) द्वारा इसे हिन्दुस्तानी के नाम से भी अभिहित किया जाता था। हालाँकि तब भी इसे शुद्ध हिन्दी भाषा और मात्र हिन्दी के नाम से प्रतिष्ठित करने के प्रयत्न जारी थे। राजा शिवप्रसाद सितारे हिन्द, बालकृष्ण भट्ट, प्रताप नारायण मिश्र और भारतेन्दु हरिश्चन्द्र आदि के नाम प्रमुख रूप से इस सन्दर्भ में उभरते हैं। 19वीं शती में अंग्रेज सरकार द्वारा उर्दू को जितना प्रश्रय दिया गया और अदालत तथा राजकाज की भाषा में शामिल किया गया, हिन्दी को जान बूझ कर उतना ही दबाया गया जान पड़ता है। लॉर्ड मेकाले की नीतियों को अंजाम देने वाली ब्रिटिश हुकूमत इसकी ज़िम्मेदार थी। हिन्दी, हिन्दुस्तानी भाषा के नाम से आजादी की लड़ाई का प्रमुख हथियार रही। आजादी के बाद और संविधान-निर्माण के उपरान्त हिन्दी के सामाजिक, राष्ट्रीय, शैक्षिक एवं सांस्कृतिक उत्तरदायित्व का दायरा बढ़ गया। लेकिन उसकी संप्रभुता को सम्मान नहीं मिला। उसे विवादों के घेरे में आज तक घसीटे जाने की प्रक्रिया जारी है। राजनीतिक लाभ के लिए इस समृद्ध भाषा के साथ अन्याय किया गया और किया जा रहा है। आज़ादी के बाद दुनिया की सर्वाधिक समृद्ध भाषाओं में एक हिन्दी के विकास को लेकर जो सपने संजोये गए थे, वे सभी आज संकुचित विचारकों, राजनीतिज्ञों, संवेदनहीन साहित्यकारों, लोलुप पदाधिकारियों और स्वयं हिन्दी भाषा-भाषियों की अकर्मण्यता के सामने घुटने टेकते हुए नजर आते हैं। आज साहित्य के क्षेत्र में भी कुछ नकल, कुछ खानापूर्ति और कुछ असंगत लिखीं गई कृतियाँ थोक मात्रा में देखने को मिलती हैं।

हिन्दी में उच्चकोटि की मौलिक रचनाओं के बावजूद साधारण रचनाओं को महत्व मिलना खेदजनक है। विचारधाराओं की कटुता की धार का साहित्य और साहित्यकार पर नकारात्मक प्रभाव पड़ता है। प्रकाशन तंत्र की अराजकता के कारण भी हिन्दी की प्रतिभाओं का विकास नहीं हो पाता। भाषा के क्षेत्र में आधुनिक जीवन शैली, अन्य भाषाई परिवारों का सान्निध्य और वैज्ञानिक प्रगति ने हिन्दी भाषा को

प्रायः वर्ण संकर बना देना चाहा है। कुल मिलाकर हिन्दी भाषा और साहित्य के क्षेत्र में एक ऐसा विकास देखा जा सकता है जो सही मायने में अपेक्षित या मन को प्रफुल्लित करने वाला कतई नहीं है।

1.2 हिन्दी भाषा : अपनी विविध भूमिकाओं में

भाषा व्यक्ति और समाज की पहचान है। इसके सहारे समाज और राष्ट्र की अस्मिता की अभिव्यक्ति होती है। भाषा, मानव समाज की सबसे बड़ी शक्ति है। यह व्यक्ति के विचारों, भावनाओं, संवेदनाओं और क्रिया-कलापों की अभिव्यंजना का सशक्त माध्यम है। यह मानव सभ्यता का यथार्थ है। भाषा का विभिन्न रूपों में विकास राष्ट्र के विकास में निश्चितरूपेण सहयोगी है।

'हिन्दी' शब्द सुनने मात्र से ही हमारे देश के व्यापक भूभाग पर प्रयोग की जाने वाली भाषा का बोध होता है। भारत में बोली जाने वाली विभिन्न भाषाओं में हिन्दी भाषा का क्षेत्र बृहत्तर है। भौगोलिक सीमा विस्तार के साथ हिन्दी जन जीवन में अपनी विभिन्न भूमिकाओं का निर्वाह कर रही है। सामाजिक अभिव्यक्ति के अतिरिक्त हिन्दी कई रिक्त स्थानों की पूर्ति कर रही है जिससे इसके उत्तरदायित्व और महत्व दोनों में बढोत्तरी हुई है। अपनी विविध भूमिकाओं में हिन्दी जन भाषा, मातृभाषा, सम्पर्क भाषा, राष्ट्रभाषा, राजभाषा ओर संपर्क भाषा के रूपों में बहुमुखी उत्तरदायित्व का पालन कर रही है।

1.2.1 हिन्दी : मातृभाषा के रूप में

सन् 1991 तक के जनसंख्या आकलन के अनुसार देश की करीब पैंतालीस प्रतिशत जनता की मातृभाषा या प्रथम भाषा हिन्दी है। अगर विश्व समुदाय के उन प्रवासी भारतीय लोगों को इसमें सम्मिलित कर लिया जाय जिनकी मातृभाषा हिन्दी है तो निश्चित रूप में इस संख्या में बढोत्तरी होगी। सर्वाधिक रूप में हिन्दी को अपनी मातृभाषा के रूप में प्रयोग करने वाले प्रांतों में - उत्तर प्रदेश, मध्य प्रदेश,

राजस्थान, बिहार, छत्तीसगढ़, उत्तरांचल, हरियाणा, दिल्ली, झारखण्ड आदि राज्य आते हैं। इसके अलावा देश के अन्य प्रान्तों की राजधानियों और छोटे-बड़े अन्य कई शहरों में हिन्दी मातृभाषा भाषियों की एक बड़ी आबादी देखी जा सकती है। बालक बचपन से ही मातृभाषा के रूप में जिस भाषा को पहले-पहल सीखता है, वह उसकी सामाजिक अस्मिता की पहचान होती है। यहीं बच्चा अपनी भावाना, विचार, संस्कार, परम्परा एवं संस्कृति से जुड़ता है। इस तरह व्यक्ति के सामाजीकरण के दौरान मातृभाषा अपनी महत्वपूर्ण भूमिका अदा करती है। डॉ.भगवत शरत चतुर्वेदी मातृभाषा के बारे में कहते हैं - कि ''मातृभाषा आँचलिक बोली का वह सहज रूप है जिसे शिशु पालने में सुनता और बोलता है।''[17] जिस बोली अथवा भाषा का शिशु अपनी जननी की लोरी में श्रवण करता है, जिसे वह अपने चतुर्दिक वातावरण में गुंजित अनुभव करता है वह वास्तव में मातृभाषा कहलाती है। प्रसिद्ध विद्वान डॉ.कामिल बुल्के मातृभाषा और प्रतिभा के स्वाभाविक विकास में गहरा सम्बन्ध मानते हैं। वे कहते हैं कि - ''जो अपनी मातृभाषा पर पूरा अधिकार रखता है उसे विदेशी भाषाएँ सीखने में भी कोई मुश्किल नहीं होगी, क्योंकि उसके मस्तिष्क का स्वाभाविक विकास हो गया है।''[18]

आज जब हम खड़ी बोली हिन्दी के मातृभाषा होने का स्थान निश्चित करने की कोशिश करते हैं तो कई कठिनाइयों का सामना करना पड़ता है। कारण स्पष्ट है कि खड़ी बोली हिन्दी की उत्पत्ति प्रायः डेढ़ सौ वर्ष पुराना मानी जाती है, जबकि हिन्दी करीब एक हजार साल से जन-जीवन की भाषा रही है। यह जन जीवन में अवधी, ब्रज, राजस्थानी, बिहारी, बुन्देली और बघेली आदि के रूप में ही प्रयुक्त होती थी। इन सभी बोलियों-भाषाओं से समृद्ध आधुनिक हिन्दी का सम्बन्ध तय करने में समस्या खड़ी होती है, क्योंकि लोग हिन्दी की बोलियों को अपनी मातृभाषा का दर्जा देकर खड़ी बोली को एक अन्य भाषा मान लेते हैं। निम्नलिखित उद्धरण में यही देखने को मिलता है - ''सन 1975 में आयोजित भारतीय हिन्दी परिषद,

कालीकट के खुले मंच से जब हिन्दी प्रदेश के एक हिन्दी अध्यापक ने यह कहकर परिचय दिया कि वह अवधी भाषा-भाषी है, अवधी ही उसकी मातृभाषा है और हिन्दी उसके लिए वैसी ही है जैसी दक्षिण भारतीयों के लिए, तो सारे पण्डाल में शर्मनाक सन्नाटा छा गया।''[19]

यह मानने में कोई भ्रान्ति नहीं होनी चाहिए कि हिन्दी एक भाषा है और उसकी अपनी कई क्षेत्रीय बोलियाँ हैं। यथा अवधी, ब्रज, कन्नौजी, भोजपुरी, मैथिली, मगही, बुन्देली, बघेली, छत्तीसगढ़, कुमाउनी, गढ़वाली, मेवाती, मारवाड़ी आदि। हिन्दी भाषा की तरह इन बोलियों का अपना विशिष्ट व्याकरण है और उनकी अपनी विशिष्ट रचना व्यवस्था भी है। निश्चित रूप से व्याकरणिक भेद के बावजूद हिन्दी भाषा और उसकी बोलियाँ बोधगम्यता की दृष्टि से एक दूसरे के इतने नज़दीक हैं कि आसानी से एक दूसरे की बात को समझा जा सकता है। डॉ.रवीन्द्रनाथ श्रीवास्तव यह मानते हैं कि ''भाषा-बोली का आधार शुद्ध भाषा वैज्ञानिक इतिहास नहीं होता। उसका आधार तो उन भाषाओं के बोलने वालों का सामाजिक इतिहास होता है। क्योंकि सामाजिक प्रक्रिया के दौरान जनसमुदाय का जातीय पुनर्गठन होता है।''[20] इस सन्दर्भ में वे यह भी मानते हैं कि ''हिन्दी भाषी एक स्तर पर अपनी बोलियों से जुड़ा है और दूसरे स्तर पर अपनी भाषा हिन्दी से भी।''[21] हिन्दी की बोलियाँ शहरों में या उपनगरों में प्रायः न के बराबर होती हैं। वहाँ लोगों के बीच पारिवारिक संवाद सीधे खड़ी बोली हिन्दी में होता है।

हिन्दी को मातृभाषा के रूप में अपनाने और छोड़ने वालों की संख्या में भी उतार-चढ़ाव की स्थिति बनी रहती है। इसके लिए प्रमुख रूप से ज़िम्मेदार दो बातें हैं। प्रथम बात है व्यक्ति का प्रवास। काम की तलाश या बाध्यता की दृष्टि से व्यक्ति अन्य प्रान्त या अन्य देश में प्रवास करता है और कुछ वर्षोपरान्त उनमें से कुछ वहीं बस भी जाते हैं। जैसे विदेशों में रहने वाले अप्रवासी भारतीय (जहाँ उनकी आने

वाली संततियों के मातृभाषा-परिवर्तन की सम्पूर्ण सम्भावना रहती है।) नौकरियों में तबादले, व्यावसायिक कार्य एवं शिक्षा का क्षेत्र भी इसमें परिवर्तन लाते हैं। अन्तर्धार्मिक और अन्तर्जातीय या फिर विदेशी व्यक्ति से विवाह आदि जहाँ पति-पत्नी की भाषा भिन्न-भिन्न होती है। ये भी इस उतार-चढ़ाव में सहयोग देते हैं जहाँ मातृभाषा के रूप में सन्तान को किसी एक भाषा को प्रमुखता देनी पड़ती है। हिन्दी भाषी क्षेत्रों में चाहे हिन्दी की बोलियाँ ही मातृभाषा मान ली जायँ फिर भी वहाँ हिन्दी भी मातृभाषा जैसी ही होती है। हिन्दी भाषी बुद्धिजीवी अपनी भाषा को समुचित आदर नहीं देते - यह प्रायः सुनने को मिलता है। अंग्रेजी माध्यम से शिक्षा को बढ़ावा मिलने से भी खड़ी बोली हिन्दी के ही नहीं, अन्य भारतीय भाषाओं के विकास अभियान को भी सफलता पाने में हिन्दी क्षेत्र की एकता भंग होने का ख़तरा है। हिन्दी भाषा के विकास के लिए यह बात घातक सिद्ध हो सकती है।

यह एक निर्विवाद तथ्य है कि अपनी मातृभाषा में ही प्रतिभा के फूल सही रूप से खिल सकते हैं। व्यक्ति के अनुभव की बारीकियाँ, भावनात्मक संवेदनशीलता, वैचारिक दिशा तथा सैद्धांतिक दृष्टिकोण का सम्पादन उसकी अपनी मातृभाषा में जितनी पूर्णता से सम्भव है उतनी परभाषा के सहारे नहीं। हिन्दी ऐसे विराट भाषा परिवार और समुदाय से सम्बन्ध रखती है जिसकी संस्कृति अतिसमृद्ध है। आज की हिन्दी करोड़ों सांस्कृतिक थाती का मौखिक और लिखित रूप है। हिन्दी, दुनिया में सर्वाधिक रूप से प्रयोग की जाने वाली तीन-चार भाषाओं में से एक है। मातृभाषा के रूप में भी यह उत्तर और मध्य भारत ही नहीं बल्कि कामोबेश मात्रा में भारत और विश्व के कई हिस्सों में व्यवहार में लाई जाती है।

1.2.2 हिन्दी : राष्ट्रभाषा के रूप में :

भारतवर्ष विशाल जनसमुदाय वाला बहुभाषी देश है। यहाँ प्रायः सोलह सौ पचास (1650) से अधिक बोलियाँ और भाषाओं को प्रथम भाषा के रूप में व्यवहृत

किया जाता है। इनमें 33 ऐसी भाषाएँ हैं जिनके बोलने वालों की संख्या लाख से ऊपर है। ये भाषाएँ विभिन्न भाषा परिवार से अपना सम्बन्ध रखती हैं। हिन्दी भारोपीय भाषा परिवार के अन्तर्गत आती है। आजादी के बाद भारत सरकार ने पन्द्रह भाषाओं को संविधान की आठवीं अनुसूची (8th schedule) में स्थान दिया। वे भाषाएँ थी - असमिया, बंगाली, गुजराती, हिन्दी, कन्नड़, कश्मीरी, मलयालम, मराठी, उड़िया, पंजाबी, संस्कृत, तमिल, तेलुगु, उर्दू और सिन्धी। बाद में 1992 के 71 वें संविधान संशोधन के तरह कोंकणी, मणिपुरी और नेपाली को भी शामिल किया गया।पुनः एक बार सन् 2003 में सौवें संविधान संशोधन के द्वारा मैथिली, संथाली, डोगरी और बोडो को शामिल किया गया। इस प्रकार भारत सरकार द्वारा स्वीकृत भारतीय भाषाओं की कुल संख्या बाईस हुई।

भारत में,सम्पूर्ण तौर पर देश के हर कोने में बोली जाने वाली एक आम भाषा का अभाव रहा है। पहले संस्कृत का लगभग देशव्यापी आधिपत्य था। परन्तु यह कालान्तर में विद्वानों की भाषा बन कर रह गई। अंग्रेजी ने अंग्रेजों को शासन और शिक्षा की भाषा बनाकर लोगों तक इसे पहुँचाने का प्रयत्न किया, परन्तु यह मुट्ठी भर शिक्षित लोगों की भाषा बनकर रह गई। आज़ादी के समय राष्ट्रीय कांग्रेस ने भाषा के आधार पर भारतीय क्षेत्रों का बँटवारा स्वीकार किया और इस तरह पन्द्रह (15) मुख्य प्रान्तीय भाषाओं को सांविधानिक दर्जा प्राप्त हुआ। ऐसी हालत में आजादी के बाद समूचे देश को एकसूत्र में बाँधे रखने के लिए एक आम भाषा की आवश्यकता अनुभव की गई। 14 सितम्बर, 1949 को संविधान द्वारा हिन्दी को भारतीय गणराज्य की राजभाषा का दर्जा प्रदान किया गया। अंग्रेजी को अगले पन्द्रह वर्षों तक राजभाषा के रूप में रखा गया था, लेकिन बाद में संविधान संशोधन के द्वारा 1965 के बाद भी उसे हिन्दी के साथ-साथ राजभाषा के रूप में अनिश्चित काल के लिए रख दिया गया। यद्यपि हिन्दी समर्पित भाव से अपने उत्तरदायित्व का उचित निर्वाहन करती आ रही है, किन्तु इसे अफसरशाही का समुचित सहयोग नहीं

मिल रहा। संख्या की दृष्टि से हिन्दी भारत में सर्वाधिक बोली जाती है। माना जाना चाहिए कि देवनागरी लिपि में लिखी जाने वाली हिन्दी, भोजपुरी, ब्रज, अवधी, बुन्देली और राजस्थानी आदि बोलियों का प्रतिनिधित्व भी करती है।

राष्ट्रभाषा के सम्बन्ध में अपना मत प्रस्तुत करते हुए डॉ.भोलानाथ तिवारी कहते हैं कि ''जब कोई भाषा आदर्श भाषा बनने के बाद भी उन्नत होकर और भी महत्वपूर्ण बन जाती है तथा पूरे राष्ट्र या देश में अन्य भाषा क्षेत्र में भी उसका प्रयोग सार्वजनिक कार्यों आदि में होने लगता है तो वह राष्ट्रभाषा का पद पा जाती है।''[illegible] आगे वे कहते हैं कि कि ''वह (हिन्दी) अपने परिवार के अहिन्दी प्रान्तों ..... में भी धीरे-धीरे व्यवहार में आती जा रही है। पूरे यूरोप में फ्रेंच को भी यही स्थान प्राप्त था।''[illegible] आज हिन्दी न सिर्फ़ भारत के हिन्दी और अहिन्दी प्रान्तों में राष्ट्रभाषा के रूप में व्यवहृत हो रही है बल्कि वह विदेशों में भी कहीं-कहीं राष्ट्रीय स्तर पर व्यवहार में लाई जा रही है। मॉरिशस, सूरीनाम और फीजी जैसे देशों में राष्ट्र स्तर पर हिन्दी का प्रयोग हो रहा है। इस तरह से हिन्दी का दायरा विस्तृत दिखाई देता है। हॉलैंड के एक ख़ास हिस्से में भी सरनामी हिन्दी बोली जाती है। नेपाल जैसे देश का एक बहुत बड़ा हिस्सा हिन्दी का मातृभाषा के रूप प्रयोग करता है। वहाँ इसके साथ मैथिली भी बोली जाती है। हाल के वर्षों तक हिन्दी वहाँ प्रथम भाषा के रूप में भी पढ़ाई जाती थी। मॉरिशस, फीजी और सूरीनाम में तो हिन्दी घर-घर की भाषा है। सरकार द्वारा मान्यता प्राप्त स्कूलों में यह अनिवार्य रूप से पढ़ाई जाती है। यह वहाँ भारतीय मूल के लोगों की मातृभाषा और उनकी पहचान है। उन देशों में फ्रेंच, पुर्तगाली, अंग्रेजी, क्रियोल और काईबीती भाषाओं के साथ हिन्दी की भी व्यापक निजी सांस्कृतिक अस्मिता है क्योंकि इसे देश की अधिकांश जनता इसे समझती और बोलती है। भाषा अपने विकास, विस्तार और उपयोगिता के बल पर अपने महत्व में वृद्धि करती हुई स्वयं को प्रतिष्ठित करती है। भाषा की साहित्यिक क्षमता, विस्तार के साथ-साथ बुद्धिजीवी वर्ग द्वारा प्रयुक्त, राष्ट्र के विचार प्रधान एवं

साहित्यिक भावों का आदान-प्रदान आदि के गुण भाषा को सक्षम और महत्वपूर्ण बना देते हैं।

इन्हीं गुणों के कारण भाषा राष्ट्रीय चेतना और अभिव्यक्ति को प्रभावित करती है। निस्संदेह हिन्दी भाषा विश्व की प्रमुख और समृद्ध भाषाओं में अपना स्थान रखती है। यह देश की चालीस प्रतिशत लोगों की अपनी भाषा है और जहाँ तक बोलने और समझने की बात है तो यह करोड़ों लोगों द्वारा प्रयोग में की जाती है। इसके अलावा प्रशासन, व्यवसाय, शिक्षा, फ़िल्म और दूरदर्शन, संगीत एवं अन्य क्षेत्रों में यह विस्तृत रूप से प्रयुक्त होती है।

भारत जैसे विशाल बहुभाषी राष्ट्र में राष्ट्रीय भावना को दृष्टिगत रखते हुए जो भाषा सर्वप्रचलित और प्रतिनिधि भाषा के रूप में सर्वग्राह्य हो सकती है, वह भाषा हिन्दी ही है। इसे ही देश के संविधान तथा आम जनता ने राष्ट्रभाषा का दर्जा दिया। हिन्दी को राष्ट्रभाषा के रूप में स्वीकार करते हुए गुरुदेव रवीन्द्रनाथ टैगोर कहते हैं कि ''हिन्दी देश के सबसे बड़े हिस्से में बोली जाती है। हमें इसे राष्ट्रभाषा के रूप में स्वीकार करना ही चाहिए।''[24] वे भारतीय भाषाओं को नदियाँ और हिन्दी को महानदी मानते हैं। डॉ.वासुदेव शरण अग्रवाल भी हिन्दी को उस समृद्ध जल राशि के समान मानते हैं जिसमें अनेक नदियाँ मिलती हैं।

भारत के प्रथम प्रधान मंत्री पं.जवहरलाल नेहरू जी के राष्ट्रभाषा सम्बन्धी विचार कुछ इस प्रकार हैं - ''राष्ट्रभाषा के रूप में हिन्दी हमारे देश की एकता में सबसे अधिक सहायक होगी। इसमें सन्देह नहीं।''[25] स्वामी विवेकानन्द मानते हैं कि ''हिन्दी के द्वारा ही सारे भारत को एकसूत्र में पिरोया जा सकता है।''[26]

हिन्दी स्वतन्त्र और स्वाभिमानी देशवासियों के द्वारा भारत की राष्ट्रभाषा मानी गई है। हिन्दी भाषा सच्ची राष्ट्रीय भावना के विकास, सांस्कृतिक सोच तथा राष्ट्र संगठन के लिए आवश्यक ही नहीं, बल्कि अनिवार्य है। शताब्दियों से हिन्दी विशाल

भारत की सम्पर्क भाषा रही है। भाषा वैज्ञानिक सुनीत कुमार चटर्जी हिन्दी को इस रूप में देखते हैं - "हिन्दी समग्र भूमण्डल की तीसरी भाषा है, विश्व की मानव संतान के पंचमांश की होनहार भाषा है। हिन्दी की अभिव्यंजनाशक्ति अपूर्व है।"[27] माना वरेरकर कहते हैं "हिन्दी तो राष्ट्रभाषा है ही, भले ही कुछ नेता वैसा न मानें, सैकड़ों वर्ष पूर्व हमारे सन्तों, व्यापारियों एवं धार्मिक यात्रियों द्वारा हिन्दी का यह रूप स्वीकार किया जा चुका है। इस लोक स्वीकृत भाषा को अपना कर ही हम भारत की एकता को दृढ़ कर सकते हैं। सभी प्रान्तीय भाषाओं द्वारा देवनागरी लिपि स्वीकार किए जाने पर निश्चय ही काफ़ी अंश तक विविधता में एकता आ सकेगी। एक दूसरे की भाषाएँ सीखने-पढ़ने में लोगों की रुचि बढ़ेगी। हमें अपनी क्षेत्रीय संस्कृति के प्रति प्रेम और स्वाभिमान अवश्य होना चाहिए।

किन्तु विराट भारत की सांस्कृतिक एकता जो अत्यन्त प्राचीन काल से अखण्ड चली आ रही है, वह बहुत बड़ी चीज़ है, हम उसे भुला नहीं सकते।"[28] भारतीय सांस्कृतिक तथा राजनैतिक एकता हिन्दी के सहारे ही सम्भव है, ऐसी अनेकानेक बुद्धिजीवियों, कलाकारों और राजनीतिज्ञों की सुचिन्तित मान्यता है।

1.2.3 हिन्दी : राजभाषा के रूप में

आमतौर पर सरकारी कार्य जिस भाषा में संपन्न होते हैं, उसे प्रशासनिक भाषा कहते हैं। अतः "उस भाषा को राजभाषा कहा जा सकता है, जो सरकारी कामकाज की भाषा हो और शासन तथा जनता के बीच आपसी सम्पर्क के काम आती हो।"

'हिन्दी' को भारतीय संघ की राजभाषा सन् 1950 से लागू किया गया। आरंभ में केन्द्र सरकार के कार्यों की भाषा अंग्रेजी ही रही। हिन्दी को अंग्रेजी का स्थान देने के लिए गंभीर प्रयास सन् 1960 से विशेषकर 1963 के राजभाषा अधिनियम के पास होने के बाद से ही शुरू किए गए।

स्वाधीन भारत की संविधान सभा ने 14 सितम्बर 1949 को बहुमत से हिन्दी को राजभाषा के रूप में स्वीकारोक्ति दी। अनुच्छेद 343(1) के अनुसार माना गया कि ''संघ की राजभाषा हिन्दी और लिपि देवनागरी होगी। संघ के शासकीय प्रयोजनों के लिए प्रयोग होने वाले अंकों का रूप भारतीय अंकों का अंतर्राष्ट्रीय रूप होगा।''[29]

''भारतीय संविधान में राजभाषा संबंधी प्रावधान, उसके भाग 5 (अध्याय 2, अनुच्छेद 120 संसद में प्रयोग की जाने वाली भाषा) तथा भाग 6 (अध्याय 3, अनुच्छेद 210 विधान मंडल में प्रयोग की जाने वाली भाषा) तथा भाग 17 (अध्याय 1, अनुच्छेद 343 संघ की राजभाषा, अनुच्छेद 344, राजभाषा के संबंध में आयोग और संसद की समिति); अध्याय 2 अनुच्छेद 345 राज्य की राजभाषा या राजभाषाएँ, अनुच्छेद 346 एक राज्य और दूसरे राज्य के बीच या किसी राज्य और संघ के बीच पत्रादि की राजभाषा, अनुच्छेद 347 किसी राज्य की जनसंख्या के किसी अनुभाग द्वारा बोली जाने वाली भाषा के संबंध में विशेष उपबंध, अध्याय 3, अनुच्छेद 348 में उच्चतम न्यायालय में या उच्च न्यायालयों में और अधिनियमों, विधेयकों आदि के लिए प्रयोग की जाने वाली भाषा, अनुच्छेद 350 क. प्राथमिक स्तर पर मातृभाषा में शिक्षा की सुविधाएँ, अनुच्छेद 350 ख. भाषाई अल्प संख्यक वर्गों के लिए विशेष अधिकार और अनुच्छेद 351 हिन्दी भाषा के विकास के लिए निर्देश में प्रकाशित है।''[30]

इस तरह अनुच्छेद 343 के साथ 351 को भी सबसे प्रमुख अनुच्छेद माना जा सकता है क्योंकि यह राजभाषा हिन्दी के विकास संबंधी निर्देशों से जुड़ा हुआ है। अनुच्छेद 351 के बारे में श्री प्रह्लाद राजवेदी लिखते हैं - ''संघ का यह कर्तव्य होगा कि वह हिन्दी भाषा का प्रचार बढ़ाएँ, उसका विकास करें जिससे वह भारत की सामासिक संस्कृति के सभी तत्वों की अभिव्यक्ति का माध्यम बन सके और उसकी प्रवृत्ति में हस्तक्षेप किए बिना हिन्दुस्तानी में और आठवीं अनुसूची में

विनिर्दिष्ट भारत की अन्य भाषाओं में प्रयुक्त रूप, शैली और पदों को आत्मसात करते हुए और जहाँ आवश्यक और वांछनीय हो वहाँ उसके शब्द भण्डार के लिए मुख्यतः संस्कृत से और गौणतः अन्य भाषाओं से शब्द ग्रहण करते हुए उसकी समृद्धि सुनिश्चित करे।'[31]

इस तरह संघ की राजभाषा हिन्दी को मानकर इसके प्रसार हेतु भारतीय संसद ने भी दिसम्बर 1967 में राजभाषा संकल्प पारित किया। अगले वर्ष 18 जनवरी को भारत सरकार ने दोनों सदनों द्वारा पारित इस संकल्प को आम जानकारी के लिए प्रकाशित किया। जिसके मूल रूप का प्रथम संकल्प नीचे उद्धृत किया जा रहा है :

"राजभाषा संकल्प - 1968

गृह मंत्रालय

नई दिल्ली, दिनांक 18 जनवरी, 1968

संसद के दोनों सदनों द्वारा पारित निम्नलिखित सरकारी संकल्प आम जानकारी के लिए प्रकाशित किया जाता है।

संकल्प

1. जबकि संविधान ने अनुच्छेद 343 के अनुसार संघ की राजभाषा हिन्दी रहेगी और उसके अनुच्छेद 351 के अनुसार हिन्दी भाषा का प्रसार, वृद्धि करना और उसका विकास करना ताकि वह भारत की सामासिक संस्कृति के सब तत्वों की अभिव्यक्ति का माध्यम हो सकें, संघ का कर्तव्य है।

यह सभा संकल्प करती है कि हिन्दी के प्रसार एवं विकास की गति बढ़ाने हेतु तथा संघ के विभिन्न राजकीय प्रयोजनों के लिए, उत्तरोत्तर इसके प्रयोग हेतु भारत सरकार द्वारा एक अधिक गहन एवं व्यापक कार्यक्रम तैयार किया जाएगा और उसे कार्यान्वित किया जाएगा और किए जाने वाले उपायों एवं की जाने वाली प्रगति की विस्तृत वार्षिक मूल्यांकन रिपोर्ट संसद की दोनों सभाओं के पटल पर रखी

जाएगी और सब राज्य सरकारों को भेजी जाएँगी।'[३२] इसके अतिरिक्त तीन और संकल्प किए गए।

इस प्रकार 'संकल्पन-1968' में पारित चारों संकल्पों में पहले संकल्प के अन्तर्गत गहन तथा व्यापक वार्षिक कार्यक्रम की बात की गई। दूसरे संकल्प के अन्तर्गत हिन्दी के साथ अन्य अन्य (14) भारतीय भाषाओं के समुचित विकास की बात की गई। तीसरे संकल्प में प्रान्तानुसार त्रिभाषा शिक्षानीति की बात मानी गई। चौथा संकल्प संघ लोक सेवा आयोग से संबंधित है। इसे आई.सी.एस परीक्षा में भाषा माध्यम मान लिया गया।

आज जबकि 18 जनवरी, 2005 को दूसरे संकल्प को पारित हुए सैंतीस (37) वर्ष हो जाएँगे; हिन्दी का राजभाषा अस्तित्व फिर से वस्तुस्थिति के नवीन आकलन की अपेक्षा रखता है। महिमासंपन्न संसद द्वारा पारित राजभाषा-संकल्प और हिन्दी भाषा का प्रचार-प्रसार की व्यवस्था का निष्ठापूर्वक अनुपालन और समुचित कार्यान्वयन; दोनों के बीच का कम होता दायरा ही हिन्दी के साथ न्याय कर सकता है। सन् 1963 और सन् 1976 में राजभाषा नियम को संशोधित किया गया। 1963 में संसद में इसके प्रयोग के साथ अंग्रेजी का प्रयोग जारी रखना और भाषाओं के प्रयोग के द्विभाषिक रूप के प्रकाशन चर्चा की गई। 1976 में संघ के शासकीय कार्यों में हिन्दी प्रयोग संबंधी बातों पर जोर दिया गया। सन् 1987 के संशोधन में विभिन्न प्रदेशों के हिन्दी के ज्ञान के आधार पर 'क' 'ख' और 'ग' तीन क्षेत्रों में बाँटा गया। राजभाषा के सारे नियमों का उचित पालन करने के लिए सरकारों ने विभिन्न विभागों के मंत्रालयों में समितियों का गठन किया गया है।

'हिन्दी' अपनी व्यापक जनाधार की क्षमता अधिकाधिक भारतीय भूभाग की जनाकांक्षा का सहयोग और विस्तृत हिन्दी समाज के बल पर संविधान सभा द्वारा एकमत से राजभाषा मानी गई। सैकडों बार संविधान में इस पर चर्चा की गई। आज तक इसकी राजभाषा संबंधी नीति को समझने-समझाने के प्रयास किए गए। परंतु

सही मायने में राजभाषा हिन्दी के साथ सब कुछ ठीक-ठाक नहीं रहा है। सरकारी कार्यालयों, विद्यालयों-विश्वविद्यालयों, सरकारी, ग़ैरसरकारी संस्थाओं आदि सब जगह पर यह कमोधिक बोलचाल की भाषा के रूप में तो दिखाई पड़ती है परन्तु इसका मौखिक रूप आज तक लिखित स्वरूप क्यों प्राप्त नहीं कर पाया है यह भी प्रमुख विचारणीय प्रश्न है। डॉ.रणजीत साहा की बात सही लगती है कि ''कहना न होगा, इन विशेषताओ के बावजूद, लोगों में हिन्दी के प्रति जो भावनात्मक सम्मान था - वह कम हुआ है। इसीलिए सरकार ने भी इस दिशा में अब दबाव नहीं अनुरोध और प्रोत्साहन पर अधिक बल देना शुरू किया है।''[33] आगे वे पुनः लिखते हैं - ''वस्तुतः न तो संस्था के स्तर पर और केन्द्रीय सत्ता की मंशा के अनुरूप हम अभी तक राजभाषा हिन्दी में कार्य करने की मानसिकता न तो केन्द्रीय स्तर पर और राज्य स्तर पर ही बना पाए हैं। ..... इसीलिए चाहे सरकारी या गैर सरकारी हो या स्वायत्त या निजी - चारों प्रकारों की संस्थाओं अथवा उपक्रमों में - विद्यालयों एवं विश्वविद्यालयों के पाठ्यक्रमों में, संचार माध्यमों में - यह सुनिश्चित करना कठिनतर होता जा रहा है कि न केवल हिन्दी को बल्कि स्थानीय भाषाओं की कितना महत्व दिया जाएगा।[34] लोगों में इस तरह का संदेह निश्चित रूप से हिन्दी के राजभाषा संबंधी भविष्य पर प्रश्न चिह्न लगता है।

हिन्दी का वैश्विक स्वरूप स्थिर करना भले ही चुनौतीपूर्ण कार्य हो परंतु एक राष्ट्र अगर चाहे तो अपनी राजभाषा संबंधित निर्धारित लक्ष्य को निश्चित रूप से प्राप्त कर सकता है। इसके प्रगामी प्रयोग के क्षेत्र में प्रगति के मार्ग तेजी से प्रशस्त किए जा सकते हैं। राजभाषा की बात तभी तर्कसंगत लगती है जब यह जनता की भाषा हो; जिसे इससे सरोकार हो। जनता की भाषा होने के लिए इसे सरलीकरण का रास्ता अपनाना होगा। इसे अपनी कृत्रिमता त्याग कर निरपेक्ष भाव से अपनी सरल और निराभरण ऋजता का विकास करना होगा। इसे सामासिकता की जिम्मेदारी उठानी होगी। तभी हिन्दी गुणात्मक स्तर पर सफलता के शीर्ष पर

स्थापित हो सकती है। कुछ विद्वान सही मानते हैं कि स्वाधीनता प्राप्ति के बात भारत में हिन्दी की स्थिति का प्रश्न सुलझने की जगह उलझता चला गया है और आज वह कठिन परिस्थिति में गिरी हुई है। इसका सरलीकरण इसके स्वाभाविक विकास में बाधा बना हुआ है। अंततः हिन्दी के विकास की कुंजी देश की जनता के हाथों में है।

1.2.4 हिन्दी : संपर्क भाषा के रूप में

भाषा मानवीय संपर्कों को पूर्ण रूप से संपादित करती है। समाज जितना ही विस्तृत और वैविध्यपूर्ण होगा भाषा की जिम्मेदारी उतनी ही बड़ी होगी। अगर समाज बहुभाषी हो तो कोई न कोई भाषा अपनी पहुँच और क्षमता के अनुरूप संपर्क भाषा या लिंक लैंग्वेज का कार्य सम्पादन करती है। इस तरह संपर्क भाषा का स्वरूप विस्तृत होता है। हिन्दी, एक संपर्क भाषा के रूप में मात्र राष्ट्रव्यापी न होकर विश्वव्यापी स्थान ग्रहण कर रही है। यह संभव हो रहा है कि हिन्दी की जिजीविषा के बल पर। वैश्वीकरण की आँधी के साथ-साथ विश्वभाषाओं की स्थिति भी बदलती है। इस दौरान जहाँ कुछेक भाषाओं की प्रभुता के बढ़ने की संभावना रहती है वहीं अन्य भाषाओं का भविष्य के प्रति जागरूक रहने की आवश्यकता है।

समूचे भारत की एक उपयुक्त भाषा होने के कारण हिन्दी अन्तर्प्रान्तीय व्यवहार के लिए सटीक है। देश में एक संपर्क भाषा के रूप में यह ग्रामीणों, शहरियों, निरक्षरों, बच्चों-बूढ़ों, महिलाओं, शोषितों, व्यावसायिकों, शिक्षण संस्थानों, सरकारी, ग़ैरसरकारी संस्थानों, दूर संचार माध्यमों, मीडिया, धार्मिक स्थानों, यातायात के साधनों, मनोरंजनों के साधनों और देश की सुरक्षा संस्थाओं आदि के मध्य सर्वाधिक प्रयुक्त होने वाली भाषा है। देश के विद्वान राष्ट्रपति वी वी गिरि ने हिन्दी के प्रति आश्वस्त होते हुए कहते हैं - ''मेरा दृढ़ विश्वास है कि हिन्दी देश की 'लिंगुआ फ्रैंका' बनेगी। पर हिन्दी प्रचार के कार्य में पारस्परिक समझ, अनंत धैर्य

तथा दीर्घ प्रयत्न की आवश्यकता है।''[35] इसी तरह भूतपूर्व राष्ट्रपति ज्ञानी जैलसिंह जो खुले तौर पर हिन्दी के प्रबल समर्थक रहे हैं उन्होंने भी कहा है - ''यह इसलिए नहीं है क्योंकि हिन्दी एक समृद्ध भाषा है बल्कि इसलिए क्योंकि यह सर्वाधिक लोगों द्वारा बोली और समझी जाती है। हिन्दी ही मात्र एक ऐसी भाषा है जो सम्पर्क भाषा के रूप में प्रयुक्त हो सकती है। इसकी लोकप्रियता का कारण इसका लचीलापन है। हमें इसका सम्पर्क भाषा के रूप में विकास करना है।''[36] भूतपूर्व प्रधानमंत्री पी.वी.नरसिंह राव बहुभाषी विद्वान हैं। सन् 1994 में एक बार केन्द्रीय हिन्दी समिति द्वारा आयोजित एक संगोष्ठी में 25-6-1994 के दिन भाषण देते हुए उन्होंने कहा - ''इस सभा में आज हम यह जानने, देखने और सुनने के लिए आए हैं कि हिन्दी का सम्पर्क भाषा के रूप में विकास किस प्रकार किया जा रहा है।''[37]

अंतःप्रादेशिक रूप में भी हिन्दी का भारत में व्यापक विस्तार हो रहा है। यह दूसरी भाषाओं के मध्य अपना स्थान बना रही है और अहिन्दी भाषी लोग भी अन्य प्रांतों या भाषाओं में आपसी आदान-प्रदान के लिए इसका प्रयोग करते हैं। सीखने और बोलने में सुगम होने के कारण इसका प्रयोग करने में हिचकिचाहट कम होती है। संपर्क भाषा के रूप में देश के दैनंदिन प्रयोग में हिन्दी जीवन के प्रत्येक क्षेत्र में अपनी पहुँच रखती है। एक भाषा के रूप में भारत में अंग्रेजी जिस तरह से अपनी आरोपित भूमिका अदा करती है हिन्दी की स्थिति वैसी नहीं है। हिन्दी हमारी तहज़ीब की भाषा है। हिन्दी ज़मीन से जुड़ी हुई भाषा है। ग्राह्यता की दृष्टि से आज भी संपर्क भाषा के रूप में अंग्रेजी की तुलना में हिन्दी आज भी लोगों में ज्यादा मिली जुली है। संपर्क भाषा के लिए संख्याधिकता उतनी अनिवार्यता नहीं होनी चाहिए जितना स्वाभाविक रूप से जोड़ने का भाव आवश्यक है। इसमें लोकशक्ति होनी चाहिए। यह शक्ति भाषा को व्यापकता प्रदान करती है। संपर्क भाषा हिन्दी के विशाल भाषा-भाषी समुदाय में निम्न लोगों, क्षेत्रों अथवा संस्थाओं या संस्थानों को देखा जा सकता है।

1.2.4.1 भारतीय रेलवे और संपर्क भाषा हिन्दी :

भारतीय रेलवे दुनिया की ऐसी संस्था है जहाँ सर्वाधिक लोग एक साथ कार्य करते हैं। संपर्क भाषा के रूप में अधिकांश कार्यालय के आफीसर एवं कर्मचारी हिन्दी का प्रयोग करते हैं। इसके अतिरिक्त चलती ट्रेनों में कार्य करने वाले प्रायः सभी कर्मचारी हिन्दी का प्रयोग करते हैं।

यातायात के अन्य साधनों के स्थानों पर कर्मचारियों एवं टैक्सी-आटों, कैब आदि वाहन चालक अपनी-अपनी मातृभाषा के अलावा अन्य प्रान्तों के लोगों के साथ संपर्क भाषा हिन्दी का प्रयोग करते हैं। यातायात के साधन हवाई, जल एवं स्थल तीनों जगहों पर हिन्दी संपर्क भाषा का सर्वाधिक प्रयोग होता है।

1.2.4.2 सुरक्षा संस्थाएँ एवं संपर्क भाषा हिन्दी :

भारतीय सेना संख्या की दृष्टि से दुनिया की सबसे सेनाओं में एक मानी जाती है। यहाँ हिन्दी का प्रमुख रूप से संपर्क भाषा के रूप में प्रयोग किया जाता है। यह प्रयोग थल सेना में अधिक पाया जाता है। जल सेना और वायु सेना में भी इसका विस्तृत रूप से प्रयोग किया जाता है। रिजर्व सुरक्षा बल, विभिन्न प्रांतों की पुलिस, अन्य सरकारी सुरक्षा टुकडियाँ एवं गैर सरकारी सुरक्षा जवान शहरों, मुहल्लों, गलियों और बड़ी-बड़ी गगन चुंबी इमारतों के गार्ड्स और चौकीदार आदि अधिकांश हिन्दी भाषा जानते हैं और इसका संपर्क भाषा के रूप में प्रयोग करते हैं।

1.2.4.3 विभिन्न कार्यालयों में संपर्क भाषा हिन्दी

भारत के केन्द्रीय सरकारी और गैर सरकारी कार्यालयों और बहुराष्ट्रीय कम्पनियों में धडल्ले से हिन्दी का प्रयोग होता है। मौखिक हिन्दी प्रयोग के विरोध का रूप प्रायः नहीं के बराबर दिखता है। गैर सरकारी संस्थाओं और कुछ बहुराष्ट्रीय कम्पनियों में हिन्दी और क्षेत्रीय भाषा का प्रयोग आवश्यक माना जाता है। दफ़्तरों की लिखित भाषा भले ही अंग्रेजी हो परन्तु हिन्दी के प्रयोग की आवश्यकता

सर्वत्र दिखाई देता है।

इसके अलावा शिक्षा केन्द्र एवं विश्वविद्यालय आदि में कदम-कदम पर इसका प्रयोगवाध्यता देखने को मिलती है। छोटे-बड़े सरकारी उद्योग धंधों जैसे इस्पात कारखानों आदि में अधिकांश लोग बिना हिन्दी भाषा प्रयोग के अपना कार्य सुचारु रूप से नहीं चला सकते। लघु उद्योग, घरेलू उद्योग, ग्रामीण एवं शहरी बाजारों को भी इसकी आवश्यकता पड़ती है। छोटे-बड़े होटल, बैंक व्यवसाय, एवं अस्पताल आदि स्थानों पर निहायत रूप से हिन्दी का संपर्क भाषा के रूप में इस्तेमाल होता है।

1.2.4.4 मनोरंजन और खेल जगत में हिन्दी:

भारत में मनोरंजन का संसार बहुत बड़ा है। यह प्रमुख रूप से हिन्दी, तेलुगु, तमिल, बंगाली, मलयालम, कन्नड़, पंजाबी, मराठी और उड़िया-असमिया आदि के साथ अन्य भारतीय भाषाओं की फ़िल्मों, दूरदर्शन के कार्यक्रम (धारावाहिक आदि) रेडियो कार्यक्रम, गीत-संगीत के कैसेट, अलबम, नाटक इत्यादि का मंचन, उन्हें बनाना एवं जनता के बीच पहुँचाना आदि करने वालों की आपसी संपर्क भाषा प्रमुख रूप से हिन्दी ही होती है। यहाँ तक कि विदेशी कलाकार, गायक एवं निर्माता आदि इस कार्य हेतु कहीं न कहीं हिन्दी का प्रयोग करते ही हैं। इन क्षेत्रों में व्यक्तिगत रूप से या स्टूडियो में कार्य करने वाले लोग भिन्न-भिन्न प्रांतों के होते हैं। वे सभी आमतौर पर अंग्रेजी आदि की सहायता के साथ हिन्दी का भी धाराप्रवाह प्रयोग करते हैं।

इधर पिछले दो दशकों में हिन्दी फिल्में और टी.वी.सीरियलों की अपार सफलता और विश्व भर में प्रसिद्धि ने हिन्दी भाषा का जितना विकास किया है शायद किसी अन्य तरह से इसके विकास में इतनी सहायता मिली हो।

मनोरंजन के अलावा खेल जगत दूसरा क्षेत्र है जहाँ भारत में संपर्क भाषा के

रूप में हिन्दी का प्रचुर प्रयोग किया जाता है। विभिन्न खेलों के राष्ट्रीय स्तर के अधिकांश खिलाड़ी चाहे जिस राज्य के भी हों थोड़ी-बहुत हिन्दी ज़रूर जानते हैं। इस तरह स्वाभाविक है कि हिन्दी ही उनमें आपसी सम्पर्क का माध्यम बनती है। खिलाड़ी विद्यालय, महाविद्यालय या विश्वविद्यालय किसी भी स्तर का हो प्रायः सभी का हाल समान है।

सिर्फ़ भारतीय खिलाड़ी या दर्शक ही नहीं बल्कि पाकिस्तानी, नेपाली आदि भी इसका प्रयोग करते हैं। आस्ट्रेलिया, इंग्लैण्ड आदि के भी कुछ खिलाड़ी काम चलाऊ हिन्दी जानते हैं। रेडियो की क्रिकेट, फुटबाल या हॉकी जैसे खेलों की कमेंट्री सुनने को लोग लालायित रहते हैं। यही हाल दूरदर्शन पर इन खेलों के प्रसारण का भी है। वहाँ अंग्रेजी और हिन्दी की कमेण्ट्री का बारी-बारी से प्रसारण होता है। इस तरह खेल जगत में सम्पर्क भाषा हिन्दी अपनी प्रमुख भूमिका अदा करती है। कारण स्पष्ट है, अंग्रेजी की तुलना में हिन्दी को सुनने-समझने वालों की संख्या कई गुना ज्यादा है।

चाहे जहाँ भी हों, जिस स्तर के भी हों परंतु कुल मिलाकर सांस्कृतिक कार्यक्रमों में और अन्य कला संस्कृति के कार्यक्रमों के आयोजन में हिन्दी विद्यमान रहती है। एक देश की प्रमुख भाषा की पहचान इन्हीं माध्यमों से होती है। निश्चित रूप से इन माध्यमों में हिन्दी का प्रत्यक्ष प्रयोग दिखाई पड़ता है। इन सबके पीछे संचार माध्यम सक्रिय रूप से कार्यरत है। संचार माध्यमों में लिखित माध्यम के साथ-साथ इलेक्ट्रॉनिक मीडिया और संचार के अन्य माध्यमों में हिन्दी प्रयोग बढ़ा है। संचार माध्यम और हिन्दी एक विस्तृत विषय है। विज्ञापनों ने भी भले ही तोड़मरोड़ किया हो परंतु हिन्दी को लोगों के सामने टुकड़ों में ही सही परोसा जरूर है। कंप्यूटर का क्षेत्र और प्रौद्योगिकी भी इससे अछूते नहीं रहे हैं।

1.2.4.5 अंतर्जातीय एवं अन्तर्प्रांतीय विवाह संबंध और हिन्दी

भारतीय समाज दिन-प्रतिदिन बदल रहा है। स्वाभाविक है कि यह बदलाव

जीवन के प्रत्येक क्षेत्र में हो रहा है, चाहे वह वैवाहिक संस्था ही क्यों न हो। आजकल अंतर्राज्यीय और अंतर्जातीय विवाह जोरों पर हैं। ऐसे में माँ अगर उड़ीसा की हो और पिता आँध्रप्रदेश का रहने वाला हो तो शत प्रतिशत संभावना रहती है कि संतान बहुभाषी होंगी और निश्चित रूप से हिन्दी भी उसकी जान पहचान की भाषा होगी। यह भावना इसलिए और भी प्रबल हो जाती है क्योंकि ऐसे विवाहों की संख्या मूल रूप से शहरों में होती है और ऐसे विवाह करने वाले अधिकांश शिक्षित होते हैं। बच्चों की मातृभाषा कुछ भी हो परंतु सम्पर्क भाषा के रूप में हिन्दी की संभावना अधिक होती है। स्पष्ट है कि उड़ीसा में उसकी तेलुगु और आंध्र में उसकी उड़िया के खरीददार कम होंगे, परंतु दोनों प्रांतों में हिन्दी ज्यादा समझी और बोली जाती है।

1.2.4.6 धार्मिक स्थानों या संस्थाओं में हिन्दी का संपर्क भाषा स्वरूप

भारत में कई धर्मों के अनुयायी हैं। मुख्यतः हिन्दुओं के प्रमुख धर्म स्थानों की अगर गिनती की जाय तो कम से कम सैकड़ों स्थानों के नाम सामने आएँगे। इन स्थानों पर दिन-रात श्रद्धालुओं का ताँता लगा रहता है। ये धार्मिक स्थान देश की हर दिशा और हर कोने में हैं। निःसंदेह वहाँ उन प्रांतों की अपनी भाषाएँ हैं परंतु वहाँ जाने वाले श्रद्धालु देश के हर कोने से आते हैं। उनका निवास, खान-पान, पूजा-पाठ या कार्यक्रम तभी सुखमय और संपूर्ण हो सकता है जब उन्हें समझने वाला कोई हो या वहाँ की भाषा का ज्ञान हो। आज जितने भी प्रमुख तीर्थस्थान हैं वहाँ के पुजारी-पण्डा लोग पूजादि का सामान बेचने वाले, फल-फूल वाले, मंदिर के लिए कार्य करने वाले लोग, व्यवस्थापक एवं विभिन्न स्थानों से आने वाले श्रद्धालु में सबसे ज्यादा प्रयोग की जाने वाली संपर्क भाषा के रूप में हिन्दी ही प्रमुख है। इसका अज्ञान लोगों को संकट में डाल सकता है। इस तरह लोग हिन्दी का सम्पर्क भाषा प्रयोग उत्साहित करते हैं।

1.2.4.7 राजनीतिज्ञों की सभाओं में जन संबोधन का सम्पर्क माध्यम : हिन्दी

भारत के बड़े उद्योग संस्थानों, मजदूरों की रैलियों का नेतृत्व एवं प्रमुख रूप से महानगरों की जनता को संबोधित करने के लिए अधिकाधिक हिन्दी का प्रयोग किया जाता है। उन शहरों में कई प्रांतों के लोग निवास करते हैं और उनकी भी आपसी संपर्क भाषा अधिकांश रूप से हिन्दी ही होती है। संसद में भाषण, वाद-विवाद हिन्दी में भी होता है भले ही वक्ता का भाषण अंग्रेजी में हो रहा हो।

इस तरह से जीवन के प्रायः हर क्षेत्र में, प्रायः हर धर्म-समुदाय, जाति या स्तर का व्यक्ति कहीं न कहीं किसी-न-किसी रूप में संपर्क भाषा के रूप में हिन्दी का प्रयोग करता है। शायद हिन्दी भाषा की सरलता और सार्वजनीनता इसका प्रमुख कारण हो। इसीलिए अगर धीरे-धीरे यह केन्द्रीय प्रशासन में लाई जाय तो जनभावनाओं को चोट पहुँचाए बिना एक दिन यह इतनी प्रभावशाली हो जाएगी कि अंग्रेजी के बजाय लोग इसे ही अभिव्यक्ति का माध्यम चुनेंगे।

पूर्वोक्त बातों पर जोर देते हुए भारत के अन्य भाषा वैज्ञानिक, नेता, विद्वान एवं मनीषी आदि ने हिन्दी की संपर्क भाषा के रूप में स्थिति पर चर्चा की है। प्रायः सभी इस पक्ष में हैं कि यही वह भाषा है जो न सिर्फ़ भारतीयों बल्कि एशियाई देशों में या अन्य देशों में रह रहे एशियाई लोगों के बीच संपर्क भाषा की भूमिका का निर्वाहन कर सकती है।

निष्कर्षतः हिन्दी सम्पूर्ण राष्ट्रीय स्तर पर एक सही सम्पर्क भाषा की आवश्यकता की पूर्ति कर सकती है। दक्षिण भारत हिन्दी प्रचार सभा, हिन्दी साहित्य सम्मेलन, प्रयाग और अन्य सरकारी, गैर-सरकारी हिन्दी प्रचार संस्थाएँ देश भर में विशेषकर अहिन्दी प्रांतों में इसका प्रचार-प्रसार करती आ रही हैं। इन संस्थाओं और हिन्दी प्रचारकों को समुचित आर्थिक और रचनात्मक मदद की आवश्यकता है। देश के हर कोने में हिन्दी के ऐच्छिक पठन-पाठन हेतु और भी प्रबन्ध की आवश्यकता

है। इन कार्यक्रमों को अगर सरकारी मान्यता की स्वीकृति दी जाय तो शायद लोगों में इसे सीखने-सिखाने की ललक अधिक हो। हिन्दी का व्यावसायिक प्रयोग भी इसे बेहतर सम्पर्क भाषा का रूप दे सकता है।

1.2.5 विश्वभाषा हिन्दी

हिन्दी एक संवृद्ध भाषा है; ऐसा अगर कहा और माना जाता है तो इसके पीछे ठोस आधार है। हिन्दी का स्वरूप आज विराट है। यह ग्लोबल या वैश्विक है। 'वसुधैव कुटुम्बकम्' की भावना को पालने वाली संस्कृति की भाषा हिन्दी आज विश्व में अपना महत्वपूर्ण स्थान बनाती जा रही है। हिन्दी भाषा के विद्वान रामविलास शर्मा हिन्दी को विश्व भाषा बनाने के पीछे विभिन्न देशों को गए कुली मजदूरों के सहयोग को मानते हुए कहते हैं - ''इन्हीं हिन्दी भाषी कुली मजदूरों ने हिन्दी को विश्वभाषा बनाया है। ..... विश्वभाषा के रूप में हिन्दी का भविष्य उज्ज्वल है, साम्राज्य वादी प्रभुत्व के दिन गए।''[38] आज हिन्दी दुनिया में सैकड़ों देशों में विभिन्न स्तर पर प्रयोग में लाई जाती है। कुछ देशों में आपसी बोलचाल, आदि के लिए संपर्क भाषा के रूप में कहीं सरकारी, ग़ैरसरकारी संस्थानों में, मनोरंजन के क्षेत्र में, धर्म के क्षेत्र में एवं साहित्यिक लेखन तथा पत्रकारिता आदि के क्षेत्र में विस्तृत प्रयोग की सहभागी है।

दुनिया भर में विभिन्न रूपों में इसके प्रयोग को दृष्टिगत रखते हुए विद्वानगण कभी दूसरा तो कभी तीसरा स्थान प्रदान करते हैं। फीजी के जोगिन्दर सिंग कंवल लिखते हैं - ''हिन्दी एक अन्तर्राष्ट्रीय भाषा है जो विश्व के लगभग सभी प्रमुख विश्वविद्यालयों में पढ़ाई जाती है। उसका अब प्रयत्न विश्व के लिए है तथा वह राष्ट्र संघ की भाषा के लिए प्रयत्नशील है।''[39] इसमें संदेह नहीं कि यह सरलतम भाषाओं में सबसे सहज और वैज्ञानिक है। इसे विश्व भाषा की किसी भी कसौटी पर कस कर देखें यह निश्चित रूप से खरी उतरेगी। अन्तर्राष्ट्रीय स्तर पर हिन्दी की वर्त्तमान स्थिति का अवलोकन करते हुए हिमांशु जोशी लिखते हैं - ''विश्व की

तीसरी सबसे बड़ी भाषा कही जाती है हिन्दी। पिछली जनगणना के अनुसार भारत में हिन्दी भाषियों की कुल संख्या लगभग 46 करोड़ थी, जिसमें 19 करोड़ वे लोग थे जिनकी मातृभाषा हिन्दी न होते हुए भी, उसे उसी तरह व्यवहार में लाने की क्षमता रखते हैं जैसे मूल हिंदीभाषी। एक करोड़ बीस लाख भारतीय मूल के लोग विश्व के 132 देशों में बिखरे हुए हैं, जिनमें आधे से अधिक हिन्दी से परिचित ही नहीं उसे व्यवहार में भी लाते हैं।''[40] वे भी हिन्दी को विश्व की अग्रणी भाषाओं में हिन्दी को इसलिए मानते हैं क्योंकि इसका व्याकरण विज्ञान-संगत है।

हिन्दी पत्रकार विद्वान ए.राजेन्द्र अवस्थी भी मानते हैं कि - ''विश्व की प्रमुख भाषाओं में इसका तीसरा स्थान है। यहाँ तक पहुँचने में हिन्दी के साहित्यकारों और लेखकों ने उतना योगदान नहीं दिया जितना योगदान यहाँ से जाने वाले मजदूरों और उनके साथ जाती हुई समूची ग्रामीण संस्कृति ने दिया।''[41] भले ही प्रारंभिक विस्तार के समय मॉरिशस, ट्रिनिडाड, गयाना, दक्षिण अफ्रीका, सूरीनाम और फीजी जैसे देशों में शर्तबन्द बंधुआँ मजदूरों ने हिन्दी का पताका फहराया हो परंतु उत्तरोत्तर इंग्लैण्ड, अमेरिका, रूस, एशिया, अफ्रीका या मध्य यूरोप में जाने वाले भारतीय मजदूर नहीं थे। वे वहाँ मजबूरी में नहीं गए थे। वहाँ जाने वाले लोग, उनकी भाषाएँ और हिन्दी का स्वरूप और विस्तार कुछ भिन्न प्रकार से हुआ। आज कई विकसित और विकासशील देशों में हिन्दी भाषा का प्रयोग, साहित्य सृजन और अध्ययन-अध्यापन कार्य हो रहे हैं। इसके व्यापक विस्तार के बारे में डॉ.जयन्ती प्रसाद नौटियाल लिखते हैं - ''हिन्दी विश्व के लगभग 63 देशों में स्थान बना चुकी है। भारत के प्रायः सभी विश्वविद्यालयों में हिन्दी पढ़ाई जाती है, इसके अलावा विश्व के 110 विश्वविद्यालयों/संस्थानों में हिन्दी का अध्ययन-अध्यापन होता है।''[42] डॉ.आशा शुक्ल हिन्दी के वैश्विक स्वरूप के प्रति कुछ इस प्रकार उत्साहित दिखती हैं। वे कहती हैं - ''आज लगभग 20 देशों में भारतीय मूल के लोग रहते हैं, अप्रवासी भारतीय रहते हैं और उन बीस देशों में अधिकांश लोग हिन्दी बोल और

समझ लेते हैं। दुनिया के लगभग 153 विश्वविद्यालयों में इस समय हिन्दी पढ़ाने की व्यवस्था है।'[43] हिन्दी के इस अन्तर्राष्ट्रीय स्वरूप को वे 'आश्चर्य चकित कर देनेवाला' मानती हैं।

आज विदेश के कई देशों हिन्दी, समाज की संपर्क की भाषा, शिक्षण संस्थानों की भाषा, पत्र-पत्रिकाओं की भाषा, साहित्य सृजन की भाषा, पत्र-पत्रिकाओं की भाषा एवं साहित्य सृजन की भाषा का दायित्व निभा रही है। यह 'फीजी' में अगर 'फीजी बात' के नाम से तो सूरीनाम में 'सूरीनामी हिन्दी' के नाम से भी जानी जाती है। सूरीनाम में तो यह रोमन में भी लिखी जाती है। मॉरिशस की आम बोलचाल की भाषा में भोजपुरी शब्दों की भरमार है। इन देशों के साथ अन्य देश अमेरिका, कनाडा, इंग्लैण्ड और नेपाल आदि के साथ अरब देशों में यह खड़ी बोली के रूप में व्यवहृत होती है। साहित्य सृजन मुख्य रूप से खड़ी बोली में ही होता है। हिन्दी भाषा की वैश्विक स्थिति का विस्तृत आकलन पाँचवें अध्याय में किया गया है।

1.3 हिन्दी भाषा : स्वातन्त्र्योत्तर संदर्भ में

'स्वतंत्रता' प्राप्ति किसी भी राष्ट्र के इतिहास का स्वर्णिम संदर्भ है। इससे बढ़कर देश की वांछित इच्छा नहीं हो सकती है। स्वतंत्रता प्राप्ति के बाद भारतीय राजनीतिक, आर्थिक, सामाजिक और भाषिक साहित्यिक ढाँचे में आवश्यक परिवर्त्तन हुए। आज इस चरम उपलब्धि के सत्तावन वर्ष बीत चुके हैं। आज भारत राजनीतिक-सार्वभौमिक दृष्टि से एक स्वतंत्र भौगोलिक इकाई है। प्रशासन को सुचारु रूप से चलाने के लिए देश का भाषावार बँटवारा किया गया। आज कुल मिलाकर 22 भाषाओं को संवैधानिक मान्यता प्राप्त है। 'हिन्दी' भारतीय संघ की 'राजभाषा' है। यह सम्पर्क भाषा, मातृभाषा एवं राष्ट्रभाषा के रूप में भी एक बड़े जन समुदाय के द्वारा समादृत है।

आजादी के पूर्व और बाद में, देश के नेताओं, विद्वानों एवं साहित्यकारों द्वारा हिन्दी को सर्वाधिक जिम्मेदार भाषा मानकर, इसका प्रयोग करने एवं प्रचार-प्रसार

करने पर बल दिया गया। हिन्दी विद्वान डॉ.श्रीलाल शुक्ल 'आजादी के बाद हिन्दी' शीर्षक पर विचार करते हुए लिखते हैं - ''हिन्दी स्वतंत्रता आन्दोलन की भाषा थी। बीसवीं सदी के आरंभ में अनेक लोगों ने बचपन में हिन्दी भाषा इसलिए सीखी थी कि वे स्वतंत्रता आन्दोलन में भागीदार हो सकें। वह समय ऐसा था जब हिन्दी के समर्थक और प्रशंसक देश के कोने-कोने में विद्यमान थे। चक्रवर्ती राजगोपालाचारी, गोपालस्वामी अय्यंगार, कन्हैयालाल माणिक लाल मुन्शी, महात्मा गाँधी, रवीन्द्रनाथ ठाकुर, दयानन्द सरस्वती, केशव चंद्र अदि अनेक ऐसे विद्वान और मनीषी हुए जिन्होंने हिन्दी के प्रचार प्रसार में अविस्मरणीय योगदान किया।''[44]

इस तरह आजादी के बाद भी हिन्दी अधिकांश भाषणों, सम्मेलनों और अन्तर्प्रांतीय अधिवेशनों आदि में व्यवहृत होती रही है। इससे सहमत, पूर्व कांग्रेस अध्यक्ष एवं कर्मठ नेता श्री सीताराम केसरी स्वीकार करते हैं कि ''मेरा मानना है कि आजादी से पहले हिन्दी प्रगति पर थी। हिन्दी पत्रकारिता भी समृद्ध स्थिति में थी लेकिन आज उलट स्थिति है।''[45] परंतु अधिकाधिक लोग काफ़ी आशान्वित और आश्वस्त दिखाई पड़ते हैं। हिन्दी के युवा कथाकार अशोक गुप्ता कहते हैं ''कुल जमा, हिन्दी जहाँ है, वहाँ तो रहेगी और खूब रहेगी क्योंकि वह हमारे जन जीवन की भाषा है और दूसरे अस्तित्व के प्रति चिंता करने का कोई औचित्य नहीं है।''[46] उन्हें यह बात ज़रूर सालती है कि लोगों में हिन्दी के प्रति गौरव की भावना नहीं है। इसके पीछे कहीं न कहीं सरकार का लचीलापन भी ज़िम्मेदार दिखता है। इसीलिए राजभाषा हिन्दी के संवेदनशील प्रश्न को राष्ट्रीय स्तर पर जोर शोर से उठाने और कार्यान्वित करने में सरकार एवं अन्य राजनीतिक पार्टियों की दुर्बलता और अस्थिरता स्पष्ट दिखाई पड़ती है। दुख की बात तो यह है कि कुछ लोग जो पहले हिन्दी के हिमायती थे अब निजी स्वार्थ हेतु कुछ और ही कहने लगे हैं। स्वतंत्रता पश्चात् हिन्दी भाषा प्रायः हर रूप में सफल और अग्रगामी रही है। कुछेक अवरोधों के बावजूद उसका विकास मार्ग प्रशस्त है।

हिन्दी भाषा का संबध हमेशा ही अंग्रेजी के साथ रहा है चाहे प्रतिद्वन्द्विता का

हो चाहे सह-अस्तित्व का। स्वातंत्र्योत्तर हिन्दी भाषा और साहित्य का विकास निरंतर गति से हो रहा है। यह विकास परिमाण और गुण दोनों दृष्टि से पर्याप्त रहा है। हिन्दी विद्वान डॉ श्रीप्रकाश शुक्ल हिन्दी के वर्त्तमान एवं भावी स्वरूप को लेकर आश्वस्त हैं और गर्व से कहते हैं - ''इन पाँच दशकों में हिन्दी की पहचान बढ़ी है। हिन्दी क्षेत्रों के अलावा अहिन्दी भाषी भाषी क्षेत्रों में भी हिन्दी अपनाई गई है, भले ही वह व्याकरण की दृष्टि से खरी न हो। बंबइया हिन्दी, कलकतिया हिन्दी इसके प्रमाण हैं। स्वतंत्रता के बाद अंग्रेजी की तुलना में हिन्दी के प्रयोग को लेकर हीनता बोध धीरे-धीरे कम हुआ है।''[47]

निश्चित रूप से संख्या की दृष्टि से हिन्दी भाषा प्रयोग करने वालों की संख्या बढ़ रही है। यह जीवन के प्रत्येक क्षेत्र में अपनी पहुँच बना रही है। सरकारी स्तर पर भी यह प्रयास किया गया है कि इसका विकास हो। बाध्यता के कारण दफ़्तरों-कार्यालयों में इसका नित्य प्रयोग हो रहा है। इसके पीछे अगर इच्छाशक्ति थोड़ी दृढ़ हो तो यह कार्य सही रूप से संपन्न किया जा सकता। अनुवाद की परम्परा कहीं न कहीं हिन्दी को सख्त और सीमित कर रही है। इसके सरलीकरण की आवश्यकता है।

यह प्रयोग क्षेत्रीय भाषिक-शब्दों और अगर नितान्त आवश्यक हो तो अंग्रेजी के शब्दों को भी लेकर भी किया जा सकता है। उदाहरण के लिए कम्प्यूटर, इंटरनेट, रेडियो, रेलवे, गारंटी आदि शब्दों का मूल रूप ही आसान लगता है। अंग्रेजी में भी हिन्दी समेत अन्य भाषाओं के शब्द समाहित हैं। भाषा जितनी ही सरल होगी प्रयोग उतना ही विस्तृत होने की संभावना होगी। भारत में अंग्रेजी के जानकारों का प्रतिशत भले ही कामोवेश दो करोड़ के आसपास हो परन्तु उसका 'हव्वा' या दबदबा इतना ज़्यादा है कि वह हिन्दी जैसी भाषा, जिसका प्रयोग भारत की अधिकांश जनता करती है; से प्रतिद्वन्द्विता कर रही है। इसके पीछे अंग्रेजी में संचार माध्यम, पत्र-पत्रिकाएँ एवं इलेक्ट्रानिक मीडिया प्रमुख अपना रोल अदा कर रही है। बहुराष्ट्रीय कम्पनियों का आगमन, उच्च शिक्षा संस्थान, विश्वविद्यालय,

इंटरनेट और टी.वी. चैनलों की क्रांति के रूख को अगर ध्यानपूर्वक हिन्दी के पक्ष में मोड़ा जाय तो हिन्दी का स्वरूप शीघ्रातिशीघ्र विराट रूप धारण कर सकता है।

साहित्य के क्षेत्र में विविधता की भरमार हुई है। काव्य जगत और गद्य जगत दोनों में प्रचुर मात्रा में रचना हुई है। गद्य का स्वरूप कुछ अधिक सशक्त दिखाई पड़ता है। जबकि पद्य में अभी भी छायावाद और प्रगति-प्रयोगवाद की रचनाओं का ही दबदबा है। अधिकांश नामी-गिरामी लेखक-कवि जो हमारे सामने आते हैं उन्होंने स्वतन्त्रतापूर्व ही रचना कर्म आरंभ कर दिया था। कहानी, बाल कथाएँ, लघु कथाएँ, व्यंग्य कथाएँ, उपन्यास, एकांकी, नाटक, निबन्ध, लेख, वार्तालाप संस्मरण-रेखाचित्र, यात्रा वृत्तांत, जीवनी एवं आत्मकथा आदि प्रमुख गद्य विधाएँ रही हैं। काव्य विधाओं में उतनी विविधता या शास्त्रीयता प्रभावित नहीं कर पाती जो स्वाधीनता पूर्व थी। पत्रकारिता की दृष्टि में यह अंग्रेजी के साथ प्रतिद्वन्द्विता में लगी हुई है। यहाँ इसे सहारे की आवश्यकता है। कुल मिलाकर स्वातंत्र्योत्तर हिन्दी रचना जगत् गुण और संख्या की दृष्टि में विश्व साहित्य की तुलना में निरंतर सम्वृद्धि की ओर बढ़ रहा है।

स्वातंत्र्योत्तर काल के प्रमुख कवियों में सुमित्रानंदन पंत, महादेवी वर्मा, हरिवंशराय 'बच्चन', रामधारी सिंह 'दिनकर', नागार्जुन, शिवमंगलसिंह 'सुमन', रामेश्वर शुक्ल अंचल, मुक्तिबोध, त्रिलोचन, अज्ञेय, भवानी प्रसाद मिश्र, धर्मवीर भारती, सर्वेश्वर दयाल सक्सेना, केदारनाथ सिंह, अशोक वाजपेयी आदि का नाम लिया जा सकता है। गद्य लेखन बहुत विकसित और प्रौढ़ विधा होने के कारण इसमें लेखकों की भरमार है। कहानीकारों में विष्णु प्रभाकर, मन्नू भण्डारी, उषा प्रियंवदा, कृष्णा सोबती, रांगेय राघव, कमलेश्वर, मोहन राकेश, निर्मल वर्मा, राजेन्द्र यादव, हिमांशु जोशी आदि का नाम लिया जा सकता है। उपन्यास लेखन के क्षेत्र में सच्चिदानंद हीरानंद वात्सायन 'अज्ञेय', जैनेन्द्र कुमार, यशपाल, इलाचन्द्र जोशी, भगवतीचरण वर्मा, अमृतलाल नागर, फणीश्वरनाथ 'रेणु', श्रीलाल शुक्ल, मनोहर

श्याम जोशी आदि प्रमुख हैं। लेखकों की जो नई पौध आ रही है वे सभी विधाओं में उत्तम रचनाएँ कर रहे हैं। उनका धरातल भी सर्जनात्मक एवं विस्तृत है। स्वातंत्र्योत्तर हिन्दी भाषा और साहित्य के विकसित स्वरूप को देखकर हिन्दी की अन्तर्राष्ट्रीयता एवं विश्व में इसकी सुदृढ़ स्थिति की बात दिवास्वप्न नहीं लगती। अन्तर्राष्ट्रीय स्तर पर राजनीतिक-कूटनीतिक, आर्थिक, सर्जनात्मक और वैज्ञानिक स्तर पर भारत जितना बड़ा हिस्सेदार बनेगा, हिन्दी विश्व परिवार में उतने ही ज्यादा सम्मान की हकदार होगी।

इस तरह हिन्दी भाषा का स्वातंत्र्योत्तर काल संघर्षपूर्ण विविधताओं से भरा है। संविधान में 14 सितंबर 1949 के दिन राजभाषा घोषित होने से लेकर आज तक कई संशोधन हो चुके हैं। सन् 1963 के राजभाषा नियम के संशोधन में इसे वह रूप प्राप्त नहीं हो सका जो संविधान के द्वारा निर्धारित किया गया था। सन् 1963 के राजभाषा नियमों के संशोधन का असर आज तक राजभाषा पर हावी है। संविधान में इसके विकास की जो बात मानी गई थी, वह पूरी नहीं हो सकी। सन् 1965 में जिस अंग्रेजी को राजभाषा हिन्दी द्वारा विस्थापित किया जाना था वह आज तक हिन्दी को ही परोक्ष रूप से विस्थापित किए हुए हैं। सन् 1976 और 1987 के संशोधित राजभाषा नियम, इसके प्रयोग और प्रसार का जो कार्य निर्धारित किया गया था वह भी सही रूप से अनुपालित हुआ है या नहीं विचार के योग्य है। निश्चित रूप से भारतीय प्रशासन व्यवस्था में हिन्दी का संघर्ष भारतीय भाषाओं में नहीं बल्कि अंग्रेजी से है और वह बरकरार रहेगा। कब तक? यह तो कहना संभव नहीं।

भले ही भारत सरकार और उसके भाषा संबंधी पंगु नियम पिछले छः दशकों में हिन्दी का भला न कर पाए हो परन्तु भूमण्डलीकण एवं प्रवासी भारतीयों का सांस्कृतिक प्रेम इसके वैश्विक विकास में सहभागी रहा है। भारत एक विशिष्ट आर्थिक बाजार है यह बात कोई भी बहुराष्ट्रीय कंपनी नज़रअंदाज नहीं कर सकती।

उन्हें यह भी मालूम है कि मुश्किल से भारत की दो-तीन प्रतिशत जनता अंग्रेजी जानती है या उसका प्रयोग करती है। विज्ञापन जगत विभिन्न उत्पादों के प्रचार के साथ खिचड़ी रूप में ही सही किन्तु हिन्दी भाषा को भी करोड़-करोड लोगों के सामने परोसता है। मीडिया, दूरदर्शन, रेडियो, फिल्में आदि के सहारे हिन्दी भाषा जबर्दस्त रूप से बढ़ रही है। अतः कुछ अनिश्चितताओं के बावजूद भी हिन्दी का विकास भविष्य में अवश्यंभावी है।

* * *

संदर्भ सूची

1. भाषा विज्ञान, डॉ.भोलानाथ तिवारी पृ.सं.189,
2. वही पृ. 189,
3. भारतीय साहित्य का समेकित इतिहास, डॉ.नगेन्द्र पृ. 81,
4. हिन्दी के विकास में अपभ्रंश का योगदान, डॉ.नामवर सिंह पृ. 101,
5. हिन्दी के विकास में अपभ्रंश का योगदान, डॉ.नामवर सिंह पृ. 103,
6. भाषा विज्ञान, डॉ. भोलानाथ तिवारी पृ. 206,
7. वही पृ. 206,
8 गगनांचल, जुलाई-सितंबर, 1999 पृ. 19-20.
9. (प्राक्कथन से उद्धृत) हिन्दी के प्राचीन प्रतिनिधि कवि : द्वारिका प्रसाद सक्सेना,
10 गगनांचल, विश्व हिन्दी अंक, अक्तूबर-दिसंबर, 1993. पृ. 47.
11. बारहवीं शताब्दी के राजकाज में हिन्दी, रामबाबू शर्मा पृ. 47.
12. वही पृ. 53.
13. वही पृ. 53.
14. वही पृ. 116.
15. वही पृ. 1.
16. वही पृ. 42.
17 हिन्दी भाषा और साहित्य का इतिहास, डॉ.भगवती शरण चतुर्वेदी पृ. 94.
18. राष्ट्रभाषा के संघर्ष भरे पच्चीस वर्ष, सं.कैलाश जोशी पृ. 51.
19. वही पृ. 76.
20. कादम्बिनी हिन्दी मासिक पत्रिका, नवंबर, 1983 पृ. 29.
21. वही पृ. 29.
22. भाषा विज्ञान, भोलानाथ तिवारी पृ. 87.
23. वही पृ. 87.
24. गगनांचल, अक्तूबर-दिसंबर, 1993 पृ. 176.
25. वही पृ. 195.
26. वही पृ. 195.
27. राष्ट्रभाषा के पच्चीस वर्ष, कैलाश जोशी पृ. 109.
28. वही पृ. 99.
29 The Official Language of the Union shall be hindi in Devanagari Script. The Form of numerals to be used for offical purposes of the union shall be the international form of Indian numerals. (Language movements in India : Conferences an d seminar series-5, Edited by E.Annamalai) पृ. 84.
30. गगनांचल, जुलाई-नवंबर, 1999. पृ. 77.
31. वही पृ. 77.
32 दक्षिण समाचार, हिन्दी साप्ताहिक, हैदराबाद, नवंबर11,1999
33 स्मारिका सातवाँ विश्व हिन्दी सम्मेलन 5-9 जून, 2003 सूरीनाम पृ. 68.
34. वही पृ. 69-70.
35. स्पीचेज ऑफ प्रेसीडेन्ट वी.वी.गिरि, खण्ड-2 (अनुवादित) पृ. 149,

36. हिन्दी मत अभिमत, विमलेश कान्ति वर्मा पृ. 91,
37. वही पृ. 91,
38. वही पृ. 99,
39. वही पृ. 98,
40. गगनांचल, जुलाई-सितंबर, 1999 पृ. 37,
41. स्मारिका : सातवाँ विश्व हिन्दी सम्मेलन, 5-9 जून, 2003 पृ. 79,
42. राष्ट्रभाषा, जनवरी, 2002 पृ. 7,
43. राष्ट्रभाषा, अगस्त, 2003 पृ. 10,
44. गगनांचल, जुलाई-सितंबर, 1999 पृ. 180,
45. वही पृ. 35,
46. वही पृ. 197
47. वही पृ. 182,

द्वितीय अध्याय

विदेशों में हिन्दी का स्वरूप

हिन्दी का भौगोलिक दायरा दिनोंदिन बढ़ता जा रहा है। एक आधुनिक भारतीय भाषा के रूप में हिन्दी की उम्र सहस्त्र वर्ष हो चुकी है। भारतीय गणराज्य की सीमा के बाहर हिन्दी का गमन मुख्य रूप से 1834ई. से माना जा सकता है। इस वर्ष गिरमिटियों का प्रथम दल भारत से मॉरिशस पहुँचा था। इससे पूर्व शायद ही कभी एक साथ इतनी बड़ी संख्या में भारतीय प्रवासी बनकर देश के बाहर गए हैं। तब से लेकर आज तक दुनिया भर के कई देशों में कई कारणों से करोड़ों भारतीय विदेशों में बसते रहे हैं। उन लोगों में उत्तर भारतीयों की तादाद कहीं अधिक रही है। इस तरह से उनके साथ उनकी भाषाएँ, मुख्य रूप से हिंदी उनके परदेश निवास में उनके साथ रही। भारतीय बधुआ मजदूरों के मॉरिशस गमन के आज एक सौ पैंसठ वर्ष बीत चुके हैं। इसके बाद गयाना, फीजी, सूरीनाम, ट्रिनिडाड, दक्षिण अफ्रीका आदि देशों में भारतीय मजदूर शर्तबन्द प्रथा के तहत गए। हिन्दी प्रदेशों से, और प्रायः निरक्षर होने के कारण अधिकांश मजदूर अपनी बोली-भाषा छोड़कर विदेशी भाषाओं को नहीं सीख सके और सीखने में उतनी रुचि भी नहीं दिखाई। इस तरह उन्हें दूसरी भाषा का ज्ञान नहीं था और जिन्हें थोड़ा-बहुत था भी उन्हें इससे कोई ख़ास सरोकार नहीं था। उत्तरोत्तर हिन्दीतर भाषाएँ सीखने की स्थिति में होने के बाद भी उन देशों में हिन्दी की धारा बहती रही है। निश्चित रूप से इसका कारण उन लाखों भारतीय पूर्वजों का हिन्दी के प्रति निष्ठा का भाव भी है। वहाँ के निवासी होने के बाद धीरे-धीरे वे बहुभाषी बने, परंतु उनकी हिंदी और हिंदी के माध्यम से भारत निष्ठा बनी रही। इस तरह मुख्य रूप में अथवा बीज रूप में दूसरी धरती पर हिंदी का पौधा गिरमिटियों ने बोया। हिंदी को विश्व का स्तर प्रदान करवाने में भारतीय मूल के लोगों और प्रवासी भारतीयों का

महत्वपूर्ण योगदान है। इसी बात पर ज़ोर देते हुए 'विश्व साहित्य संस्कृति संस्थान' से जुड़े श्री लल्लन प्रसाद व्यास कहते हैं ''विश्व में प्रवासी भारतीयों या भारत वंशी लोगों में हिन्दी प्रचार-प्रसार की दो धाराएँ प्रवाहित हुईं - एक तो उनमें जो गत शताब्दी में निर्धन मजदूर और कुली बनकर भारत से विभिन्न देशों में गए तथा दूसरी उनमें जो इसी शताब्दी में विभिन्न देशों में जाकर बस गए और जो अभी भी प्रवासी भारतीय हैं। यानी उनकी राष्ट्रीयता भारत की है। बाद वाली धारा में कुछ ऐसे सम्पन्न व्यापारी और अन्य समृद्धशाली पेशों के लोग भी हैं जिन्होंने भारत की राष्ट्रीयता छोड़कर स्थानीय राष्ट्रीयता ग्रहण कर ली है।''[1] आरम्भ में प्रायः एक सदी तक वैश्विक स्तर पर हिन्दी का स्थान असुरक्षित माना जाता था क्योंकि यह असंगठित निरक्षर लोगों की अगठित और अव्यवस्थित भाषा मानी जाती थी। इसलिए शासक वर्ग को हिन्दी का व्यवहार अमान्य था। धीरे-धीरे उन देशों के भारतीयों की सामाजिक, राजनीतिक आर्थिक स्थिति में बदलाव आने लगा और इसके साथ हिन्दी के स्वरूप में भी परिवर्तन आया। कहीं-न-कहीं यह परिवर्तन पराधीन भारत के राजनीतिक परिवर्तन के साथ भी जुड़ा रहा। भारतीय स्वाधीनता संग्राम के साथ जुड़ने पर हिन्दी जिस प्रकार गौरवान्वित हुई, उसी प्रकार उन देशों के लोगों के राजनीतिक संघर्ष में हिन्दी सहायक रही। कुछ ऐसे राष्ट्र जहाँ भारतीय लोग मजदूर बनकर नहीं बल्कि व्यवसाय, नौकरी या अन्य कारणों से बस गए थे, उन्होंने किसी न किसी तरह भारतीय स्वाधीनता संघर्ष में भी आवश्यक योगदान किया। लल्लन प्रसाद व्यास द्वारा लिखित लेख 'प्रवासी भारतीय : विश्व हिन्दी में प्रचार-प्रसार' में कहा गया है कि ''थाइलैण्ड, बर्मा, मलेशिया और सिंगापुर के भारतीयों ने तो सुभाष चन्द्रबोस के साथ भारतीय स्वाधीनता के लिए कदम से कदम मिलाकर संघर्ष भी किया। महात्मा गाँधी राष्ट्रभाषा की शक्ति के साथ प्रवासी भारतीयों की क्षमता से भी परिचित थे। इसीलिए उन्होंने कांग्रेस के अन्दर अन्य मोर्चों के साथ प्रवासी भारतीयों का मोर्चा भी क़ायम किया तथा अपने अनेक विश्वस्त कार्यकर्त्ताओं को प्रवासी भारतीयों के लिए काम करने भेजा। उन्होने .....

मॉरिशस जैसे देशों में जाकर प्रवासी भारतीयों को राष्ट्रीय स्वतन्त्रता और राष्ट्रभाषा हिन्दी के लिए संघर्ष और सहयोग करने की प्रेरणा दी।''[२] मॉरिशस, ट्रिनिडाड, गयाना, फीजी और सूरीनाम ऐसे देश हैं जहाँ हिन्दी भारतीय मजदूरों की अपनी ज़बान या भाषा थी और आज भी वहाँ अपनी सही पहचान और समादृत स्थान पाने के लिए संघर्षरत है। गिरमिटिया मजदूरों के देशों के अतिरिक्त भी भारतीय अमेरिका, यूरोप, एशिया व अफ्रीका जैसे महाद्वीपों को गए। इन महाद्वीपों के कई देशों में भारतीय मूल के विशेषकर हिन्दी बोलने और समझने वाले लोग मिलेंगे। ये लोग वहाँ कुशल डॉक्टर, इंजीनियर, कलाकार, व्यवसायी, संचार माध्यमों के संवाददाता, तथा अन्य छोटी-बड़ी सरकारी व गैर सरकारी बहुराष्ट्रीय कम्पनियों में कार्य करने गए। वहाँ उन्होंने अपने-अपने क्षेत्रों में ख्याति अर्जित की और अन्ततः वहीं बस गए। ऐतिहासिक एवं भौगोलिक कारणों से नेपाल, बर्मा, पाकिस्तान, बंग्लादेश, श्रीलंका, मलेशिया, सिंगापुर - जैसे देशों में हिन्दी का कामोबेश प्रचलन दिखाई देता है।

इस तरह दुनिया के सैकड़ों देशों में भारतीय और भारतीय मूल के व्यक्ति मिलेंगे। इन देशों में हिन्दी के साथ-साथ अन्य भारतीय भाषाओं का प्रयोग भी देखा जा सकता है। इन सबके अलावा यह बात भी तलब है कि हिन्दी की वैश्विक स्थिति मात्र भारतीयों की उपस्थिति से ही सम्भव नहीं हुई है। इसमें उपनिवेशवादी जमाने की सरकारों के अंग्रेज कर्मचारी, उन देशों की आम जनता और अब वहाँ की सरकारों, अन्य देशीय या भारतीय सरकारी और गैर सरकारी संस्थाओं का भी हाथ रहा है। भाषा सामाजिक अभिव्यक्ति का माध्यम है। शासित और शासक, कलाकार और श्रोता, लेखक और पाठक, व्यवसायी और ग्राहक, मालिक और नौकर, शिक्षक और शिक्षार्थी आदि सभी इसी समाज के हिस्से हैं। एक समुदाय का ज्ञान, कार्य, भाषा, आदि दूसरे को भी प्रभावित करता है। ऐसा हिन्दी और हिन्दी भाषा समुदाय के साथ भी हुआ। इस तरह किन्हीं अंशों में यह अन्य भाषा-भाषियों के प्रयोग की वस्तु भी बनी। भाषा की सम्पन्नता, उस भाषा भाषी समुदाय की सामाजिक सम्पन्नता

और स्तर पर भी निर्भर करती है। इसके रूप का प्रतिफलन गिरमिटिया व अन्य भारतीयों के देशों में उनकी बदली हुई सामाजिक प्रतिष्ठा को उनकी भाषिक सम्पन्नता के साथ जोड़कर देखा जा सकता है। यह अफ्रीका, यूरोप, अमेरिका, आस्ट्रेलिया एवं एशिया आदि सभी जगहों पर कामोबेश रूप में दिखाई पड़ता है।

वर्त्तमान समय में विश्व के बड़े समुदाय की भाषा होने के कारण भारतीयों के अलावा विदेशियों का भी हिन्दी के प्रति रुझान या दिलचस्पी होना स्वाभाविक है। दुनिया भर में हिन्दी का प्रयोग विविध रूपों में भिन्न-भिन्न स्तरों पर होता रहा है। पिछले डेढ़ सौ सालों के वैश्विक अस्तित्व में पहले सौ साल तक इसकी दशा और दिशा अनिश्चित थीं। स्वाधीनता प्राप्ति के बाद, भारत जब विश्व का सबसे बड़ा गणतान्त्रिक देश बना, तब से अन्तर्राष्ट्रीय स्तर पर भारतीयों, उनकी संस्कृति और भारतीय भाषाओं की एक भी नई पहचान बनी। दुनिया भर में इसका प्रचार-प्रसार बढ़ा। अनेक देशों ने भारतीय भाषाओं विशेषकर हिन्दी में अधिकाधिक रुचि दिखाई। भारतीय संविधान द्वारा इसे राजभाषा और राष्ट्रभाषा का दर्जा प्राप्त हुआ। इससे भारत की अपनी भाषानीति पर कितना असर पड़ा यह भले ही विचारणीय हो परन्तु दुनिया के अन्य देशों में इसका व्यापक प्रभाव पड़ा। यह वहाँ पठन-पाठन के साथ-साथ अन्य स्तरों पर भी मान्यता पाने लगी। हिन्दी, हिन्दी समुदाय से निकलकर वैश्विक संस्थाओं तक पहुँची। इस तरह बीसवीं सदी के उत्तरार्द्ध में भाषा के साथ-साथ हिन्दी साहित्य का भी वैश्विक विकास हुआ। इसकी पुस्तकें प्रचलित हुईं, पढ़ी गईं और विभिन्न भाषाओं में अनूदित की गयीं। आज यह भारत के अलावा दुनिया के कई प्रान्तों में संचार माध्यमों, मनोरंजन और सम्पर्क भाषा होने के साथ-साथ विद्यालयों, महाविद्यालयों और विश्वविद्यालयों में पढ़ाई जाने वाली भाषा है। इसमें शोधकार्य भी शामिल हैं। इस तरह इसके अध्ययन-अध्यापन की सीमा का भी विस्तार हुआ है। एशिया के कुछ देश जैसे पाकिस्तान, भूटान, नेपाल, म्यांमार, श्रीलंका आदि में भी इसे जानने-समझने वाले लोग मिलते हैं। 'हिन्दी भाषा एवं

साहित्य का इतिहास' नामक पुस्तक के लेखक डॉ.भगवत शरत चतुर्वेदी हिन्दी के वर्त्तमान अन्तर्राष्ट्रीय स्वरूप का आकलन करते हुए काफ़ी आशान्वित लगते हैं - ''विश्व के बौद्धिक और चेतनाशील वर्ग को संयुक्त एवं तारतम्य में रखने का दुरूह कार्य जो भाषा सम्पन्न करती है, वह अन्तर्राष्ट्रीय भाषा के नाम से सम्बोधित होती है। अंग्रेजों द्वारा विशाल भूखण्ड पर आधिपत्य करने के कारण आज अंग्रेजी भाषा अन्तर्राष्ट्रीय भाषा के रूप में कार्य में आ रही है। किन्तु हिन्दी भी विभिन्न देशों का अपनी सरसता, भाव गम्भीरता तथा सौष्ठव के कारण संरक्षण प्राप्त कर रही है। रूस, ब्रिटेन, फ़्रांस और अमेरिका जैसे सम्पन्न,समृद्ध और अग्रणी राज्य भी हिन्दी के महत्व को स्वीकार कर चुके हैं। इसलिए बहुत सम्भव है विदेशी आधिपत्य की प्रतीक अंग्रेजी भाषा के स्थान पर अथवा उसकी सहभागिनी बनकर हिन्दी भी शीघ्र ही अन्तर्राष्ट्रीय भाषा का रूप ग्रहण कर लें।''[३] प्रायः तीस वर्ष पहले किया गया उनका यह आकलन आज भी प्रासंगिक है। इससे यह बात भी साबित होती है कि राजनीतिक सत्ता अथवा आधिपत्य भाषा के विकास या ह्रास के लिए भी उत्तरदायी है।

कोई भी भाषा अपने-आप में साम्प्रदायिक नहीं होती बल्कि यह देश या जाति की सांस्कृतिक पहचान है। आज विदेश में रहने वाले अधिकांश भारतीय, चाहे वे किसी भी साम्प्रदाय के हों, बहुभाषी हैं। यह बहुभाषा का ज्ञान उन्हें संस्कारगत रूप से प्राप्त हुआ है। हिन्दी का संस्कार भी बहुभाषी है। भारतीय भाषाओं में पाई जाने वाली सामाजिक और वैचारिक समानता भी इस संस्कार का कारण है। विदेश में गए भारतीयों, विशेषकर हिन्दुओं में, हिन्दी के स्रोत के रूप में सर्वदा ऊर्जा प्रदान करने वाले ग्रन्थों और पुस्तकों में रामचरित मानस, हनुमान चालीसा, तोता मैना की कहानी, विक्रम बेताल और रानी सारंगा की कहानियाँ आदि प्रमुख हैं। प्रसिद्ध विद्वान और लेखक कैलाश चन्द्र पन्त मानते हैं कि ''अपनी जमीन से उखड़े हुए गिरमिटियों ने रामचरित मानस और हनुमान चालीसा के सहारे दासत्व की पीडादायक दिन गुजारे। राम से जुड़े देश के इन आस्थावान लोगों ने भारत की

भाषा और संस्कृति से अपने-अपने रिश्तों को सुरक्षित रखा।"[4] विदेशों में आरम्भिक हिन्दी का इतिहास परिश्रमी कन्धों पर टिका हुआ है। पहले यह गिरमिटिया मजदूरों की भाषा थी। अब यह कई देशों के राष्ट्राध्यक्षों और शासकों की भी भाषा हो गई। पहले जो अनपढ़ मजदूरों की भाषा थी आज एक लम्बा सफ़र तय करने के बाद स्कूलों-कॉलेजों एवं अन्य शिक्षण संस्थानों में भी जा पहुँची है। भारत में हिन्दी की स्थिति बहुत सुखदायी न हो परन्तु निरन्तर देश के भीतर और बाहर यह अपना स्थान बनाने की जी तोड़ कोशिश कर रही है। 19वीं और 20वीं सदी के आरंभ में हिन्दी का विकास अगर श्रमिकों के संघर्ष से संभव रहा है तो आज और आने वाले दिनों में उसका विकास नई पीढ़ी एवं भारत से बाहर जाने वाले शिक्षित, बुद्धिमान विद्यार्थियों,नौकरीशुदा लोग और देशप्रेमी व्यवसायियों के कन्धों पर है। दुनिया आज एक गाँव के समान है। तकनीकी सुविधाओं एवं कम्प्यूटरीकृत भारत अगर चाहे तो इस दिशा में मजबूत प्रयास कर सकता है। बाहर जाने वाली आजाद भारत की नई पीढ़ी ने वैश्वीकरण की आँधी के बावजूद भी हिन्दी की श्रीवृद्धि में बढोत्तरी की है। यह वृद्धि भी भाषा और साहित्य दोनों स्तरों पर हुई है। हिन्दी के भावी विकास में इसका वैज्ञानिक भाषा होना भी कारगर होगा। आगे आगे चलकर इसका वैश्विक आधार उतना ही मजबूत होगा जितना इसके वैज्ञानिक होने के प्रमाण को प्रचारित और प्रसारित किया जाएगा। इसकी वैज्ञानिकता इसकी ऊर्जा है। यही ऊर्जा इसकी परिधि का दायरा विस्तृत करने में सहायक बन सकती है। इस तरह विश्व के सैकड़ों देशों में बसे करोड़ों प्रवासी भारतीयों का समाज हिन्दी के अन्तर्राष्ट्रीय स्वरूप के विकास का वाहक है। उसने वहाँ इसकी नई शैलियाँ विकसित की हैं और भाषा को नया स्वरूप प्रदान किया है।

2.1अंग्रेजी शासन में गिरमिटिया मजदूरों की भर्ती

(मॉरिशस, ट्रिनिडाड, गयाना, फीजी, दक्षिण अफ्रीका और सूरीनाम के सन्दर्भ में)

किस्से कहानियों या फिर अन्य उपलब्ध माध्यमों द्वारा प्राप्त सूचनाओं के

आधार पर लिखे गए इतिहास से पता चलता है कि अंग्रेजों के साम्राज्य विस्तार के सिलसिले में भारत आगमन से पहले प्रवासीकरण नाममात्र को ही था। प्राचीन काल से ही ग्रामीण भारतीयों का अपनी धरती और जन्मभूमि से अभिन्न लगाव रहता आया है। भारत मुख्य रूप से गाँवों का देश रहा है। पहले गाँव एक इकाई के रूप में आत्मनिर्भर हुआ करते थे। ग्रामीण लोग शायद ही विस्थापित होकर दूसरी जगह या नगर जाना पसन्द करते थे, देश से बाहर जाने की बात तो बहुत दूर थी। इसके दो कारण ही माने जा सकते हैं - पहला अपनी परम्परा तथा अपने लोगों से गहरा पारिवारिक एवं सामाजिक लगाव, दूसरा आर्थिक स्व-निर्भरता। शायद इसीलिए उन्हें घर से बाहर जाने की आवश्यकता प्रायः नहीं पड़ी।

औद्योगिकीकरण ने आधुनिकता की परिभाषा रची। अन्य देशों के साथ-साथ भारत-जैसे कृषि-निर्भर देशों पर भी इसका असर प्रत्यक्ष या अप्रत्यक्ष रूप से हुआ। यह असर यूरोपीय, विशेषकर अंग्रेजी, उपनिवेशवाद की शुरुआत से पड़ने लगा। देश की बढ़ती जनसंख्या, अंग्रेजों का कुशासन और प्रकृति के प्रकोप (बाढ़, सूखा, भूकंप, तूफ़ान) इत्यादि ऐसे कारण थे जिन्होंने ग्रामीण से उनका गाँव और कइयों से उनका देश छुड़वा दिया। जमीन्दारों और साहुकारों ने रही-सही कसर भी पूरी कर दी थी जिससे ग्रामीण भूमिहीन कृषक को मजदूरों को रोटी के जुगाड़ में दर-दर भटकने को मजबूर होना पड़ा।

इस तरह आधुनिक युग में भारतीयों का प्रारंभिक विदेश-प्रवास अंग्रेजी उपनिवेशवाद की देन है। इसके पीछे मूल कारण आर्थिक था। भारतीय मजदूरों को प्रवास के लिए मजबूर कर देने के पीछे अंग्रेजों या डचों की अपनी साम्राज्य- लिप्सा थी। 19वीं सदी में दास-प्रथा की समाप्ति की घोषणा के साथ पश्चिमी देशों ने विकल्प के तौर पर भारत जैसे देशों से शर्तबन्द मजदूर अथवा कुली-प्रथा की शुरुआत की।

अंग्रेजी उपनिवेशवाद का शिकंजा बहुत विस्तृत था। उनके शिकंजे में फसे देशों के शोषण के रूप अलग- अलग और भयानक थे। अंग्रेजों ने दुनिया के कई देशों और द्वीपों पर राज्य क़ायम किया। अफ्रीका और एशिया के अनेक देश उनके शोषण की चक्की में पिसने के निकृष्ट उदाहरण हैं। इनमें मॉरिशस, फीजी, ट्रिनिडाड, गयाना तथा दक्षिण अफ्रीका जैसे देश प्रमुख थे। इन उपनिवेशी ताकतों में फ्रांस और डच सरकार भी थी। सूरीनाम आज एक ऐसा आजाद देश है जो डचों का देश हुआ करता था। इन देशों में दास प्रथा की समाप्ति की घोषणा से वहाँ काम करने के लिए बड़ी संख्या में मजदूरों की आवश्यकता पड़ी। वहाँ के मूल निवासी या तो आक्रमणकारियों से युद्ध में लड़ मरे या वे इतने अधिक पिछड़े थे कि खेती-बारी और कल-कारख़ानों के कार्य नहीं सँभाल सकते थे। अधिकांश जगहों के मूल निवासी या जनजतियाँ आक्रमणकारियों की कोप दृष्टि का शिकार होकर अमेरिका के रेड इंडियनों की तरह उन्मूलित कर दी गयीं। उपनिवेश स्थापना के बाद अफ्रीकी दासों को कामों पर लगाया गया। दास प्रथा बन्द होने पर उपनिवेशों को बसाने, आर्थिक प्रगति और राजनीतिक धौंस बरकरार रखने के लिए यूरोपीय उपनिवेशवादियों ने इतिहास के एक नए युग का आरम्भ किया। वहाँ पर कार्य के लिए आसपास के नए देशों और द्वीपों के लोगों को लाया गया। मॉरिशस, ट्रिनिडाड, गयाना, दक्षिण अफ्रीका, सूरीनाम और फीजी में जब दास-प्रथ बन्द कर दी गई तब स्वच्छन्द प्रकृति के नीग्रो या अफ्रीकी भूतपूर्व दासों ने कार्य करना छोड़ दिया या इधर-उधर भाग गए। इससे वहाँ के जमींदारों तथा उनकी सरपरस्त सरकारों की आर्थिक स्थिति पर काफ़ी असर पड़ा। तब ब्रिटेन की महारानी की औपचारिक अनुमति से वहाँ की सरकार ने विशेष समझौतों के अन्तर्गत भारत, इण्डोनेशिया, चीन आदि से सस्ते खर्चों पर शर्तबन्द प्रथा की शुरुआत की। इससे शुरू हुआ भारत में गिरमिटिया मजदूरों की भर्ती का इतिहास। भारत से सर्वाधिक मजदूर इस शर्तबन्द प्रथा के अनुसार उपरोक्त देशों में ले जाए गए। यह सब सन् 1834 ईस्वी में मॉरिशस से आरम्भ हुआ और सन् 1923 तक चलता रहा। 'गिरमिट' या

'गिरमिटिया' अंग्रेजी के 'एग्रीमेंट' (Agreement) शब्द का अपभ्रंश है। 'प्रवासी भारतीयों की हिन्दी सेवा' नामक पुस्तक में इसका सन्दर्भ देते हुए कैलाश कुमार सहाय लिखती हैं "भारतीयों का प्रथम दल 'आर बूट नोट' जहाज द्वारा 75 भारतीयों के साथ मॉरिशस आया था। इस दल ने बहुत अच्छा कार्य किया। सन् 1834 से सन् 1923 तक भारतीयों को मॉरिशस शर्तबन्दी के रूप में जाना पड़ा।"[5] इस तरह पहली बार मॉरिशस में बंधुआ मजदूरों को तब लाया गया जब द्वीप पर 1834 से 1839 के मध्य दास प्रथा को प्रतिबंधित कर दिया गया था । सन् 1873 में पहली बार भारतीय शर्तबन्द मजदूरों का दल सूरीनाम पहुँचा। उन्हें लालरूख नामक जहाज से पारामारीबो, सूरीनाम ले जाया गया।

फीजी स्थित भारतीय हाई कमीशन के राजनयिक के रूप में प्रथम सचिव के पद पर सन् 1984 से सन् 1987 तक कार्य करने वाले श्री विमलेश कान्ति वर्मा ने फिजी के सम्बन्ध में लिखा है "38 वर्षों में 61,000 भारतीय मजदूर फीजी पहुँच चुके थे। इन मजदूरों को गिरमिटिया नाम दिया गया जो एग्रीमेंट का अपभ्रंश था।"[6] इसी तरह जावा और कम्बोडिया गए भारतीय गिरमिटियों का उल्लेख भी मिलता है। "पन्द्रह शताब्दी पूर्व भारतीयों ने जावा में जाकर अपने परिश्रम से वहाँ भव्य और सुन्दर भवनों का निर्माण किया। प्रवासियों ने ही वहाँ एक स्वर्ण मन्दिर की स्थापना की थी। ..... लेकिन स्वर्ण मन्दिर के निर्माताओं को सन् 1918 में शर्तबन्द मजदूर बन कर जाना पड़ा। चीनी मिल में कार्य करने के लिए भारतीयों को गिरमिटिया रूप में लाया जाने लगा।"[7] काम्बोडिया के सम्बन्ध में कैलाश कुमारी सहाय लिखती हैं - "धीरे-धीरे अंग्रेजों का शासन हुआ और कालान्तर में भारतीय गिरमिटिया मजदूर के रूप में वहाँ जाने लगे।"[8] निष्कर्षतः श्रीमती सहाय मानती हैं कि "सभी देशों में प्रवासी भारतीयों का समान इतिहास रहा है। अपने देशों में काम करने के लिए अंग्रेजों को मजदूरों की आवश्यकता थी। ऐसी स्थिति में भारत के सीधी-सादे लोगों को कम समय में धनी बना देने की मृग मरीचिका दिखाकर वहाँ ले जाना

यूरोपीय भूस्वामियों के लिए सहज हुआ।''[9]

इस तरह परतन्त्र भारत पर राज करने वाली साम्राज्यवादी उपनिवेशीय शक्ति, भारत के विवश, शोषित और गरीबी की पीड़ा झेलते भारतीयों के एक बड़े समुदाय को जाल में फँस कर कई छोटे-बड़े देशों एवं द्वीपों में ली गई। वहाँ वे भारतीयों के शारीरिक और आर्थिक शोषण के बल पर खुद लगातार आर्थिक सम्पन्नता की ओर बढ़ते रहे। भारतीयों को व्यवस्थित रूप से भर्ती करने के बाद उत्तर देशों में ले जाया गया। 'साहित्य अमृत' पत्रिका में प्रकाशित एक लेख में श्रीमती पुष्पिता ने लिखा है - ''प्रवासी भारतीयों का सबसे बड़ा दल पहले मॉरिशस में 1834 ई. में गया था। फिर 1845 ई. में त्रिनिदाद, 1860 ई. में दक्षिण अफ्रीका, 1870 ई. में सूरीनाम तथा 1879 ई. में फीजी समुद्री जहाज से पहुँचा था।''[10] यही विवरण प्रो.आर.के.जैन की पुस्तक में भी मिलता है जहाँ गिरमिटियों के सम्बन्ध में लेखक मानते हैं कि ''इसकी शुरुआत मॉरिशस में 1834, गयाना में 1838, ट्रिनिडाड में 1845, नेपाल में 1860, सूरीनाम में 1873 और फीजी में 1878 में हुई।''[11] इसके बन्द होने के बारे में लेखक कहते हैं - ''वेस्टइंडीज में प्रवास आयोजन शर्तबन्द प्रथा के द्वारा आरंभ हुआ जो 19वीं सदी में भिन्न-भिन्न देशों में भिन्न-भिन्न समय में शुरू हुआ किन्तु भारत सरकार के शर्तबन्द प्रथा पर प्रतिबंध लगा देने से 1917 में रोक दिया गया।''[12]

इन भारतीय शर्तबन्द मजदूरों की भर्ती योजनाबद्ध तरीके से की गई थी। उन्हें आने वाले भविष्य के सुनहरे सपनों की चकाचौंध में अन्धा बनाकर, अमानवीय कानून के नियमों में बाँधकर प्रायः पंगु बनाकर दूरस्थ देशों में ले जाया जाता। ले जाने के पहले उनसे कुछ अनुबंधों पर हस्ताक्षर करवाया जाता या अंगूठा लगवाया जाता। 'प्रवासी भारतीयों की हिन्दी सेवा' नामक पुस्तक में मॉरिशस भेजे जाने वाले मजदूरों के साथ किए जाने वाले एग्रीमेंट का उल्लेख मिलता है जिसकी शर्तें पहली नज़र में देखने पर भूखे-नंगे लोगों को लुभाती थीं। ''भोले-भाले भारतीय इसे

गिरमिट कहकर पुकारते थे। एग्रीमेंट की शर्तें बहुत ही आकर्षक थीं –

1. पाँच वर्ष तक मॉरिशस में काम करना होगा।

2. आने जाने का किराया मालिक देंगे।

3. पुरुष को पाँच रुपये मासिक वेतन तथा स्त्रियों को वेतन के रूप में चार रुपये प्रति माह हिये जयेगा।

4. निम्नलिखित राशन प्रतिदिन मिलेगा - -

क. प्रति व्यक्ति एक चावल।

ख. प्रति महिला 3 पाव चावल।

ग. एक पाव दाल।

घ. आधा छटांक नमक।

च. आधा छटांक तेल।

छ. आधी छटांक सरसों।

5. वर्ष में निम्न वस्तुएँ कबार मिला करेंगे -

क. एक धोती

ख. एक कमीज

ग. दो कम्बल

घ. एक फितुई

च. दो टोपी

6. नौकरी की नियुक्ति के समय छः मास का वेतन अग्रिम दिया जाएगा, शेष प्रति माह मिलेगा।''[13]

उनके रहने की जगह, काम के घंटे, चिकित्सा, शिक्षा आदि के बारे में कोई बात जान बूझकर नहीं की गई थी। इसी स्थिति के लिए भारतीय मज़दूरों की गरीबी उनके प्रवास के पीछे अगर जिम्मेदार थी तो उससे कुछ अधिक जिम्मेदार लगती है छली उपनिवेशवादी अंग्रेजों की चाल जिसने इन अनुबंधों में सहारे एक बड़े मानव समुदाय को प्रवासी बनने पर मजबूर किया। उन्नीसवीं सदी के भारतीय

गिरमिट कहकर पुकारते थे। एग्रीमेंट की शर्तें बहुत ही आकर्षक थीं –

1. पाँच वर्ष तक मॉरिशस में काम करना होगा।
2. आने जाने का किराया मालिक देंगे।
3. पुरुष को पाँच रुपये मासिक वेतन तथा स्त्रियों को वेतन के रूप में चार रुपये प्रति माह हिये जयेगा।
4. निम्नलिखित राशन प्रतिदिन मिलेगा - -

   क. प्रति व्यक्ति एक चावल।

   ख. प्रति महिला 3 पाव चावल।

   ग. एक पाव दाल।

   घ. आधा छटांक नमक।

   च. आधा छटांक तेल।

   छ. आधी छटांक सरसों।
5. वर्ष में निम्न वस्तुएँ कबार मिला करेंगे -

   क. एक धोती

   ख. एक कमीज

   ग. दो कम्बल

   घ. एक फितुई

   च. दो टोपी
6. नौकरी की नियुक्ति के समय छः मास का वेतन अग्रिम दिया जाएगा, शेष प्रति माह मिलेगा।''[17]

उनके रहने की जगह, काम के घंटे, चिकित्सा, शिक्षा आदि के बारे में कोई बात जान बूझकर नहीं की गई थी। इसी स्थिति के लिए भारतीय मज़दूरों की गरीबी उनके प्रवास के पीछे अगर जिम्मेदार थी तो उससे कुछ अधिक जिम्मेदार लगती है छली उपनिवेशवादी अंग्रेजों की चाल जिसने इन अनुबंधों में सहारे एक बड़े मानव समुदाय को प्रवासी बनने पर मजबूर किया। उन्नीसवीं सदी के भारतीय

मजदूरों के प्रवास का एक कारण आर्थिक मजबूरी थी, तो मुख्य कारण ब्रिटिश साम्राज्यवाद की लोभी पूँजीवादी नीति। जे.एन.यू. के सामाजिक मानवशास्त्र के प्रोफेसर डॉ.रवीन्द्र कुमार जैन भी यही मानते हैं - ''जहाँ तक उन्नीसवीं सदी के समुद्र पार प्रवास का सम्बन्ध है, यह मध्ययुगीन प्रवास की परम्परा से हटकर उपनिवेशवादी अंग्रेजों की उपज था। भारत से मॉरिशस और कैरेबियन उपनिवेशों के लिए प्रवास की शुरुआत 1830ई. में हुई।''[14]

इस तरह से रोजी-रोटी के सब्जबाग की खातिर अपनी मातृभूमि छोड़कर परदेश के भयानक कष्टों के बीच शासकों की खातिर बंजर को खेत बनाने और जंगल काटकर उसमें मालिकों के सुख का नगर बसाने वाले भारतीय मजदूर असहाय थे। अगर वे वहाँ के सभ्य सम्पन्न नागरिक हैं तो यह उनके धैर्य, कठिन परिश्रम और भाग्य का फल है। भारतीय सांस्कृतिक केन्द्र, भारतीय उच्चायोग पारामारिबो, सूरीनाम से सम्बन्धित श्रीमति पुष्पिता लिखती हैं - ''भारत के बाहर फीजी, मॉरिशस, सूरीनाम, त्रिनिदाद तथा दक्षिण अफ्रीका में बसे लाखों प्रवासी भारतीय, जो आज से लगभग डेढ़ सौ वर्ष पूर्व शर्तबन्दी प्रथा के अन्तर्गत इन लोगों में गन्ने के खेतों में काम करने के लिए मजदूरों के रूप में भेजे गए थे और आज वहाँ के स्थाई नागरिक हैं, वे मातृभाषा के रूप में हिन्दी का ही व्यवहार करते हैं। नियति ने भूखे-भुक्खडों से मातृभूमि तो छुडा दी, लेकिन आत्मा और वाणी ने मातृभूमि में अपने प्राण सहजे रखे।''[15] इन देशों में आज भी हिन्दी का प्रयोग प्रखर रूप में विद्यमान है। यह हिन्दी और हिन्दुस्तानियों के जीवन का ही फल है कि सदियाँ गुजर गयीं फिर भी वे संघर्षरत रहे और आज सम्पूर्ण रूप से स्थापित हैं।

2.1.1 मॉरिशस में गिरमिटिया मजदूरों की भर्ती :

विश्व के मानचित्र पर मॉरिशस एक बिन्दु जैसा है। यह हिन्द महासागर के दक्षिण पश्चिम में स्थित है। महादेशीय दृष्टि से यह अफ़्रीका के अन्तर्गत आता है यह अफ्रीकी भूखण्ड से प्रायः 1500 मील पूर्व में स्थित है। 720 वर्ग मील (38

मील लम्बा और 29 मील चौड़ा) क्षेत्रफल का यह देश ज्वालामुखीय उत्पत्ति वाला माना जाता है। यहाँ की प्राकृतिक छटा मनोहर है। शीतोष्ण जलवायु का देश मॉरिशस अपनी पर्वत श्रृंखलाओं, मनमोहक समुद्र तटों, जल प्रपातों, साठ से अधिक नदियों, चमकते सफ़ेद बालू कणों और लहलहाती शस्यश्यामल धरती के लिए मशहूर है। इसीलिए यह दुनिया के मनोरम पर्याटक स्थलों में एक है। शायद इनकी खूबसूरती से प्रभावित होकर ही दुनिया के प्रसिद्ध व्यंग्यकार मार्कट्वेन ने कहा था ईश्वर ने पहले मॉरिशस को बनाया होगा और बाद में उसके आधार पर स्वर्ग की रचना की होगी। हिन्दी के प्रसिद्ध साहित्यकार यशपाल ने अपनी मॉरिशस यात्रा के पश्चात् जो यात्रा संस्करण लिखा उसका शीर्षक रखा - 'स्वर्गोद्यान बिना साँप'। अपनी भौगोलिक अवस्थिति के कारण सामरिक दृष्टि से भी मॉरिशस एक महत्वपूर्ण देश है। अफ़्रीकी देशों में परिगणित होने के बावजूद आज यह एक विकसित राष्ट्र है। सोलहवीं शताब्दी में पुर्तगाली सत्रहवीं में डच, अठारहवीं में फ़्रेंच और उन्नीसवीं तथा बीसवीं सदी में अंग्रेजों ने इस पर एक-एक कर अपना अधिकार जमाया। आरंभ में इसका व्यापरिक और कृषि-सम्बन्धी विकास फ्राँसीसियों ने किया था। उत्तरोत्तर सन् 1810 ई. में अंग्रेजों ने फ़्राँसीसियों को परास्त कर मॉरीशस पर अधिकार कर लिया। उस समय अंग्रेजों की सेना में भारतीय सिपाही भी थे। आगे चलकर 1834 में परिश्रमी भारतीय बँधुआ मजदूरों ने वहाँ की जनसंख्या, संस्कृति और कृषि की प्रगति में अपना योग दिया। इस तरह आज वहाँ अफ़्रीकी, चीनी और भारतीय मूल के लोगों के साथ फ़्रेंच, अंग्रेज आदि कई जातियाँ निवास करती हैं। इसमें सर्वाधिक संख्या, सत्तर प्रतिशत के आस पास भारतीय मूल के लोगों की है। वहाँ की संस्कृति शामरल की सतरंगी मिट्टी की तरह बहुलतावादी है। अंग्रेजी, फ़्रेंच, क्रियोल और भोजपुरी से प्रभावित हिन्दी वहाँ की प्रमुख भाषाएँ हैं। हिन्दू, ईसाई और इस्लाम धर्म के मानने वाले लोग अपनी सामासिक संस्कृति और धर्म बहुलता को बनाए हुए हैं। मॉरिशस को उपनिवेशवादी अंग्रेज सरकार से 12 मार्च, 1968 को स्वाधीनता मिली। आज प्रायः सवा ग्यारह लाख की आबादी वाले इस देश में संसदीय प्रणाली

वाली गणतांत्रिक सरकार है। यह दुनिया के आधुनिक देशों में एक है। रूपया यहाँ की मुद्रा है। गन्ना यहाँ की प्रमुख फसल है। यहाँ पर्यटन उद्योग का काफ़ी विकास हुआ है। आज अपने दमखम, नैसर्गिक सुन्दरता तथा सामरिक महत्व के कारण मॉरिशस 'हिन्द महासागर का मोती' है।

भारतीय मूल के प्रवासी मजदूरों की सन्ततियाँ आज देश की सरकार चलाती हैं। इन प्रवासियों ने आज जीवन के प्रत्येक क्षेत्र में विकास किया है। भाषा और साहित्य का क्षेत्र भी उनकी सर्जनात्मक क्षमता से दूर नहीं रहा। आज मॉरिशस के सम्पूर्ण साहित्यिक भण्डार का हिन्दी साहित्य में विशिष्ट योगदान है। साहित्य की प्रायः सभी विधाओं में रचना कार्य हुआ है।

बड़ी संख्या में वहाँ कविता-संग्रह, कहानी-संग्रह, उपन्यास, नाटक, निबन्ध-संग्रह और जीवनी का प्रकाशन हुआ। भाषा में अन्य भाषओं-बोलियों का मिश्रण देखने को मिलता है। मॉरिशस में आज भी हिन्दी लेखन अनवरत विकास की दिशा में अग्रसर है। प्रो.विष्णु दयाल, सोमदत्त बखोरी, ब्रजेन्द्र 'मधुकर', अभिमन्यु अनत, मुनीश्वर लाल चिन्तामणि, भानुमति नागदान, रामदेव धुरंधर, प्रह्लाद रामशरण, ईश्वर जागासिंह आदि वहाँ के कुछ प्रमुख हिन्दी साहित्यकार हैं।

कहानी, कविता और उपन्यास वहाँ के अपेक्षाकृत विकसित विधाएँ हैं। वहाँ हिन्दी में कई पत्र-पत्रिकाओं का प्रकाशन होता है। अधिकांश लेखकों की रचनाओं का प्रकाशन भारत में ही होता है। भाव-पक्ष और कला-शिल्प दोनों की दृष्टि से वहाँ का हिन्दी साहित्य भारतीय लेखकों की रचनाओं से प्रभावित लगता है। मॉरिशसीय हिन्दी साहित्य पर अन्य अध्याय में विशेष प्रकाश डाला गया है।

2.1.2 गयाना में गिरमिटिया और हिन्दी :

कोई पौने दो सौ साल पहले कैरेबियायी देशों में भारतीय मजूदरों को

शर्तबन्द प्रथा के अन्तर्गत ले जाया गया। भौगोलिक दृष्टि से गयाना दक्षिण अमेरेकी महादेश में स्थित है। वेनेजुएला, सूरीनाम, ट्रिनिडाड इसके निकटवर्ती देश हैं। ''गयाना अमेरिंडियन (अमेरिकन+इंडियन) जाति की भाषा का शब्द है, जिसका अर्थ है बहुजल स्रोतों की भूमि।''[16] यह अट्लांटिक महासागर की शाखा कैरेबियन सागर पर अवस्थित है। इसके नामकरण और राजनीतिक तथा सार्वभौमिक प्रभुसत्ता के बारे में रोचक तथ्य मिलता है। विभिन्न साम्राज्यवादी शक्तियाँ फ्रेंच, डच और ब्रिटिश के बीच हुए कड़े संघर्ष के पश्चात 1930 में गयाना को तीन भागों में बाँट लिया गया। ये भाग थे फ़्रेंच गयाना, डच गयाना और ब्रिटिश गयाना। डच गयाना को आजकल सूरीनाम कहा जाता है और स्वतंत्र होने के पश्चात ब्रिटिश गयाना को ही गयाना कहा गया।

'फार ईस्ट' नामक जहाज के साहसिक यात्रा करते हुए पहली बार सन् 1838 में भारतीय मजदूरों का दल गयाना पहुँचा। ''भारत से सर्वप्रथम प्रवासी रूप में तीन सौ छियानवे भारतीय सन् 1838 में गयाना गये थे।'[17] शर्तबन्ध मजदूरों के रूप में भारतीयों के विभिन्न देशों में प्रवास कर समय 'इण्डियन कम्युनिटीज एब्रॉड : थीम्स ऐण्ड लिट्रेचर' नामक पुस्तक में इस प्रकार मिलता है - ''मॉरिशस में 1834, गयाना में 1838, ट्रिनिडाड में 1845, नेटाल में 1860, सूरीनाम में 1873 और फीजी में 1878 में इसकी शुरुआत हुई।''[18] गयाना जाने वाले भारतीय मजदूर प्रायः उत्तर भारत के थे और अवधी या भोजपुरी भाषा बोलते थे। आज लगभग 165 वर्षों के बाद गयाना की कुल आबादी का आधा से अधिक हिस्सा भारतीय मूल के लोगों का है। ''भारतवंशियों को गयाना में ईस्ट इंडियन या इंडोगयानीज कहा जाता है और गयाना की लगभग आठ लाख की आबादी में भारत वंशियों की संख्या 50-55 प्रतिशत है और अफ्रीकी जाति की संख्या 35-40 प्रतिशत है।''[19] गयाना सन् 1966 में स्वतंत्र हुआ। आज वहाँ की राजनीति, फसल, आर्थिक विकास और सामाजिक स्थिरता का दायित्व विशेष रूप से भारतीय मूल के लोगों पर है। सन् 1997 में प्रकाशित अपने शोध ग्रन्थ में डॉ.श्यामधर तिवारी मानते हैं कि ''दस लाख

आबादी वाले गयाना देश में भारतीयों की संख्या आधी से अधिक है, किन्तु वहाँ हिन्दी बोलने वालों की संख्या लगभग 15 प्रतिशत ही है।''[20]

बहुजातीय देश होने के कारण यहाँ कई भाषाएँ प्रचलित हैं परंतु मुख्य बोलचाल की भाषा क्रियोल है। शिक्षा, औपचारिक कार्यों और प्रशासन की भाषा अंग्रेजी है। जहाँ तक हिन्दी खडीबोली का प्रश्न है वह बुजुर्ग और बड़ी उम्र के भारतीय ही समझते हैं या फिर कुछेक बातें कर सकते हैं। हरिबाबू कंसल मानते हैं - ''बड़ी उम्र के भारत वंशी हमउम्र के लोगों के साथ कभी कभार हिन्दी में बातचीत करते हैं अन्यथा हिन्दी का बोलचाल में इस्तेमाल नहीं है। ..... 4-5 ही वैसे सेकेन्डरी स्कूलों में 6,7,8 कक्षा में हिन्दी पढ़ाने की व्यवस्था है जहाँ कोई अध्यापक हिन्दी की योग्यता रखता है। गयाना विश्वविद्यालयों में बी.ए. के सामान्य विषय (माइनरसब्जेक्ट) के रूप में पढ़ाने की व्यवस्था है।''[21]

गयाना में हिन्दी शिक्षण की स्थिति के बारे में डॉ.सतीश कुमार रोहरा लिखते हैं - ''प्राथमिक स्तर अर्थात् प्राथमिक स्कूलों में हिन्दी पढ़ाने की कोई व्यवस्था नहीं है। विभिन्न एवं सांस्कृतिक संस्थाओं के आवेदन पर वर्त्तमान सरकार ने प्रयोग के तौर पर उन सेकण्डरी स्कूलों में पढ़ाने की अनुमति दी है जिन स्कूलों में पहले से काम कर रहे अध्यापकों में से कोई अध्यापक हिन्दी पढ़ाने की योग्यता रखता हो तथा प्रधानाध्यापक के लिए इसके लिए कोई आपत्ति न हो।''[22] इस विश्वविद्यालय में भारतीय सांस्कृतिक संबंध परिषद की ओर से एक सांस्कृतिक केन्द्र की व्यवस्था की गई है जहाँ हिन्दी प्राध्यापक की नियुक्ति की जाती है।

आज भी हिन्दी और भारतीय संस्कृति के पुनर्जागरण के कार्य में सामाजिक संस्थाएँ कार्यरत हैं। अनौपचारिक रूप से कई स्वैच्छिक संस्थाएँ सैकड़ों पाठशालाएँ चलाती हैं। सप्ताह में यहाँ दो तीन दिन कक्षा का संचालन किया जाता है। यहाँ 'जूनियर' और 'सीनियर' की परीक्षाओं में सम्मिलित होने वाले छात्रों की परीक्षाओं

का संचालन 'गयाना हिन्दी प्रचार सभा' द्वारा किया जाता है। यह कार्य खड़ी बोली हिन्दी में सम्पादित होता है। थोड़े-से मौखिक साहित्य के उदाहरणों को छोड़ दें तो गयाना में लिखित हिन्दी साहित्य भी कुछ ख़ास नहीं मिलता है। इसके बावजूद 'अमर ज्योति' और 'ज्ञानता' जैसे हिन्दी पत्र यहाँ हैं और प्रो.महातमसिंह, पं.रामलाल, गोकरण शर्मा, पं.रिपुदमन सिंह, पं.बीरबल सिंह, चन्द्रशेखर, डॉ.कुमार, पं.जगन्नाथ जैसे हिन्दी के सेवक भी। ईसाई मिशनरी, टैगोर स्कूल, आर्य समाज मंदिर और सनातन धर्म मंदिर आदि में हिन्दी का पठन-पाठन होता है। शर्तबंद बंधुआ भारतीय मजदूरों को विदेश के जिन देशों में ले जाया गया था उनमें गयाना एक ऐसा देश है जहाँ हिन्दी की स्थिति बहुत कमजोर है और इसके लिए सरकार द्वारा सहयोग अभी भी वांछित है। अपने पुरखों की भाषा के प्रति यहाँ के प्रवासी भारतीयों में जागरूकता की भी आवश्यकता है।

2.1.3 ट्रिनिडाड में गिरमिटिया और हिन्दी :

कैरेबियाईदेश में ट्रिनिडाड ऐसा सर्वप्रमुख देश है जहाँ सर्वाधिक भारतीयों को शर्तबन्द प्रथा के तहत कामगर मजदूर के रूप में ले जाया गया। 'प्रवासी भारतीयों की हिन्दी सेवा' पर शोध करने वाली डॉ.कैलाश कुमारी सहाय ने लिखा है - ''सन् 1845 से 1917 के मध्य लगभग एक लाख तैंतालीस हजार बँधुआ मजदूर त्रिनिदाद भेजे गए। ये प्रवासी भारतीय आज भी त्रिनिदाद में अपने वंशजों के रूप में फल फूल रहे हैं।''[23] ट्रिनिडाड में बसे प्रवासी भारतीय वहाँ के लिए बाहरी नहीं, बल्कि देश के विश्वस्त और शिष्ट नागरिक हैं। प्रथम ट्रिनिडाड प्रवास के बारे में डॉ.कैलाश कुमारी सहाय पुनः लिखती हैं ''भारत से त्रिनिदाद जाने वाला सर्वप्रथम जहाज का नाम 'फेटल रोजेक' था। इस जहाज पर दो सौ सैंतीस भारतीय शर्तबन्द मजदूर थे।[24]

सर्वाधिक मजदूर उत्तर प्रदेश के थे। इसके अलावा बिहार, बंगाल, मध्य प्रदेश, असम और कुछ दक्षिण भारत के भी थे। ये सभी जहाजी भाई के नाम से

भी जाने जाते हैं। ट्रिनिडाड कैरेबियन समुद्र में अवस्थित है। यह दो प्रमुख द्वीपों 'ट्रिनिडाड-टोबेगो' का समूह देश है। इसकी राजधानी पोर्ट ऑफ़ स्पेन है। यह वेस्ट इंडीज के नाम से प्रसिद्ध देशों के समूह में कई दृष्टियों से विशिष्ट जाना जाता है। वहाँ के एक हिन्दू पंडित श्री रामचरण गोसाईं ने हिन्दुओं के संरक्षण और विकास से संबंधित अपने एक लेख में लिखा है - ''हिन्दू समुदायों का संरक्षण और विकास चार धार्मिक-सांस्कृतिक बातों पर आधारित रहा। वे हैं : भजन (ईश्वर स्मृति), भोजन (खाद्य पदार्थ), भाषण (भाषा) और भूषण (गहना) और सभी हिन्दुओं के द्वारा उनके व्यक्तिगत, साम्प्रदायगत तथा परंपरागत फर्कों के बावजूद इन पर बल दिया गया है।''[25]

निश्चित रूप से प्रवासी भारतीयों के जीवन का आधार, साथी और अन्तर्शक्ति उनकी संस्कृति रही है। इस सांस्कृतिक धरोहर के प्रवाह में भाषा संवाहक का कार्य करती है। आज वहाँ गए प्रवासी भारतीयों की आधुनिक संतानें आपसी बोलचाल में हिन्दी का प्रयोग नहीं करती हैं। कुछ पुरानी पीढ़ी के लोगों को इसका अल्प ज्ञान अवश्य है परंतु सामाजिक या औपचारिक कार्यों के लिए इसका प्रयोग नहीं होता है। ट्रिनिडाड में सीमित रूप से 'धार्मिक शिक्षा' के माध्यम से पुरखों की, परम्परा की और भारत की भाषा होने के चलते हिन्दी तथा हिन्दी के बारे में अध्ययन किया जाता है। प्रमुख रूप से स्वैच्छिक शिक्षा संस्थाओं के माध्यम से हिन्दी की कक्षाएँ चलाई जाती हैं। इन कक्षाओं में लेखन, पाठन और वाचन कार्य चलता है। नई पीढ़ी भोजपुरी, अवधी आदि भाषाओं से अनभिज्ञ है। उन्हें खड़ी बोली हिन्दी पढ़ाई जाती है। धार्मिक-सांस्कृतिक अवसरों पर भजन, फ़िल्मी गीत, गाने आदि की उपस्थिति में हिन्दी का आभास मिलता है। वैसे वहाँ वेस्टइंडीज विश्वविद्यालय में हिन्दी की पढ़ाई होती है लेकिन हिन्दी के लिए देश में रोज़गार की पर्याप्त संभावनाएँ नहीं हैं। वहाँ कोई रेडियो कम्पनियाँ चौबीसों घंटे हिन्दी फिल्मी गाने प्रसारित करती हैं। टेलीविजन पर हिन्दी फिल्में तथा अन्य कार्यक्रम भी दिखाए जाते हैं। किन्तु उद्घोषणा की भाषा अंग्रेजी होती है। भारतीय सांस्कृतिक सम्बन्ध परिषद द्वारा

नियुक्त शिक्षकों के माध्यम से हिन्दी के प्रचार-प्रसार की भारतीय सरकार की कोशिश अभी तक उद्देश्य पूर्ति में संपूर्ण सफल नहीं हो पाई है। हिन्दी एजुकेशन बोर्ड, हिन्दी निधि, कबीर पंथ एसोसिएशन, सनातन धर्म एसोसिएशन, भारतीय विद्या संस्था, आर्य प्रतिनिधि संस्था आदि संस्थाओं, महात्मा गाँधी संस्थान, भारत सरकार द्वारा दी जानेवाली छात्रवृत्तियों आदि सत्प्रयासों से भी हिन्दी प्रचार को बल मिल रहा है।

इसके अतिरिक्त 'कोहिनूर' अखबार (अब बन्द हो चुका है।) हिन्दी फिल्मों के प्रति उनकी रुचि, धार्मिकता एवं समय-समय पर धर्म प्रचारकों के उपदेशों आदि से भी प्रवासी भारतीय अपनी भारतीय पहचान बनाए हुए हैं।

सन् 1988 से यूनिवर्सिटी ऑफ़ वेस्टइंडीज में स्नातक स्तर तक हिन्दी पढ़ाने की व्यवस्था एक महत्वपूर्ण बात है। हिन्दी प्रचार सभा, वर्धा भी वहाँ हिन्दी की परीक्षाएँ संचालित करती है। सन् 1996 में फोर्ट ऑफ़ स्पेन में हुए विश्व हिन्दी सम्मेलन ने ट्रिनिडाड के शैक्षणिक और सांस्कृतिक क्षेत्र में नवीन आशा का संचार किया है। इससे भी हिन्दी को बढ़ावा मिलता है। भारतीय उच्चायोग भी हिन्दी की कक्षाएँ चलाता है। इसके द्वारा नवीन लेखकों तथा भारतीय हिन्दी पत्रिकाओं जैसे - धर्मयुग, चन्द्रामागा, कादंबिनी और नवनीत आदि को हिन्दी प्रचार प्रसार के लिए पाठकों के पास भेजा जाता है।

सम्प्रति ट्रिनिडाड में सम्पन्नता है और भारतवंशियों की वहाँ की सरकार में अच्छी-खासी साझेदारी है। यद्यपि अंग्रेजी वहाँ भी मुख्य भाषा है, फिर भी लोगों में अपनी जड़ों से जुड़ने की लालसा के चलते भारतीय लोग वस्तुओं और भाषा के प्रति बहुत आहर हैं। धीरे-धीरे वहाँ हिन्दी जानने वालों की संख्या में वृद्धि हो रही है।

आज हिन्दी को वहाँ एक प्रयोजनमूलक भाषा के रूप में विकसित करने की

व्यवसाय तथा जीविकोपार्जन आदि के लिए भारतीय वहाँ जाकर स्वतंत्र रूप से बसने लगे। आज भी दक्षिण अफ्रीकी लोगों में भारतीय मूल के लोगों की संख्या बहुत है। दक्षिण अफ्रीका में रहने वाले भारतीयों की कुल जनसंख्या का एक बड़ा हिस्सा हिन्दी भाषा-भाषी है। 12 जनवरी 1972 के 'धर्मयुग' में छपे एक विवरण के अनुसार - "कुल भारतीय जनसंख्या का 32 प्रतिशत हिन्दी भाषी है। हिन्दी आन्दोलन में आर्य समाज और भवानी दयाल सन्यासी का उल्लेखनीय स्थान है. 1947 में हिन्दी शिक्षा संघ की स्थापना, जिसके माध्यम से हिन्दी के प्रचार-प्रसार का महत्वपूर्ण कार्य. राष्ट्रभाषा प्रचार समिति की परीक्षाओं की भी व्यवस्था. हिन्दी का प्रचार करने वाली 51 संस्थाएँ सरकार के शिक्षा विभाग में हिन्दी को मान्यता।"[27] दक्षिण अफ्रीका गए प्रवासी शर्तबन्द मदजूरों के बारे में गणना का अनुमान करते हुए अपने एक लेख में डरबरन के प.नरदेव वेदालंकम् लिखते हैं कि "सन् 1880 से भारतीय लोग दक्षिणी अफ्रीका में आकर बसने लगे। बीसवीं सदी के प्रारंभ तक वे यहाँ शर्तबन्द मजदूर के रूप में तथा स्वतंत्र नागरिक के रूप में थे, अब और अच्छी संख्या में आकर बसने लगे। ये भारतीय अक्षर ज्ञान से रहित थे, परंतु वे धर्म, संस्कृति और सभ्यता से वंचित नहीं थे। इनकी संख्या का अनुमान निम्न प्रकार था : तमिल भाषी 37%, हिन्दी भाषी 33%, तेलुगु भाषी 12%, गुजराती और उर्दू-गुजराती 15%।"[28]

यहाँ के सभी भारतीय एक दूसरे के साथ हिन्दी में ही पारस्परिक वार्तालाप करते थे। शर्तबन्द मजदूर और वर्ण भेद के दुख को सभी भारतीयों ने एक साथ झेला था। वे अपना सारा कार्य हिन्दी में चलाते थे। आरंभ से आज तक यहाँ भी हिन्दी संस्कृति-संरक्षण का माध्यम रही है। यह सम्पर्क भाषा के रूप में व्यवहृत होती थी। भारत की आजादी के बाद के नये राजनीतिक समीकरणों ने यहाँ की जनता पर भले ही असर न डाला हो परंतु पाश्चात्य जीवन शैली, आधुनिक शिक्षा व्यवस्था, भौगोलिक परिवर्तन और देश-कालीन आवश्यकताओं ने भारतीयों के रहन

सहन और भाषाओं को काफ़ी हद तक प्रभावित किया है। भाषिक अस्तित्व के साथ सांस्कृतिक अस्तित्व जुड़ा हुआ है। इसके साथ जुड़ी है इनकी अपनी अलग पहचान। सन् 1920 के बाद भारतीयों की स्थिति में सुधार के साथ हिन्दी भाषा की छोटी-मोटी कक्षाओं का प्रारंभ हुआ, परंतु बाद में इन्हीं पाठशालाओं को सरकार ने 'गवर्नमेंट एडेड इंडियन स्कूल' के रूप में बदल दिया। इस तरह मातृभाषा की बलिवेदी पर भारतीयों के लिए अंग्रेजी शिक्षा का आरंभ हुआ। बाद में आर्थिक मजबूरी और सरकारी नीति के कारण हिन्दी भाषा का समुचित विकास नहीं हो पाया। आगे चलकर हिन्दी भाषा के ग्रामीण बोली रूप का खड़ी बोली भाषा के रूप में (शुद्ध हिन्दी मानकर) प्रचार किया गया। इससे यह आम जीवन व्यवहार से दूर हटकर शिष्ट होती गई।

आज वहाँ किसी न किसी तरह भारतवंशी, भारत से भावनात्मक लगाव के कारण, व्यावसायिक आवश्यकता के कारण, शिक्षा तथा संचार माध्यमों के लिए हिन्दी का प्रयोग करता है। दक्षिण अफ्रीका में अंग्रेजी के साथ अन्य नौ प्रमुख भाषाएँ बोली जाती हैं जिनमें हिन्दी का भी स्थान है। भले ही यह स्थान बहुत उत्साहवर्द्धक न हो। वहाँ 'राष्ट्रभाषा प्रचार समिति' वर्धा जैसी संस्था द्वारा परीक्षाओं का भी आयोजन किया जाता है। परन्तु उम्मीद से कम लोग ही परीक्षा में भाग लेते हैं।

दक्षिण अफ्रीका में वर्ण भेद और गोरी सरकार की समाप्ति के बाद श्यामवर्णी राष्ट्रपति नेल्सन मंडेला का राष्ट्रपति बनना वहाँ के इतिहास का उज्ज्वल पन्ना है। संवैधानिक परिवर्तन और वोट की राजनीति ने सभी भाषाओं के संरक्षण का आश्वासन जरूर दिया है, परंतु भारतीय भाषाओं का स्थान वहाँ की शिक्षा व्यवस्था में कितना रह सकेगा यह महत्त्वपूर्ण प्रश्न है। वहाँ रह रहे सभी भारतीयों की भी मानसिक भूमिका इसको लेकर एकमत नहीं है जिससे हिन्दी को उनके मातृभाषा विकल्प को शिक्षा प्रणाली में रखने की गुंजाइश हो। कुछ छिट-पुट रूप से जहाँ-तहाँ कभी-कमार कोई लेख, कविता या कहानी वहाँ से देखने को मिलती है। वहाँ के

टेलीविजन कार्यक्रमों के प्राइवेट चैनलों में हिन्दी के भी कुछ कार्यक्रम और फ़िल्में देखने को मिलती हैं। बाद में दक्षिण अफ्रीकी सरकार ने टेलीविजन कार्यक्रमों में हिन्दी फिल्मों के दर्शकों की संख्या को देखते हुए कुछ नई-पुरानी सुपरहिट हिन्दी फ़िल्में देखने का फ़ैसला किया। इससे हिन्दी के प्रोग्रामों के प्रचलन और प्रसिद्धि का पता भी चलता है। बंबइया फिल्में वहाँ लोकप्रिय हैं। हिन्दी गानों के संग्रह, भजन, री-मिक्स आदि की अच्छी खासी खपत इन दिनों हिन्दी के प्रसार में सहायक हुई है। सरकारी नीति के तहत भारतीय स्कूलों और सरकारी स्कूलों में सरकारी खर्चे पर ही मातृभाषा को पढ़ाने की व्यवस्था की गई। प्रवासी भारतीयों को इसका लाभ हुआ। सन् 1985 से 1992 तक प्रवासी भारतीयों की विभिन्न मातृभाषाओं के सीखने वालों की संख्या से संबंधित एक तालिका इस प्रकार प्रस्तुत की गई है ☐

वर्ष	तमिल	हिन्दी	अरबी	तेलुगु
1985	9,140	6,194	2,314	134
1986	13,210	9,025	2,879	234
1987	15,846	10,912	4,893	288
1988	16,792	11,416	5,304	325
1989	17,795	12,040	5,602	261
1990	17,490	12,231	5,703	310
1991	14,461	11,632	5,204	196
1992	14,287	14,044	7,003	1,148

Table-1 [29]

इससे पता चलता है कि हिन्दी भाषा के प्रति लोगों के रुझान में बढोत्तरी हुई है। सन् 1960 में चालू की गई डरबन वेस्ट बिल युनिवर्सिटी भारतीयों की शिक्षा संबंधी जरूरतों को ध्यान में रखकर बनाई गई थी। इसमें उनकी भाषाओं को पढ़ाने की व्यवस्था थी। सन् 1981 से सन् 1991 तक मातृभाषा का अध्ययन करने वाले युनिवर्सिटी स्तर के विद्यार्थियों की संख्या से संबंधित एक तालिका इस प्रकार है -

वर्ष	हिन्दी	तमिल	गुजराती
1981	48	50	15
1983	116	146	17
1985	162	88	26
1987	150	118	22
1989	70	60	13
1991	38	19	9

Table -2 ''[30]

इससे पता चलता है कि भारतीय भाषाओं के जीविका से जुड़े नहीं होने के कारण उनके प्रति लोगों का आकर्षण कम होता जा रहा है।

अब वहाँ प्रजातंत्र के आगमन से नई आशा बँधी है। सम्पूर्ण देश में परिवर्तन के साथ हिन्दी की दशा और दिशा में परिवर्तन और सुधार भी कामोबेश जरूर होगा। आवश्यक है कि यह परिवर्तन सकारात्मक हो। दक्षिण अफ्रीका की हिन्दी को नैताली भी कहा जाता है। यह इसलिए कि भारतीयों का प्रथम प्रवास नेपाल प्रांत में हुआ था।

दक्षिण अफ्रीका के प्रो.आर.सीताराम हिन्दी की स्थिति पर प्रकाश डालते हुए कहते हैं - ''हमारे यहाँ बाधाएँ भी लेकिन उनमें से काफ़ी का समाधान हो चुका है। मुख्य बाधा यह थी कि भारतीय भाषाओं को न स्कूली समय सारणी में यथेष्ट स्थान दिया जाता था और न ही उनकी परीक्षा की व्यवस्था थी। लेकिन लम्बे संघर्ष और विचार विमर्श के बाद अब संविधान में व्यवस्था के कारण यह कठिनाई दूर हो गई है। .... अब यह हमारे ऊपर है कि हम इन सकारात्मक स्थितियों का कितना सदुपयोग करते हैं।''[31]

संचार माध्यमों का भी हिन्दी प्रचार में प्रमुख योगदान रहता है। 'हिन्दी शिक्षा संघ' जैसी स्वैच्छिक संस्था का अपना प्राइवेट चैनल 'हिन्दवानी' है। इससे 24 घंटे हिन्दी कार्यक्रम प्रसारित होते रहते हैं। ''इसके अलावा भारत के साथ सांस्कृतिक

आदान-प्रदान, फ़िल्म और पत्र पत्रिकाओं की उपलब्धता भी हिन्दी के करीब बने रहने का कारण है। अब तो टी.वी.कार्यक्रमों, ख़ास तौर से सोनी टी.वी और जी.टी.वी के पहुँचने से रोज कुछ देर के लिए हिन्दी प्रायः हर घर में पहुँच जाती है।''[32] दक्षिण अफ्रीका के लोगों को भारतीयों द्वारा कहीं भुला दिए की जाने की बात भी खलती है। वे मानते हैं कि ''भारतीय विद्वान और शासक भाषा संस्कृति के संबंध में फीजी, सूरीनाम, मॉरिशस इत्यादि की गिनती तो करते हैं लेकिन किन्हीं कारणों से दक्षिण अफ्रीका को नजरअंदाज कर दिया जाता है। हो सकता है कि राजनीतिक विवशता हो। लेकिन हमारी अपेक्षाएँ तो हैं।''[33] इस तरह भारत सरकार की मजबूरियों के बावजूद भी लोग आशान्वित हैं। यह आशा हिन्दी की पक्षधर है। यही उसकी जिजीविषा को जोर देती है।

2.1.5 सूरीनाम में गिरमिटिया और हिन्दी :

तीन टुकड़ों में बँटे गयाना का एक टुकड़ा 'डच गयाना' कहलाया। डच उपनिवेश से स्वतंत्र होने के बाद यह 'सूरीनाम' के नाम से जाना जाने लगा। भौगोलिक दृष्टि से दक्षिण अमेरिका में आने वाला अट्लांटिक महासागर के तट पर बसा यह राष्ट्र नक्शे में ब्राजील के उत्तर में, ब्रिटिश गयाना के पूर्व तथा फ्रेंच गयाना के पश्चिम में अवस्थित है। यहाँ मॉरिशस-फीजी आदि देशों की तरह ही भारतीय मजदूरों को शर्तबन्द प्रथा के अंतर्गत सन् 1873 में ले जाया गया। भारत से सूरीनाम ले ज़ाए गए प्रवासी भारतीयों के आगमन के बारे में एक ऐतिहासिक विवरण निम्नवत है : ''सन् 1873 में कलकत्ता से 'लालारुख' नामक जहाज से भारतीयों के प्रस्थान का जो सिलसिला इस देश के लिए आरंभ हुआ वह काफ़ी समय तक चलता रहा जब तक पैंतीस हजार भारतीय यहाँ नहीं पहुँच गए। ये भारतीय अधिकांशतः बिहार और पूरबी उत्तर प्रदेश के थे और पूरी तरह साक्षर भी नहीं थे।''[34] सूरीनाम को कुछ लोग लघु भारत भी मानते हैं। वहाँ गए प्रवासी भारतीयों को डच शासन के अंतर्गत प्रायः सौ साल तक दुर्दिन, संघर्ष-भरे वातावरण

में आशा-निराशा के मध्य जीवनयापन करना पडा। सूरीनाम के प्रवासी भारतीयों के शोषण का स्वरूप प्रायः मॉरिशस के समान था। दूरी अधिक होने, समय ज्यादा बीत जाने और भारत में रोजगार के न होने की दशा में वहाँ गए प्रवासी शर्तबन्द भारतीय मजदूरों को उसी धरती पर बस जाना पड़ा।

'साहित्य अमृत' में प्रकाशित डॉ.पुष्पिता के एक लेख के अनुसार - ''वह वर्त्तमान इतिहास जिसके हम सब साक्षी हैं, सन् 1873 से लेकर 1916 तक कुल चौंसठ जहाजों द्वारा चौंतीस हजार चार सौ से कुछ अधिक भारतीय स्त्री-पुरुष और बच्चे सूरीनाम में लाए गए थे। 'देवा' नामक अंतिम जहाज तीन सौ तीस मजदूर लेकर आया था।''[35] आगे वे लिखती हैं - ''कान्ट्रेक्ट पूरा होने के बाद ग्यारह हजार पाँच सौ बारह मजदूर भारत लौट गए। जो सूरीनाम में बस गए उन्हें एक हेक्टेयर भूमि और सौ रूपया पुरस्कार स्वरूप दिया जाता था।''[36]

इस तरह भारत से गए हिन्दू-मुस्लिम मजदूर आपस में एक दूसरे को मुलुकी और 'जहाजी भाई ' कहकर बुलाते थे। उन लोगों ने कभी भी हिम्मत नहीं हारी और बाधाओं का सामना करते रहे। हिन्दुस्तान में उनकी पहचान बनी और दासता की यातना ने उनके आपसी भेद मिटा दिए। 26 नवम्बर, सन् 1975 में सूरीनाम डचों के औपनिवेशिक चुंगल से आजाद हुआ। सवा सौ साल पहले गए प्रवासी शर्तबन्ध मजदूर बंधु आज वहाँ के भाग्य विधाता हैं। वे सत्ता और समाज का हिस्सा है। हाल ही में जून 2003 में विश्व हिन्दी सम्मेलनों की सातवीं कड़ी का आयोजन सूरीनाम की राजधानी 'पारामारीबो' शहर में किया गया। इस सम्बन्ध में वहाँ गए हिन्दी साहित्यकार हिमांशु जोशी ने लिखा है कि - ''लगभग साढे चार लाख आबादी वाले इस देश में, जिसके सैंतीस प्रतिशत लोग भारतीय मूल के हैं, सर्वत्र भारतीय ही भारतीय दिख रहे हैं। पारामारीबो शहर सूरीनाम नहीं एक भारतीय शहर जैसा लग रहा है।''[37]

भारत से बाहर जाने वाले मजदूर प्रायः निरक्षर थे अतः उनकी भाषा ही

उनकी मुख्य पहचान और हथियार थी। आज आजादी के बाद हिन्दी वहाँ की मान्यता प्राप्त भाषा है। फीजी की तरह सूरीनाम में भी हिन्दी आम बोलचाल की भाषा है। इसकी संरचना भोजपुरी हिन्दी की तरह है। सूरीनाम में बोले जाने के कारण इसे 'सरनामी' या 'सरनामी हिन्दी' कहा जाता है। यहाँ गए प्रवासी भारतीय भी अपने साथ रामचरित मानस, महाभारत, गीता, भागवत, हनुमान चालीसा जैसे ग्रन्थ, आल्हा-ऊदल, सत्यनारायण तथा सती-सावित्री की कथा जैसी पुस्तकें साथ ले गए थे। इन्हीं के द्वारा वे अपनी और आने वाली पीढ़ी को हिन्दी भाषा के सहारे संस्कृति के मार्ग को आलोकित करते रहे। इन ग्रन्थों ने ही भारतीय संस्कृति का बीजारोपण, पल्लवन और विकास किया।

भारत के बाहर मॉरिशस और फीजी को छोड़कर सूरीनाम ही एक ऐसा देश है जहाँ हिन्दी आज भी देश की दूसरी प्रमुख बोलचाल की भाषा है। ट्रिनिडाड की तरह यहाँ भी शिक्षा व्यवस्था में इसे वांछित स्थान प्राप्त नहीं है। वहाँ के स्कूलों में हिन्दी शिक्षा की शुरुआत 1890 से हुई। ''सन् 1890 में डच सरकार की ओर से केवल भारतीय बच्चों के लिए स्कूलों की स्थापना हुई जहाँ शिक्षक भी भारतीय थे। इनमें हिन्दी तथा अन्य विषयों की भाँति डच भी पढ़ाई जाती थी।''[30] प्रायः पन्द्रह वर्षों के बाद इस प्रकार के स्कूलों को जिन्हे 'कुली स्कूल' कहा जाता था बंद कर दिया गया; परंतु सरकारी स्कूलों में सन् 1929 तक हिन्दी पढ़ाई जाती रही। किन्तु यह अनिवार्य न होकर स्वैच्छिक थी और भाषा के रूप में पाठ्यक्रम का हिस्सा नहीं थी। इसे अंतिम घंटे में या विद्यालय समाप्त होने पर पढ़ाया जाता था। इसे ट्रिनिडाड की तरह धार्मिक शिक्षा के अंतर्गत पढ़ाया जाता था।

स्कूलों में इसे सही स्थान न मिलने के कारण वहाँ की स्थानीय संस्थाएँ आर्य दिवाकर, सनातन धर्म और शांति दल आदि संस्थाएँ आगे आयीं। स्थानीय सहयोग से इन संस्थाओं ने मंदिरों और अन्य सार्वजनिक स्थानों में हिन्दी शिक्षा देना प्रारंभ

किया। लोक संगीत, चौताल आदि के माध्यम से भी बोलचाल की हिन्दी के प्रयोग को बल मिलता रहा। "1961 में भारतीय सांस्कृतिक संबंध परिषद ने सूरीनाम में हिन्दी प्राध्यापक की नियुक्ति की। इससे हिन्दी की व्यवस्थित रूप से पढ़ाई को बहुत प्रोत्साहन और नया मार्ग दर्शन मिला। ..... साथ ही 1962 में भारत की राष्ट्रभाषा समिति वर्धा की परीक्षाओं को भी आरंभ किया गया। .....सूरीनाम की सरकार ने इन्हें मान्यता भी प्रदान कर रही है।"[39]

सन् 1975 में आजादी मिलने पर वहाँ के उत्साही नवयुवक जो हिन्दी कक्षाएँ चलाते थे, वे हालैण्ड चले गए, इससे हिन्दी के प्रचार-प्रसर पर असर पड़ा। सन् 1978 में भारतीय दूतावास के स्थापन और प्रयास से पुनः एक बार हिन्दी की विधिवत पढ़ाई करने का कार्य शुरू हुआ। 'सूरीनाम हिन्दी परिषद' की स्थापना इसीलिए हुई। अवधी-भोजपुरी के सम्मिश्रण से बोली जाने वाली भाषा के नए विकसित रूप को 'सूरीनामी' कहने का आग्रह किया जाता रहा है। इसे देवनागरी लिपि के स्थान पर रोमन में लिखने पर ज्यादा जोर है। कुछ लोग देवनागरी में लिखी खड़ीबोली हिन्दी को अपनाना उचित मानते हैं। 'सूरीनाम हिन्दी परिषद' को दोनों ही विचारधारा के लोग सहयोग देते हैं। यह संस्था वहाँ पर प्रमुख रूप से हिन्दी शिक्षण का कार्य देखती है।

अनियमित रूप से वहाँ पत्र-पत्रिकाएँ भी प्रकाशित होती रहती हैं। भारतीय दूतावास द्वारा 'भारत समाचार' और सूरीनाम हिन्दी परिषद द्वारा 'सूरीनाम दर्पण' का प्रकाशन किया जाता है। 'शांतिदूत' 'धर्म प्रकाश' तथा 'वैदिक संदेश' आदि पत्रिकाएँ प्रकाशित होती हैं। ग्रहण व्यवस्था का अभाव होने से पुस्तकों का प्रकाशन आदि नहीं हो पाता है। भारत की हिन्दी फिल्में, भारतीय और भारतीय मूल के गायक, गायिकाओं के गीत, धर्म, संस्कृति आदि आज भी वहाँ हिन्दी के प्रचार-प्रसार में सहायक हैं। हिन्दी प्रचार में कुछ प्रमुख व्यक्तियों में पं.अमृत प्रसाद, बाबू राम सिंह, पं.श्रीकांत, गयाना के बाबू महातम सिंह आदि। लेखक के रूप में डॉ.लक्ष्मण सुरजन परोही तथा निवासी कविताएँ देवनागरी और डच दोनों वर्णमांलाओं में

प्रकाशित हो चुकी है।

हिन्दी भाषा-साहित्य के विकास में महत्वपूर्ण योग देने वालों में - डॉ.गोपी कोलेश्वर, डॉ. ज्ञान अधिन, प्रो.ए.ओमराव सिंह, बालकिरण दिहल, नवरंग प्रह्लाद, डॉ.भोगरा आदि हैं। इनमें से कुछ समय-समय पर रेडियो पर हिन्दी में व्याख्यान आदि देकर हिन्दी की सेवा कर रहे हैं। डॉ.श्यामधर तिवारी के प्रकाशित शोध ग्रन्थ (मॉरिशस में हिन्दी साहित्य का उद्भव और विकास) में सूरीनाम के कुछ साहित्य सेवियों की सूची इस प्रकार मिलती है - ''जहाँ तक साहित्य लेखन का प्रश्न है - सूरीनाम के प्रथम कवि - स्व.रहमानखान। ..... कवि श्री निवासी, अमरसिंह रमण, पं.सूर्यप्रसाद बीरे शूखीर, हरप्रसाद सरजू, पं.किशोर महताबसिंह, सत्यनारायण सिंह बालक की साहित्यिक सेवाएँ अनुकरणीय हैं।''[40] वहाँ हिन्दी नाटकों का मंचन भी किया जाता है।

इस तरह भारत से सोलह हजार किलोमीटर दूर होने पर भी सूरीनाम जैसे छोटे से देश में भारतवंशियों की हिन्दी सेवा का प्रयास प्रशंसनीय है। आज हिन्दी व्यावसायिक दृष्टि से उतनी सफल भाषा न होने पर भी हिन्दी के लिए यह उपयुक्त होगा कि भारतवंशियों में वह अपनी जड़ें मजबूत करें। हिन्दी आज भी सूरीनाम में भारतीय संस्कृति की अभिव्यक्ति का मुख्य माध्यम है। धर्म और संस्कृति को जीवित रखने के लिए भाषा का ज्ञान और प्रसार आवश्यक है।

रेडियो और दूरदर्शन द्वारा फिल्मों सहित अन्य मनोरंजक कार्यक्रमों के प्रसार से हिन्दी अपना प्रभाव बनाए रखती है। ''टेलीविजन के कई केंद्र हैं जिनमें आठ चैनलों पर चौबीस घंटे नई से नई हिन्दी फिल्में आती रहती हैं।''[41] इसके अलावा री-मिक्सि कैसेट के गाने और वीडियो अलबम भी वहाँ काफ़ी प्रचलित हैं। भारतीय लोकगीतों के गायक भी वहाँ अपने कार्यक्रम प्रस्तुत करते हैं। सूरीनाम की हिन्दी की अपनी विशेषता है - ''सूरीनामी हिन्दी का लिखित स्वरूप रोमन लिपि में है। सत्तर प्रतिशात अवधी, बीस प्रतिशत भोजपुरी और दस प्रतिशत डच भाषा से बनी

इस विशेष बोली का उच्चारण भी रोमन लिपि में लिखे होने के कारणवश विशिष्ट तरह की ध्वनियों से बना है।''[42] सूरीनाम का हिन्दी प्रेम मॉरिशस की तरह जहाँ एक ओर अनुकरणीय उदाहरण बना हुआ है, वहीं दूसरी ओर व्यावसायिकता, प्रयोजनमूलकता की दृष्टि से यहाँ हिन्दी पिछड़ती हुई भी नजर आ रही है। रोजी-रोटी की लालच में डच और क्रियोली की ओर प्रवासियों का ध्यान अधिक आकर्षित हो रहा है। आशंका व्यक्त की जा रही है कि यह अमूल्य धरोहर जो प्रवासी बँधुआ मजदूरों की संघर्षमय परिस्थिति में सदैव उनके साथ रही वह प्रवासियों से दूरस्थ न हो जाय, जैसा कि अन्य कैरेबियाई देशों में हुआ। अभी यह मात्र आशंका है, शायद प्रवासी भारतीय इसे सच नहीं होने देंगे। यहाँ सम्पन्न सातवाँ विश्व हिन्दी सम्मेलन भी मुख्य रूप से 'विश्व हिन्दी : नई शताब्दी की चुनौतियाँ' विषय पर केन्द्रित था। सूरीनाम के प्रवासी भारतीय समाज का भारत के प्रति भावनात्मक संबंध सुदृढ़ है। इसका समर्थन करते हुए वहाँ के हिन्दी कवि अमर सिंह लिखते हैं - ''इस प्रकार हम देखते हैं कि 130 वर्षों में सूरीनाम के भारत वंशियों ने अपनी भाषाई एवं सांस्कृतिक विरासत को सुरक्षित रखा है तथा सूरीनाम में हिन्दी के प्रचार प्रसार में महत्वपूर्ण योगदान दिया है। वे सूरीनाम को अपना देश समझते हैं लेकिन उनके मन में हिन्दुस्तान, हिन्दुस्तानी संस्कृति और हिन्दी भाषा की त्रिवेणी सतत प्रवाहित होती रहती है।''[43] सूरनाम का भारतवंशी जीवन के हर क्षेत्र में पर्याप्त सम्पन्न और प्रभावशाली है। अगर वह चाहे तो अपने आर्थिक प्रभाव के बल पर राजनीतिक और भाषिक अस्थिरता के भय को समाप्त कर सकता है।

2.1.6 फीजी में गिरमिटिया और हिन्दी :

फीजी आस्ट्रेलिया के निकट स्थित 332 अत्यंत छोटे-छोटे द्वीपों का समूह है। यह देश प्रशांत महासागर की गोद में स्थित है। सन् 1874 में इन द्वीपों के समूह फीजी देश पर अंग्रेजों का अधिकार हो गया। गुलामी प्रथा समाप्त होने पर वहाँ पर गन्ने की खेती के अलावा अन्य कृषि कार्य के लिए मजदूरों की आवश्यकता

थी। अंग्रेजों ने पाया कि इसके लिए सस्ते मजदूर भारत में उपलब्ध थे। एग्रीमेंट के अनुसार 'कुली प्रथा' के अधीन शर्तबन्द बंधुआ मजदूरों को सन् 1879 से 1916 तक फीजी ले जाया गया। गिरमिट की प्रथा समाप्त होने पर अधिकांश भारतीय मजदूर हमेशा के लिए वहीं बस गए। 10 अक्तूबर, 1970 को फीजी उपनिवेशवादी अंग्रेजी हुकूमत से मुक्त हुआ। इस तरह फीजी राष्ट्र आज एक नवोदित गणतंत्र है। इसकी राजधानी सुवा है। 2,74,000 वर्ग कि.मी. क्षेत्रफल का यह देश बहुलतावादी संस्कृति को अपने में समेटे है। मुख्य रूप से ईसाई, हिन्दू और इस्लाम मतावलंबियों के इस देश की जनसंख्या सवा आठ लाख के आसपास है। पिछले वर्ष भारत सरकार द्वारा भारत में 'प्रवासी भारतीय दिवस' के अवसर पर प्रवासी भारतीयों की विश्वव्यापी संख्या लगभग दो करोड़ मानी गई। हैदराबाद (भारत) से प्रकाशित हिन्दी दैनिक 'हिन्दी मिलाप' के 12 जनवरी, 2003 के अंक में फीजी में रहने वाले खास भारतीय मूल के लोगों की संख्या 3,36,829 मानी गई। (मनोरमा वार्षिकी 2003 में कुल जनसंख्या 8,23,000 और भारतीयों की संख्या करीब आधी बताई गई है।) भारतीय मूल के लोगों की एक बड़ी तादाद वहाँ पर रहती है। फीजी स्थित भारतीय हाई कमीशन में राजनायिक रहे श्री विमलेश कांति वर्मा इसे 'विश्व की सुरम्य स्थली' मानते हैं।

वे लिखते हैं - ''दुनिया के नक्शे पर एक छोटा बिंदु जिसे वहाँ के भारतीय 'रमणीक द्वीप' कहते हैं, जहाँ तुलसीदास लिखित रामचरित मानस को रामायण महारानी कहकर पूजा जाता है, जहाँ देश की आधी से अधिक जनता हिन्दी बोलती है और लगभग सारा देश हिन्दी समझता है, जहाँ भारतीय अच्छे-अच्छे पदों पर कार्यरत हैं, उनकी अपनी सामाजिक प्रतिष्ठा है, वह देश प्रकृति की सुरम्य स्थली है।''[44]

भूमध्यरेखा से फीजी की दूरी 1,600 मील है। फीजी का 97 प्रतिशत जलभाग तथा 3 प्रतिशत (7,022 वर्ग मील) स्थल भाग है। वीती लेवू और

वनुआलेवू यहाँ बड़े द्वीप हैं। सूवा, नांदी, सिंगाटोका, लौटोका तथा लम्बासा आदि प्रमुख नगर हैं। ब्रिटिश, आस्ट्रेलियन, न्यूजीलैण्डर, चीनी, भारतीय मूल के निवासी तथा मूल फीजियन इस बहुजातीय देश के निवासी हैं। इसका अधिक लेन-देन शिक्षा एवं व्यापार आदि आस्ट्रेलिया द्वारा संपन्न होता है। यह एक दर्शनीय पर्याटक स्थल है। गन्ना कीमती लकड़ियाँ, नारियल आदि का निर्यात होता है। फीजी में आजादी के बाद सन् 1987 में एक बार कर्नल रबूका के नेतृत्व में सशस्त्र सत्ता परिवर्तन हुआ। बाद में संवैधानिक चुनाव हुए। मई, 2000 में एक फीजियन व्यवसायी-राजनीतिज्ञ के नेतृत्व में भारतीय मूल के तत्कालीन प्रधानमंत्री श्री महेन्द्र चौधरी को कैबिनेट मंत्रियों संहित 55 दिनों के लिए बन्दी बना लिया गया था। अभी तक इस घटना से उत्पन्न संवैधानिक संकट का उचित हल नहीं निकल पाया है। आज फीजी में देश के अन्य आदि-निवासियों-प्रवासियों के साथ भारतीय गिरमिटियों की तीसरी-चौथी पीढ़ी रहती है जो संपन्न और सुशिक्षित है और कन्धे से कन्धा मिलकर देश के विकास में अपना सहयोग दे रही है। भारतीय वहाँ सुप्रतिष्ठित हैं। 'प्रवासी भारतीयों की हिन्दी सेवा' पर शोध करने वाली लेखिका श्रीमती कैलाश कुमार सहाय फीजी को 'भारत का हृदय द्वीप फीजी' मानती हैं। यह नवोदित राष्ट्र फीजी का भारत से नजदीकी रिश्ता दिखाता है।

2.1.6.1 फीजी में भारतीय :

1879 में फीजी में भारतीयों का आगमन ब्रिटिश सरकार द्वारा लागू की गई शर्तबन्दी मजदूर प्रथा के साथ आरंभ हुआ। तब से लेकर 1916 में समाप्त शर्तबन्द प्रथा की समाप्ति तक भारतीयों को लगातार वहाँ ले जाया जाता रहा। फीजी में भारतीय सबसे पहले 15 मई, 1879 को 'लेवनीदास ' जहाज से पहुँचे। इस जहाज में 463 व्यक्ति थे जो गन्ने के खेतों में काम करने के लिए बहला-फुसला कर लाए गए थे। इसके बाद तो 11 नवंबर, 1916 तक 87 जहाजों द्वारा हजारों भारतीय फीजी पहुँचे। हरिबाबू कंसल अपनी पुस्तक 'विश्व में हिन्दी' खण्ड-दो में

लेवनीदास जहाज में गए भारतीयों की संख्या 481 बताते हैं। पंडित तोताराम ('फीजी का इतिहास' के लेखक [अप्रकाशित]) ने भी संख्या 481 मानी है। कंसल बाबू फीजी गए प्रवासी भारतीयों की कुल संख्या 63,000 मानते हैं जबकि विमलेश कांति वर्मा और धीरा वर्मा ने अपनी पुस्तक 'फीजी में हिन्दी' के एक विशेषांक (11-5-1979) का संदर्भ देते हुए उसमें दी गई सूची के माध्यम से 87 जहाजों के द्वारा फीजी गए भारतीयों की संख्या 85,439 बताई है। दिए गए आँकड़ों से यह स्पष्ट होता है कि अधिकांश मजदूर हिन्दी प्रदेशों के थे जिनमें बस्ती, गोंडा, सुल्तानपुर, आजमगढ़, गोरखपुर, इलाहाबाद, जौनपुर, शाहाबाद, गाजीपुर, रायबरेली, प्रतापगढ़, बाराबंकी, गया, बहराइच, रायपुर, बनारस, पटना, लखनऊ, कानपुर, उन्नाव, आगरा, मिर्जापुर एवं जयपुर क्रमानुसार संख्या की दृष्टि से दिए गए हैं।

इस तरह फीजी में भारतीय बंधुआँ मजदूरों ने प्रायः चालीस वर्षों तक संघर्ष और अपमान का जीवन बिताया। तदुपरांत आरंभ हुआ उनके मानसिक संघर्ष का काल। शर्तबन्द मजदूरी की प्रथा की समाप्ति ने भारतीयों को आत्मनिर्भरता की दिशा दिखाई और फिर शुरुआत हुई सामाजिक, राजनीतिक, आर्थिक और शैक्षिक संघर्ष की। सन् 1970 में आजादी मिलने के बाद राजनीतिक और सामाजिक संघर्ष पुनः गहराया और आज तक यथास्थिति बनी हुई है। शिक्षण तथा व्यवसाय में भारतीयों की स्थिति सुदृढ़ है। वे आज सरकारी तंत्र के प्रत्येक हिस्से में अपना योगदान दे रहे हैं। उनकी संख्या भी महत्वपूर्ण है। मूल फीजियन और भारतीय मूल के फीजियन लोगों के मध्य पिछले दो दशकों के राजनीतिक और सामाजिक संबंध अस्थिर रहे हैं। आज वहाँ भारतीय मूल के लोगों की तीसरी-चौथी पीढ़ी अपने सामर्थ्य को बनाए रखने और राष्ट्र निर्माण की ओर अग्रसर है। फीजी गए भारतीय बंधुआ मजदूरों का वर्णन करते हुए अंग्रेजी दैनिक *'द हिन्दू'* में प्रकाशित अपने एक लेख में श्री सैमराजप्पा लिखते हैं - ''फीजी की राजधानी 'सुवा' के नियुक्त गवर्नर अर्थर गॉर्डन ने अपने प्रमुख अधिकारियों से अनुरोध किया कि - फीजी के जंगलों

को साफ़ करने और गन्ने की खेती के लिए भारत से बंधुआ मजदूरों की भर्ती की जाय। कोलकत्ता और चेन्नई में देशी मजदूर डिपो खोले गए। मई, 1879 और नवंबर, 1916 के मध्य जब बंधुआँ मजदूर प्रथा बन्द कर दी गई, तब 87 जहाजों में 60,533 मजदूर भारत से फीजी भेजे गए। गिरमिट समझौते के अनुसार आरंभ में उन्हें पाँच वर्ष तक कार्य करना था. उसके बाद उन्हें मुक्त कर दिया जाना था ..... अगर वे पुनः पाँच वर्ष के लिए तैयार होते तो उन्हें वापसी किराये का वादा किया जाता। मुश्किल से कोई वापसी के लिए तैयार हुआ। शर्तबन्द प्रथा की समाप्ति के बाद और भी भारतीय जिनमें अधिकांश गुजरात से थे, फीजी आए और नए अपनाए गए देश में व्यावसायिक कार्यों में लग गए। .....एक मिली जुली हिन्दी उनकी बोलचाल की भाषा बनी।''[6]

फीजी गए शर्तबन्द मजदूरों से धीरे-धीरे सामाजिक चेतना का विकास हुआ। विभिन्न दबावों के बावजूद वे नैतिक जागरूकता की ओर झुके। हिन्दी भाषा के सहारे सांस्कृतिक पर्व एवं त्योहारों का मनाया जाना सदैव आम बात रही। वहाँ के जीवन में हिन्दी भाषा-साहित्य का विधिवत रूप से भले ही प्रचार-प्रसार न हुआ हो परन्तु किसी ने भी इसे छोड़ना नहीं चाहा है। प्रवासी भारतीयों का जीवन मुख्य रूप से उन्नीसवीं सदी से लेकर आज तक 'आजीविका और सुखमय जीवन' की तलाश का जीवन रहा है। धर्म परायण, कर्तव्यवान भारतीय आज भी वहाँ अपनी भाषा और संस्कृति को भूला नहीं है, भले ही परिस्थिति वश इसका प्रयोग व प्रसार न कर पा रहा हो।

2.1.6.2 फीजी में हिन्दी :

संख्या की दृष्टि से अधिकतर प्रवासी भारतीय विश्व के जिन देशों में प्रमुख रूप से बसे थे, फीजी उनमें एक है। गिरमिटिया देशों में फीजी शर्तबंद मजदूरों का अन्तिम और सबसे दूरस्थ पड़ाव था जहाँ वे भारी संख्या में गए। फीजी जाने वाले उन गिरमिटिया मजदूरों में अधिकांश उत्तर प्रदेश और बिहार के थे। भारत के अन्य

प्रांतों से गए लोग भी वहाँ गए। हम पाते हैं कि फीजी में भारतीयों का एक बड़ा वर्ग रहता है। उसमें दक्षिण भारत, पंजाब, गुजरात तथा उत्तर प्रदेश के लोग ज्यादा हैं। गुजराती लोग सामान्यतः व्यापारी वर्ग के हैं, दक्षिण भारतीय ज्यादातर सरकारी कर्मचारी हैं। पंजाब, उत्तर प्रदेश तथा बिहार के लोग अधिकांशतः कृषक हैं। फीजी में प्रारंभ से ही हिन्दी भाषा-भाषी संख्या में अधिक थे। इसलिए स्वाभाविक था कि हिन्दी भाषा वहाँ के सभी भारतीयों के बीच अभिव्यक्ति का माध्यम बनती। अन्य भारतीय भाषाओं ने भी हिन्दी को अपनी शब्दावली से समृद्ध किया। वैसे देखा जाए तो फीजी में भारतीयों के मध्य बोली जाने वाली हिन्दी, हिन्दी का अवधी मिश्रित रूप है। श्रीमती धीरा वर्मा के अनुसार ''सबको जोड़ने वाली भाषा हिन्दी ही रही है, चाहे वे किसी भी प्रांत के लोग हों।''[46]

फीजी में हिन्दी का प्रवेश गिरमिटिया मजदूरों के प्रथम दल के साथ 15 मई, 1879 को ही हो गया था; जब उन्होंने भारत छोड़कर 'लेवनी दास' जहाज से फीजी के लेश्का बन्दरगाह पर पहली बार कदम रखा। तब से लेकर 1916-17 तक लगातार भारतीय शर्तबन्द स्त्री-पुरुष मजदूर वहाँ ले जाए जाते रहे और उनके आगम के साथ-साथ हिन्दी बोलने वालों की संख्या, फीजी में निरंतर बढती गई। आज यह हिन्दी के बहुसंख्यक समाज की भाषा है।

अप्रवासी भारतीय विरासत के रूप में अपनी बहुभाषिक और सामासिक संस्कृति भी अपने साथ ले गए थे। कर्मवादी और परिश्रमी भारतीय सांस्कृतिक रूप में भी आत्मनिर्भर थे। उनकी भारतीय संस्कृति कृषि संस्कृति थी। उन्होंने फीजी की उर्वर भूमि पर कपास, गन्ना, नारियल आदि की खेती कर देश को आर्थिक रूप से आत्म-निर्भर बनाया। ये मजदूर मुख्यतः पूर्वी उत्तर प्रदेश के थे। इसीलिए इनकी भाषा उसी आधार पर विकसित हुई। मॉरिशस में जिस तरह भोजपुरी, खडीबोली हिन्दी के विकास में सहायक हुई, उसी प्रकार फीजी में पूर्वी हिन्दी का अवधी और ब्रज सम्मिश्रित रूप अधिक प्रखर है।

हिन्दी भाषा की रचना के बारे में फीजी के प्रो.सुब्रमणी कहते हैं - ''वहाँ की हिन्दी फीजी हिन्दी कही जाती है। जो मूलतः भोजपुरी, अवधी, ब्रजभाषा और हिन्दुस्तानी का मिला-जुला रूप है। इसमें अंग्रेजी और स्थानीय भाषाओं का मिश्रण भी है।''[47]

सन् 1879 से सन् 1916 तक भारतीयों का वहाँ जाना बना रहा। इस दौरान एक संस्थान के रूप में हिन्दी भाषा को कुछ भी प्रोत्साहन प्राप्त नहीं हुआ। सन् 1916 में पहली भारतीयमूल के लोगों की पाठशाला स्थापित हुई। अब तक पूर्वी हिन्दी के बिल्कुल निकट की एक ऐसी हिन्दी का विकास हो चला था जो हिन्दुस्तानी मानी जा सकती है। धीरे-धीरे बहुत-सी भारतीय पाठशालाएँ खुलीं। फीजी की आजादी के पहले से ही वहाँ हिन्दी में छुटपुट साहित्यिक लेखन होने लगा था, साथ ही उसमें पत्रकारिता एवं कतिपय भाषिक शैलियों का आरंभ भी। इसमें हिन्दू, ईसाई सबका सहयोग था। हरिबाबू कंसल अपनी पुस्तक 'विश्व में हिन्दी खण्ड-2 में लिखते हैं - ''फीजी का शासन अंग्रेजों के हाथों में था। अंग्रेजी यहाँ की राजभाषा थी। गन्ने के फार्मों के मालिक अंग्रेज थे। उनके मुसाहिब और कुलम्बर भी अंग्रेजी या अधगोरे होते थे, परंतु वे भारतीय मजदूरों से उनकी भाषा और संस्कृति नहीं छीन पाए। उल्टे इन गौरांग प्रभुओं और कुलम्बरों को हिन्दी सीखनी पड़ी। ईसाई पादरियों ने भी स्कूल खोले। अंग्रेजी का प्रचार-प्रसार किया, परंतु वे हिन्दी को नजरअंदाज नहीं कर सके। उन्हें भी हिन्दी सीखनी पड़ी। उन्होंने अपने धर्म प्रचार का माध्यम हिन्दी को अपनाया, यहाँ तक कि सरकारी क्षेत्र में भी हिन्दी का महत्व पहचाना गया। जो भी कानून-कायदे बनाए जाते थे वे जनभाषा हिन्दी में तैयार करके भारतीयों के लिए प्रसारित किए जाते थे। इसी प्रकार सार्वजनिक सूचनाएँ भी हिन्दी में दी जाती थीं। इस तरह सरकारी कामकाज में भी हिन्दी का प्रवेश पिछली शताब्दी के अन्तिम दशकों में हो चुका था।''[48]

रामचरित मानस जैसे हिन्दी के भारतीय धर्म ग्रन्थ तथा तोता-मैना जैसी

कहानियाँ भी इसके क्रमिक विकास में सहायक थीं। आगे चलकर हिन्दी पत्र-पत्रिकाएँ भी निकली जो हिन्दी के स्वरूप को प्रौढ़ बनाने में सहायक रहीं। आजादी के बाद फीजी हिन्दी या 'फीजीबात' पूरी स्थापित हो चुकी थी। बाद में स्वतंत्र लेखन की दिशा में प्रगति हुई। इस प्रगति में फीजी रेडियो, हिन्दी संबंधी संस्थाएँ, सरकार रंगमंच आदि सहयोगी हैं। अपनी सीमाओं के बावजूद फीजी में हिन्दी के व्यवहार का दायरा धीरे-धीरे बढ़ता जा रहा है।

भाषा के व्यावहारिक प्रयोग के साथ व्यावसायिकता का पहलू भी प्रमुख है। फीजी में हिन्दी का प्रयोग व्यावहारिक और व्यावसायिक दृष्टि से भी करते हैं। रोजी-रोटी को प्रमुख स्थान देने पर निश्चित रूप से हिन्दी वहाँ प्रथम स्थान नहीं प्राप्त कर सकी है। इसीलिए लोगों का दृष्टिकोण कुछ भिन्न देखा जाता है। वहाँ अंग्रेजी के प्रोफेसर और प्रसिद्ध हिन्दी उपन्यास 'दउका पुराण' के लेखक श्री सुब्रमणी अब इस दृष्टिकोण में बदलाव पाते हैं। वे कहते हैं - ''भारतीय लोग एक समय यह समझते थे कि हिन्दी पढ़कर क्या फ़ायदा, इससे न तो नौकरी है और न ही कोई व्यावसायिक लाभ। लेकिन अब यह दृष्टिकोण बदल रहा है।''[49] हिन्दी के लिए यह शुभ संकेत है।

इस तरह शर्तबन्द मजदूरों (जिन्हें गिरमिटिया कहा जाता है।) के माध्यम से हिन्दी को वैश्विक स्वरूप मिला। हिन्दी का यह विकास मजबूरी और संघर्ष की उपज है। 'प्रवासी भारतीयों की हिन्दी सेवा' विषय पर शोध करने वाली डॉ.कैलाश कुमारी सहाय मानती हैं कि ''हिन्दी को विश्व के सभी देशों में, दक्षिणपूर्वी एशिया, श्रीलंका, फीजी, मॉरिशस, गयाना, दक्षिण अफ्रीका तथा दक्षिण अमरीका के अन्य राज्यों में किसी संस्था या विद्वज्जनों ने नहीं फैलाया वरन् भारत की गरीबी और यहाँ के गरीबों ने रोजी-रोटी की खोज में विदेशों में विस्तार किया। प्रवासी भारतीय मजदूर जिन देशों में गए वहाँ हिन्दी स्वतः चली गई।''[50] इस तरह विदेशों में हिन्दी की ऐतिहासिक पृष्ठभूमि के पीछे प्राणवंत भारतीय सभ्यता और कर्मवादी संस्कृति

प्रमुख हैं। शर्तबन्द मजदूरों का कोई और भाषा न जानना भी एक कारण था जिससे कि वे हिन्दी को छोड़ नहीं पाए। उनकी निरक्षरता, निःसहायता भी अन्य कारण थे। संघ भावना एवं विश्व बंधुत्व का भाव इसके स्वरूप को व्यापक बनाने में सहायक हुआ है। आजादी हेतु भी तत्संबंधी देशों में हिन्दी को हथियार बनाया गया। आगे चलकर इसे अस्मिता की पहचान के साथ जोड़ दिया गया। इससे इसकी महत्ता बढ़ गई। आज उपरोक्त देशों में हिन्दी भाषा और साहित्य भारतीय संस्कृति के प्राणरक्षक और पोषक तत्व हैं।

2.2 विश्व के अन्य देशों में हिन्दी का स्वरूप :

भाषा व्यक्ति की धरोहर है। व्यक्ति का प्रवास, भाषा के विस्तार और विकास का कारण बनता है। इसके सहारे अन्य देश या समुदाय में भाषा की सांस्कृतिक छाप स्पष्ट रूप से देखी जा सकती है। प्रवास व्यक्ति के जीवन की सच्चाई है। स्थान परिवर्तन या स्थानान्तरण उसके जीविकोपार्जन का सत्य है। यह प्रवास इच्छानुसार मजबूरन अथवा जीविकोपार्जन की आवश्यकता भी हो सकता है। इतिहास गवाह है कि भारतीयों का भी विदेश या परदेश गमन उनके जीविकोपार्जन से संबंधित रहा है। मजदूरी, शिक्षा और नौकरी इत्यादि कारणों से सदियों से भारतीय बाहर जाते रहे हैं। भले ही उनके प्रवास के कारण और समय पूरी तरह से स्पष्ट न हों परन्तु स्पष्टता की हद तक जो बात हमारे मस्तिष्क को कौंधती है वह है भारतीयों का बंधुआँ मजदूर के रूप में अनजाने देशों को प्रस्थान। मानव प्रकृति प्रदत्त पंचेंद्रियों और अथाह अनुभूतियों का धनी है। आर्थिक रूप से क्षीण भारतीयों को भले ही देश छोड़ना पड़ा हो परन्तु समाज एवं संस्कृति द्वारा प्रदान ज्ञान, भाषा एवं अनुभव सदैव उनके साथ था। भाषा, संस्कृति, ज्ञान और अनुभव की गठरी उन पर बोझ साबित नहीं हुई बल्कि उन्हें संघर्ष करने की शक्ति और जीने का माद्दा दिया। उत्तरोत्तर जब शिक्षित भारतीय और नौकरीशुदा लोगों का प्रवास हुआ तब भी उनकी भाषा, उनके गुण एवं उनकी संस्कृति उनके साथ रही। इसमें निश्चित रूप

से अधिकांश लोग हिन्दी के जानने वाले लोग थे। हिन्दी के अन्तर्राष्ट्रीय स्वरूप का विकास अंग्रेजों के उपनिवेशवादी नीति से हुआ।

संख्या की दृष्टि से 19वीं शताब्दी के भारतीय मजदूरों का प्रवास महत्वपूर्ण था। उनके प्रवास में उनकी बेबसी और ताड़ना थी। तब उनके पास अपनी जबान तो थी पर उन्हें इसके खुले प्रयोग की अनुमति तक नहीं थी। संख्या की दृष्टि से ही बीसवीं सदी में भारतीयों का प्रवास भी महत्वपूर्ण है। यह अंग्रेजी उपनिवेशों में नहीं बल्कि दुनिया के विकसित देशों में हुआ। वे मजदूर नहीं बल्कि अपनी शक्ति, बुद्धिमत्ता और ज्ञान के सहारे शिक्षक, प्रचारक, कलाकार, डॉक्टर, इंजीनियर, वैज्ञानिक, विद्यार्थी, विद्वान, सरकारी, ग़ैरसरकारी ऑफीसर, तकनीकी रूप से दक्ष एवं व्यवसायी के रूप में बाहर गए। यह प्रवास गर्वीले भारतीयों के ज्ञान, सुविधा और आर्थिक विकास को दृष्टि में रखकर किए गए निर्णय का फल था।

हिन्दी की वैश्विकता पर दृष्टि डालते हुए हिन्दी मासिक पत्रिका 'वागार्थ' (जनवरी, 2003) के संपादकीय के अनुसार - ''इस समय संसार के लगभग एक सौ बीस देशों में अप्रवासी भारतीय या भारतीय मूल के दो करोड़ लोग रहते हैं, जिनमें से अधिकांश हिन्दी समझ लेते हैं।''[51] वे पुनः लिखते हैं कि ''संसार के 154 विश्वविद्यालयों में एवं महत्वपूर्ण विदेशी संस्थानों में हिन्दी के पठन-पाठन की सुविधा है।''[52]

निश्चित रूप से अन्तर्राष्ट्रीय क्षितिज पर हिन्दी एक भाषा के रूप में बड़ी तीव्रता से उभर रही है। आज यह यूरोप, एशिया, अमरीका और अफ्रीका के साथ-साथ आस्ट्रेलिया आदि सारे महाद्वीपों में एक विशिष्ट आकार ले रही है। भाषा-प्रयोग के साथ-साथ विश्व के कई देशों में कई स्तरों पर हिन्दी लेखन का कार्य भी किसी न किसी रूप में चल रहा है। इसका आकलन विभिन्न देशों में चल रहे पठन-पाठन, लेखन एवं भाषा प्रयोग के कार्य, भारतीयों और भारतीयेतर लोगों के माध्यम

से किया जा सकता है। हिन्दी का विश्व के देशों में प्रसार, उसकी सार्थकता, अनिवार्यता और भारत की भाषिक और सांस्कृतिक एकता के दृष्टिकोण से मूल्यवान है।

इस तरह पिछले सात विश्व हिन्दी सम्मेलन हुए, जिनमें चार भारत में न होकर लैटिन अमेरिका, यूरोप और अफ्रीका आदि महादेशों में संपन्न हुए। हिन्दी ने वैश्विक स्तर पर अपने अस्तित्व और अस्मिता के कई आयाम अर्जित किए हैं। इस तरह इसके वैश्विक परिवार का निर्माण हुआ है। इस दिशा में कुछ देशों की छवि अधिक प्रखर रही है। उन्हें महादेशों की अलग अलग श्रेणी में रखकर हिन्दी के वैश्विक स्तर को देखा जा सकता है।

2.2.1एशिया में हिन्दी :

एशिया सर्वाधिक आबादी वाला महाद्वीप है। यहाँ सर्वाधिक भाषा वैविध्य देखने को मिलता है। दुनिया की अधिकांश आबादी का निवास द्वीप होने के कारण लोगों का एक देश से दूसरे देश प्रवास गमन एक साधारण बात है। भारत के लोग भी जीविकोपार्जन और व्यवसाय आदि के लिए दुनिया के भिन्न-भिन्न देशों को जाते रहे हैं। एशिया महाद्वीप के प्रायः सभी देशों में भारतीय लोग रहते हैं। वे जहाँ जहाँ भी हैं, अपने साथ भाषा-संस्कृति संजोए हुए हैं। हिन्दी का स्वरूप एशिया में व्यापक तौर पर फैला हुआ है। कई देशों की मुद्रा का नाम भी भारतीय मुद्रा रूपया के नाम पर है। सन् 1947 में विभाजन के समय पाकिस्तान की प्रायः समूची जनसंख्या हिन्दुस्तानी से परिचित थी। पाकिस्तान की भाषा उर्दू होने के बावजूद भी हिन्दी आसानी से समझी जाती है। कुछ राजनीतिक कारणों से इसके प्रयोग को भले ही बढ़ावा न मिल रहा हो परन्तु इसका अस्तित्व वहाँ सुरक्षित है। यही हाल नेपाल का भी है। इसके अलावा चीन, जापान, कोरिया, मलेशिया, सिंगापुर, श्रीलंका, भूटान एवं सोवियत संघ रूस के विभाजित कुछ राष्ट्रों में हिन्दी का प्रयोग-पठन-पाठन आज भी हो रहा है। एशिया के कुछ प्रमुख देशों में हिन्दी की स्थिति का अवलोकन

आगे किया जा सकता है।

2.2.1.1नेपाल में हिन्दी :

भारत और नेपाल प्राचीन काल से ही धार्मिक-सांस्कृतिक और भौगोलिक परम्परा के बराबर के भागीदार रहे हैं। हिन्दी और नेपाली आपसी सान्निध्य के कारण एक दूसरे पर अपना प्रभाव छोड़ती रही हैं। दोनों भाषाओं की लिपि संपन्न होने के कारण, अद्‌भुत रूप से समान हैं। हिन्दी की कुछ बोलियों और नेपाली का विकास शौरसेनी प्राकृत से हुआ। इसी कारण हिन्दी सीखने और समझने में नेपाल निवासियों को आसानी होती है। फलतः आज नेपाल में भारी मात्रा में हिन्दी बोली, समझी और पढ़ी जाती है। नेपाली के बाद हिन्दी वहाँ दूसरी प्रसिद्ध भाषा है। भारतीय संविधान में नेपाली को संवैधानिक दर्जा प्राप्त है। यह हाल नेपाल में नहीं है किन्तु आधे से अधिक लोग इस भाषा के बोलने वाले लोग हैं और तीन चौथाई से अधिक लोग इसे जानते हैं। दोनों देशों के मजबूत और पारस्परिक सांस्कृतिक भाषिक संबंध होने के कारण हिन्दी उनके सांस्कृतिक जीवन का आधार और अंग बन गई है। बहुभाषी देश होने के कारण नेपाल में भाषाओं का संतुलन और समुचित नियोजन का अभाव है। हिन्दी की विभिन्न बोलियों का प्रयोग नेपाल में सौ वर्षों से होता रहा है। इससे संबंधित उद्धरण इस प्रकार देखा जा सकता है - ''मध्ययुग में काठमण्डू उपत्यका में मैथिली, ब्रजभाषा (हिन्दी) आदि का भी प्रयोग होता था। उपत्यका से बाहर, पूर्वी तथा पश्चिमी नेपाल के राजगण स्थानीय भाषाओं में, मैथिली, भोजपुरी, अवधी के साथ हिन्दी (ब्रजभाषा) का प्रयोग करते हैं।''[53]

एक अन्य विवरण इस प्रकार मिलता है ''नेपाल में संवत् 2018 साल तक हिन्दी, शिशु कक्षा से लेकर विश्वविद्यालय तक शिक्षा की माध्यम भाषा थी।''[54] यहाँ तक कि नेपाली भाषा और साहित्य के विकास में भी हिन्दी भाषा और साहित्यकारों का महत्वपूर्ण योगदान रहा है। हिन्दी फ़िल्में वहाँ काफ़ी प्रचलित हैं। इसके अलावा

हिन्दी पत्र-पत्रिकाएँ खूब पढ़ी जाती हैं। नेपाल की तराई के लोगों के लिए आज भी हिन्दी सर्वाधिक महत्वपूर्ण और सम्पर्क भाषा का कार्य करती है। यहाँ यह उनकी संस्कृति की पहचान है। वे आज भी इसे अपनी भाषा मानते हैं। हिन्दी वहाँ पहली, दूसरी और तीसरी भाषा के रूप में व्यवहृत होती है। आज भी साहित्य सृजन का कार्य होता है। मोतीराम भट्ट, लोकनाथ, देवकोटा, बी.पी.कोइराला भिक्षु, गोपाल सिंह नेपाली, केदारमान सिंह, शुक्रराज, शास्त्री, महात्मा खप्तर, डॉ.कृष्णचंद्र मिश्र तथा काशी प्रसाद श्रीवास्तव आदि हिन्दी और नेपाली के कवियों ने भी प्रचुर मात्रा में हिन्दी में साहित्य सृजन किया है। महाविद्यालयों और त्रिभुवन विश्वविद्यालय में हिन्दी में शोधकार्य आदि होता है। 'साहित्य लोक' और 'नेपाली आरोहण' नाम की पत्रिकाएँ भी प्रकाशित होती हैं।

हिन्दी के विकास का सुकार्य आज के 30-35 वर्षों पूर्व सुचारु रूप से चल रहा था। परन्तु पंचायती व्यवस्था के दौरान हिन्दी की शिक्षा संस्थानों से प्रायः बहिष्कृत हो चुकी हैं। आज हिन्दी वहाँ स्कूल की नौवीं-दसवीं जैसी कक्षाओं में ऐच्छिक विषय के रूप में पढ़ाई जाती है। इसे विदेशी भाषा घोषित किया गया है। शिक्षा, संचार व्यवस्था और प्रशासन में इसके प्रयोग को नकारा जा रहा है। यह पंचायती व्यवस्था की संकीर्णता के साथ-साथ उनकी अदूरदर्शिता का परिचय भी कराती है। नेपाल की गणतांत्रिक राजनीति मात्र इसके लिए जिम्मेदार नहीं मानी जा सकती है।

इतना सब कुछ होने के बाद भी हिन्दी सुव्यवस्थित रूप से न सही परन्तु भाषा और साहित्य के रूप में अपनी विकास यात्रा में प्रगतिशील है। भारत की हिन्दी संस्थाएँ एवं नेपाल की दूरदर्शी सरकार अगर थोड़ा-सा भी ध्यान दें तो समस्याओं का एक हद तक समाधान हो सकता है। हिन्दी फ़िल्में, हिन्दी भाषा विस्तार में अपना सार्थक सहयोग दे रही हैं। अधिकांश नेपालियों का भाषा के प्रति सकारात्मक रवैया और हिन्दी भाषा-भाषियों का भाषा संघर्ष इसके विकास को आज नहीं तो कभी जरूर वेगवान बनाएगा।

2.2.1.2 बर्मा में हिन्दी :

पहले बर्मा भारत का अंग था और सन् 1825 से 1856 के बीच में अंग्रेजों ने वहाँ अपना अधिकार जमा लिया। आगे चलकर ''सन 1897 में भारत के कुछ लोगों को ब्रह्मक्षेत्र के कुछ क्षेत्र भी दिए गए कि उन्हें बसावें।''[55] वहाँ गए इन हिन्दी क्षेत्रीय अनपढ़ भारतीय अपने साथ ले गई भाषा और संस्कृति की रक्षा येन केन प्रकारेण करते रहे। ''सन्1916 में हिन्दी की विधिवत शिक्षा का आरंभ 'आर्य समाज' माण्डले द्वारा माण्डले में डी.ए.वी स्कूल की स्थापना से हुआ।''[56] आगे चलकर बर्मा में 'ब्राह्मण सभा' की स्थापना के बाद सैकड़ों स्कूल खुले। सरकार ने भी वर्नाक्युलर स्कूल खोले जिसमें कई भारतीय भाषाओं को पढ़ाया जाने लगा। बर्मा में हिन्दी के प्रचार-प्रसार में हिन्दी साहित्य सम्मेलन ने भी सक्रियता से भाग लिया। इसके अलावा 'शारदा सदन' संस्था, हिन्दी साहित्य सम्मेलन के तत्वावधान में प्रौढ़ कक्षाएँ, राष्ट्रभाषा प्रचार समिति, वर्धा आदि ने कई परीक्षाओं का संचालन किया।

हिन्दी के प्रचार-प्रसार, लेखन और प्रोत्साहन के क्षेत्र में कुछ प्रमुख हिन्दी सेवी-प्रचारकों के नाम निम्नवत हैं - विजय बहादुर सिंह, पलटू सिंह, पं.ईश्वरदत्त, मास्टर मोहन, नन्दलाल, त्रिशूलधारी ओझा, दूधनाथ सिंह, रामचंद्र विद्यालंकार, कैलाशपति सिंह, पं.अमरनाथ शर्मा, आचार्य सत्यनारायण गोइन्का, गौतम भारद्वाज, श्यामलाल भारती, इ.पारगू और डॉ.ओमप्रकाश आदि।

भारत की हिन्दी भाषी जन संख्या और और हिन्दी के विस्तार को दृष्टिगत रखते हुए वहाँ समय-समय पर पत्र-पत्रिकाएँ प्रकाशित होती रही हैं। नीचे दिए गए दैनिक, साप्ताहिक और मासिक पत्रों में प्रायः सभी कई कारणों से बन्द हो चुके हैं - ''बर्मा समाचार, 'प्राची कलश', 'प्रवासी', 'नवजीवन' 'प्राची प्रकाश' 'जागृति', 'आर्य युवक जागृति' आदि कई वर्षों तक चले। इनके प्रकाशन का श्रेय चन्दूलाल ठक्कर, श्री जयंती भाई जोशी, श्री एल वी लाठिया, श्री श्यामचरण मिश्र, श्री अनन्त राम,

श्री ब्रह्मानन्द कालरो, बलवंत सिंह आदि को तथा आर्य प्रतिनिधि सभा को है।''७ श्री रामप्रसाद वर्मा के सम्पादन में 'ब्रह्म भूमि' नामक मासिक पत्र का प्रकाशन आज भी जारी है।

बर्मा में, हिन्दीभाषा में कई पुस्तकों का प्रकाशन किया गया। इनमें हिन्दी उपन्यास, कहानियाँ, अनूदित उपन्यास, लेख, कविता और समाचार बुलेटिन, आदि शामिल हैं। आज भी बर्मा के कई सरकारी स्कूलों, धर्मशालाओं और विभिन्न संस्थाओं द्वारा स्थापित पाठशालाओं में हिन्दी पठन-पाठन की सुविधा है। शिक्षा, भजन-कीर्तन, सत्संग, गीत-व्याख्यान, पत्र-पत्रिका एवं हिन्दी के चलचित्र आदि के माध्यम से हिन्दी भाषा बर्मा में अपना अस्तित्व बनाये हुए है।

म्याँमार में हिन्दी प्रयोग करने वालों की संख्या पर्याप्त मात्रा में है। इसका कारण दोनों की आपसी सांस्कृतिक समानता के साथ बर्मा का पूर्व भारतीय राष्ट्र का हिस्सा होना, भारतीयों का बर्मा में बसना और आपसी सद्भाव है। यह स्थिति वहाँ हिन्दी के होने का आभास तो दिलाती है परन्तु आज भी वास्तविक रूप से सुखद नहीं लगती। इसका सबसे बड़ा कारण शायद यह है कि बर्मा वाले यह अच्छी तरह जानते हैं कि भारत में भी हिन्दी को उतना सम्मान नहीं दिया जाता जितना अंग्रेजी को। सरकार अगर इस बात पर ध्यान दें तो ऐसे ही न जाने कितने और देश अधिकतर पड़ोसी देश निश्चित रूप से हिन्दी सीखने की ओर आकर्षित होंगे।

2.2.1.3 चीन में हिन्दी :

दुनिया की सर्वाधिक आबादी वाला देश चीन, भारत का पड़ोसी राष्ट्र है। चीनी भाषा दुनिया की सर्वाधिक बोली जाने वाली भाषा है। हिन्दी दुनिया की तीसरी सर्वाधिक बोली जाने वाली भाषा, भारत दुनिया का दूसरा सर्वाधिक आबादी वाला देश है। एक दूसरे राष्ट्र और समाज की मूलभूत बातें जानने में भाषा सबसे अधिक मददगार साबित होती है। सही मायने में चीन में 'हिन्दी' का प्रचार-प्रसार नहीं के

बराबर है किन्तु चीन में प्रचार की पहल हो चुकी है। अनुवाद कार्य जितना हुआ है उतना मौलिक लेखन नहीं है। चीनी भाषा में प्रेमचंद और जैनेन्द्र के उपन्यास और कहानियों तथा रामचरित मानस आदि का चीनी में अनुवाद हो चुका है। उसी प्रकार चीनी में प्रमुख लेखकों की रचनाओं का भी अनुवाद आरंभ हो चुका है। चीनी नेता माआत्सेदुंग, लेखक लू शुन और माओ तून की रचनाओं का हिन्दी में अनुवाद हुआ है। शुआन चुझान की कहानी पर आधारित 'पश्चिम की यात्रा' दंतकथा का भी रूपांतर हो चुका है। चीनी में 'हिन्दी साहित्य नामक पुस्तक भी प्रकाशित हुई है। हिन्दी चीनी शब्द कोश और हिन्दी चीनी मुहावरा कोश भी प्रकाशित किया गया है।

शिक्षा संस्थानों में हिन्दी अपना स्थान बनाने लगी है। ''चीन में अब बहुत से संस्थानों में जैसे पेइचिंड विश्वविद्यालय, सामाजिक अध्ययन संस्थान आदि में हिन्दी साहित्य का अध्ययन किया जाता है। 1982 में चीन में भारतीय साहित्य संघ अध्ययन की स्थापना भी हो गई है।''[58]

चीन में रेडियो द्वारा हिन्दी कार्यक्रम प्रसारण, विदेशी भाषा प्रकाशन गृह द्वारा प्रकाशन और 'चीन सचित्र' नामक हिन्दी मासिक पत्र द्वारा हिन्दी के सामयिक प्रचार-प्रसार, सूचना एवं चीनी संबंधी समाचार का प्रकाशन किया जाता है।

प्रति वर्ष चीन से भारत आकर हिन्दी पढ़ने वाले कुछ विद्यार्थियों को छात्रवृत्ति प्रदान की जाती है।

सन् 1949 में चीन की आजादी के बाद पेइचिंग विश्वविद्यालय में पूर्वी भाषा व साहित्य के विभाग की स्थापना की गई। इसी विभाग के अन्तर्गत एक उपविभाग के रूप में हिन्दी अनुभाग खोला गया, जहाँ आज भी सुचारू रूप से हिन्दी का अध्ययन-अध्यापन कार्य हो रहा है। भारत में चीनी और चीन में हिन्दी का प्रचार-प्रसार निश्चित रूप से एक दूसरे के सांस्कृतिक जन जीवन पर प्रकाश डालेगा और दोनों देशों की जनता के बीच मैत्री व सद्भाव बढ़ाने में महत्वपूर्ण साबित होगा। यह

कदम वांछित भी होगा और सराहनीय भी।

2.2.1.4 श्रीलंका में हिन्दी :

भारत के पड़ोसी देश श्रीलंका में प्रवासी भारतीयों के कारण हिन्दी भाषा पर्याप्त मात्रा में बोली और समझी जाती है। ''लगभग पाँच शताब्दियों से श्रीलंका में हिन्दी भाषा का व्यापक अध्ययन-अध्यापन चल रहा है।''[59] श्रीलंका से विद्यार्थियों के भारतीय शिक्षा संस्थाओं में भी आने की परम्परा रही है। दक्षिण भारत हिन्दी प्रचार सभा, चेन्नै ने भी श्रीलंका के विद्यार्थियों को हिन्दी संबंधित परीक्षाओं में बैठने का अवसर दिया। इसी तरह राष्ट्रभाषा प्रचार समिति, वर्धा भी परीक्षाएँ आयोजित करता है। लंका में श्रीलंका विश्वविद्यालय प्रेरणा दिया और केलनिया विश्वविद्यालय में हिन्दी भाषा-साहित्य का अध्ययन होता है। वहाँ हिन्दी भाषा और संस्कृति के प्रचार-प्रसार में 'श्रीलंका हिन्दी सम्मेलन' और 'श्रीलंका हिन्दी एसोसिएशन' का प्रमुख योगदान है। हिन्दी की लोकप्रियता श्रीलंका में प्रचलित हिन्दी फिल्मों से भी बढ़ रही है। शिक्षक, पुस्तकें और सरकारी सहायता की कमी हिन्दी के विकास में अक्सर बाधा पहुँचाती रही है।

श्रीलंका और भारत के आपसी संबंधों में मधुरता लाने रिश्तों को दृढ़ करने में हिन्दी महत्वपूर्ण भूमिका अदा कर सकती हैऔर प्रखर संभावना भी है। हिन्दी साहित्य की महत्ता भी वहाँ के विद्वानों को हिन्दी प्रचार हेतु आशावान् बनाती है। बौद्ध धर्म, सभ्यता, शिष्टाचार और सिंहल भाषा में संस्कृत-हिन्दी शब्दों की भरमार श्रीलंका में हिन्दी को व्यापक आधार देने में सहायक होंगे। श्रीलंका में आज स्थिति भले ही अपेक्षागत कम सुधरी हुई हो परन्तु इसके प्रति वहाँ के लोगों में जो प्यार या लगाव की भावना दिखती है वह उज्जवल भविष्य की सूचना देती है। संचार माध्यम इसके व्यापक प्रचार प्रसार में अपनी महत्वपूर्ण भूमिका निभा सकते हैं।

2.2.1.5 पाकिस्तान में हिन्दी :

पाकिस्तान में हिन्दी की जगह अगर हिन्दुस्तानी का नाम लिया जाय तो शायद सही होगा। कभी समूचा पाकिस्तान उत्तर पश्चिम भारत का हिस्सा हुआ करता था। वहाँ की सांस्कृतिक, ऐतिहासिक एवं भाषिक समानता व्यापक है। साम्प्रदायिक, भाषिक अथवा राजनीतिक कारणों से पाकिस्तान की उर्दू और उत्तर भारत की हिन्दी में भले ही सामंजस्य बिठाने की कोशिश न की गई हो, परन्तु इससे सत्य मर नहीं जाता। दोनों भाषाओं को लिपि एवं अरबी-संस्कृत शब्दों की भरमार के करण अलग माना जाता है। परन्तु दोनों की अभिव्यक्ति समान है। दोनों एक दूसरे द्वारा आराम से समझी जाती हैं। भारत में उर्दू को बढ़ावा और पोषण मिला किन्तु वांछित नहीं परन्तु पाकिस्तान में तो हिन्दी को पूर्ण रूप से दबा दिया गया।

कराची पाकिस्तान का एक ऐसा शहर है जहाँ हिन्दी, पत्र-व्यवहार, व्यवसाय, बी.बी.सी. के हिन्दी कार्यक्रम आदि द्वारा ब्यवहृत होती है। दिखावे के लिए कराची विश्वविद्यालय में एक बार डिप्लोमा स्तर का हिन्दी कोर्स शुरू किया गया था परन्तु अभी तक हिन्दी शिक्षण की शायद ही कोई व्यवस्था हो। इस्लामाबाद विश्वविद्यालय में भी डिप्लोमा स्तर की हिन्दी पढ़ाई जाती है। हिन्दी फिल्म गीत-संगीत एवं नायक-नायिकाएँ वहाँ बहुत पसंद किए जाते हैं। दोनों देशों के सुधरते आपसी संबंध हिन्दी की शुभ घड़ी के संकेत भी हो सकते हैं।

2.2.1 .6 जापान में हिन्दी :

जापान और भारत का संबंध छठवीं शताब्दी के आसपास माना जा सकता है। बौद्धधर्म के साथ जापान में भारतीय कलाओं तथा हिन्दी भाषा का पदार्पण भी हुआ होगा। संख्या भले ही नगण्य रही हो परन्तु निश्चित रूप से जापान में हिन्दी का बीज बहुत पुराना है। ''सन् 1911 में जापान में 'तोक्यो स्कूल ऑफ़ फारेन लैंग्वेज' की स्थापना की गई थी। इसमें देवीलाल सिंह, के.आर.सावरकर, हैनरी डूमोण्ड और हसन साहब ने हिन्दुस्तानी का अध्यापन कराया। सन् 1945 में क्यूया

दोई की सेवा प्राप्त करके इस स्कूल में हिन्दी का स्वतंत्र विभाग खोल दिया।''[80] श्री दोई ने इलाहाबाद विश्वविद्यालय से उच्च शिक्षा (हिन्दी में) ग्रहण की। उन्होंने जापान में हिन्दी शिक्षण का कार्य किया। उनके अलावा डॉ.तोमियो मिजोकामी भी दिल्ली विश्वविद्यालय से हिन्दी में स्नातकोत्तर उपाधि लेकर 'ओसाका विश्वविद्यालय' में हिन्दी अध्यापन कर रहे हैं। प्रो.दोई ने संक्षिप्त हिन्दी-जापानी, जापानी-हिन्दी शब्द कोश का निर्माण किया है। इनके अलावा प्रो.तोशिओ तानाका, प्रो.काजुहिको, माचीदा, प्रो.त्सुयोशि फुजिई, प्रो.एइजो सावा, प्रो.कात्सुरो, प्रो.कोगा, डॉ.नोरिहिको उचीदा, प्रो.शो.कुवाजिमा, प्रो.अकिरा, प्रो.तेइजी सकाता ताकुशोक, प्रो.हदआकि इशिदा, प्रो.ताइगेन, प्रो.योशिबुमि, मिजुनो, प्रो.कोउकि नागा आदि हिन्दी के पारंगत विद्वान एवं शिक्षक हैं।

जापान के कई विश्वविद्यालयों में हिन्दी पठन-पाठन का कार्य चलता है। कोयोटो यूनिवर्सिटी, टोक्यो यूनिवर्सिटी, तोकाई यूनिवर्सिटी, ताइशो यूनिवर्सिटी, ओटेमन गैक्युन यूनिवर्सिटी, ताकाशोका यूनिवर्सिटी, ओसाका यूनिवर्सिटी, ओटानी यूनिवर्सिटी, कान्साइ और यूनिवर्सिटी इन सब में विभिन्न स्तर पर हिन्दी का अध्ययन होता है। इन जगहों में जापानी विद्यार्थी बड़ी लगन से हिन्दी सीखते हैं। वहाँ की सांस्कृतिक नज़दीकी इस कार्य को सुगम बना देती है। पाठ्यक्रम में पंचतंत्र की कहानियाँ भी हैं। वहाँ शिक्षकों और विद्यार्थियों की एक लम्बी परंपरा रही है। ''प्रथम पीढ़ी के हिन्दी शिक्षाविद 1970 के दशक तक सक्रिय रहे। द्वितीय पीढ़ी आज भी कम गतिशील नहीं है।''[81] विषय के संबंध में ''1960 तक जापान में हिन्दी भाषा के वैज्ञानिक अध्ययन का दौर रहा। हिन्दी साहित्य के अध्ययन व शोध की दिशा में महत्वपूर्ण कदम 60 के दशक में उठाएँ गए।''[82] प्रेमचन्द, प्रसाद, पंत, निराला, दिनकर, अज्ञेय एवं हजारी प्रसाद द्विवेदी जापानियों के प्रिय साहित्यकार रहे हैं। कइयों का जापानी में अनुवाद हुआ है। ''तुलसी, सूर, मीरा कबीर, भारतेन्दु, भगवती चरण वर्मा, अमृत लाल नागर, जैनेन्द्र कुमार, मोहन राकेश, हजारी प्रसाद द्विवेदी, यशपाल, भीष्म सहानी, बच्चन, रघुवीर सहाय और काशीनाथ आदि की

रचनाओं पर शोध, समीक्षा और अनुवाद 'सर्वोदय', 'ज्वालामुखी', 'इन्दोबुन्गाकु' और 'अंक' पत्रिकाओं के जरिये जापानी पाठकों तक पहुँचने लगीं।''[83] जापान सरकार की मदद से सन् 2002 में जापानी साहित्यकारों के दल ने भारत आकर यहाँ के शोधकर्ता, लेखक एवं कवियों आदि के साथ संगोष्ठी की। ऐसे सत्प्रयास देश के भाषा,साहित्य एवं संबंधों को निश्चित रूप से मजबूत करेंगे।

जापान में बी.ए, एम.ए, एवं शोध स्तर की शिक्षा दी जाती है। वहाँ आधुनिक हिन्दी साहित्य पर काफ़ी कार्य हुआ है। उम्मीद है जापानियों का यह हिन्दी प्रेम और हिन्दी का वैश्विक स्तर इसी तरह सकारात्मक रूप से होता रहेगा।

2.2.1.7 कोरिया में हिन्दी :

बौद्ध धर्म के प्रसार ने भारत का जापान, कोरिया तथा अन्य एशियाई देशों के साथ गहरे सांस्कृतिक संबंध की नींव डाली। दक्षिण कोरिया आज एक संपन्न राष्ट्र है। वहाँ की आर्थिक व्यवस्था इतनी मजबूत है कि दुनिया भर का ध्यान इसकी ओर आकर्षित हो रहा है। भारत भी कोरियाई संबंध आर्थिक और सांस्कतिक तौर पर बनाए रखना चाहता है। इसीलिए भारत के भी कुछ विश्वविद्यालयों जैसे जे.एन.यू. आदि में कोरियन भाषा पढ़ाई जाती है। इसी तरह कोरिया में हिन्दी भाषा का अध्ययन अध्यापन होता है। वहाँ बाकायदा भारत से अतिथि अध्यापक बुलाए जाते हैं, जो विश्वविद्यालयों में अध्यापन का कार्य करते हैं। ''कोरिया में स्नातक की उपाधि के लिए चार वर्षीय अध्ययनार्थ हिन्दी के तीन विभाग हैं। उनमें दो राजधानी सोल में हैं और तीसरा दक्षिण बन्दरगाह शहर पूसान में है। कोरिया में हिन्दी साहित्य को परिचित कराने की पहल हांगुक यूनिवर्सिटीज ऑफ़ फॉरेन यूनिवर्सिटीज ने सन् 1972 में हिन्दी विभाग खोलकर और 1981 में उसका स्नातक स्तर पर विस्तार किया। हर साल पहले वर्ष में एक विभाग में 30 विद्यार्थियों को प्रवेश दिया जाता था। इस प्रकार हर साल तीनों विभागों में पहले वर्ष में विद्यार्थियों की संख्या

90 होती है।"[64] पाठ्यक्रम में व्याकरण ज्ञान, वार्तालाप पर ज़ोर दिया जाता है। साहित्य अध्ययन, साहित्य का इतिहास आदि शामिल हैं। प्रमुख हिन्दी लेखकों में "प्रेमचन्द, जैनेन्द्र, अज्ञेय, भीष्म सहानी, कमलेश्वर, मोहन राकेश, राजेन्द्र यादव, निर्मल वर्मा, हिमांशु जोशी, अमरकांत, गंगा प्रसाद विमल आदि की चुनी हुई कहानियाँ पढ़ाते हैं।"[65]

यहाँ हिन्दी शिक्षा नाममात्र के लिए न होकर गंभीरता से ली जाती है। कोरिया में हिन्दी का यह विकास दोनों देशों के आपसी समझबूझ का नतीजा है।

2.2.1.8 खाड़ी के देशों में हिन्दी :

खाड़ी के प्रायः सभी देश तेल के भण्डार के कारण सम्पन्न हैं और अधिकांश अमीरों द्वारा शासित हैं। खाड़ी से भारतीयों का व्यावसायिक एवं गैर सरकारी छोटी मोटी नौकरियों का रिश्ता ज्यादा रहा है। वहाँ भारतीय मजदूर एवं छोटे-मोटे कारीगर आदि की भरमार है। वहाँ के विद्यार्थी भी भारत में शिक्षा प्राप्त करने भारत आते हैं। यहाँ आकर वे अच्छी तरह से हिन्दी भाषा सीख लेते हैं। खाड़ी के मुसलमानों के भारतीय समाज में पारिवारिक रिश्ते भी हैं। इस तरह थोड़ी बहुत सांस्कृतिक रिश्ते भी हैं। इस तरह थोड़ी बहुत सांस्कृतिक समानता भी है। भारतीय मजदूर उनके यहाँ काम करते हैं। मजदूर वहाँ की भाषा नहीं समझ पाते हैं। मालिक से संवाद के दौरान मालिक को भी थोड़ी बहुत हिन्दी आ जाती है। वहाँ डॉक्टर, इंजीनियर जैसे उच्च पदों पर भी भारतीय विद्यमान हैं। भिन्न-भिन्न प्रांतों के भारतीय वहाँ कार्य करते होते हैं। इन सभी के बच्चों को इंडियन स्कूल में पढ़ाने के लिए भर्ती कराया जाता है। खाडी के देशों में प्रायः 200 के आसपास इंडियन स्कूल हैं। वहाँ 10 वीं कक्षा तक हिन्दी एक अनिवार्य भाषा है, उसके बाद ऐच्छिक। वहाँ के टेलीविजन कार्यक्रमों में भी हिन्दी का बोलबाला है। हिन्दी फिल्म संगीत को वे बेहद पसंद करते हैं। स्टार टी.वी., सोनी टी.वी. और जी.टी.वी. आदि प्रमुख चैनेल हैं जो बहुतायत देखे जाते हैं।

साधारणतः सभी भारतीय हिन्दी को सम्पर्क भाषा के रूप में व्यक्त करते हैं। इन भारतीयों की संख्या कई लाखों में है। भारतीयों को वहाँ 'हिन्दी' नाम से भी जाना जाता है। सभी राष्ट्र राष्ट्र इस्लाम के मानने वाले हैं। अतः हिन्दी को राज्याश्रय नहीं है, परन्तु आमतौर पर इसका प्रयोग होता है।

खाड़ी के प्रमुख देशों में सउदी अरब, ईराक, कुवैत, ओमान, बहरीन, संयुक्त अरब अमीरात, कतर आदि शामिल हैं जहाँ हिन्दी को व्यापक जनाधार प्राप्त है। भाषा में मिलावट हुई है और इसकी शैली में क्षेत्रीय आधार पर परिवर्तन हुआ है। भारत से ले जायी जाने वाली साहित्यिक पुस्तकें एवं पत्र-पत्रिकाएँ वहाँ देखने को मिलती हैं। साहित्य का सूरज अभी क्षितिज पर उगा नहीं है। यहाँ पर हिन्दी सेवी संस्थाओं को अधिक सक्रिय होना होगा। खाड़ी में काम करनेवालों की संख्या की वृद्धि के साथ-साथ हिन्दी भाषा के विकास की बात भी जुड़ी हुई है।

2.2.1.9 एशिया के अन्य देशों में हिन्दी :

एशिया के प्रायः सभी देशों में हिन्दी बीज रूप में पहुँच चुकी है। इसके पहले अनेक राष्ट्रों का वर्णन हो चुका है, जहाँ हिन्दी का प्रबल स्वरूप दिखाई पड़ता है। उन देशों के अतिरिक्त भी कुछ ऐसे देश हैं, जहाँ हिन्दी देखने को मिलती है।

उज्बेकिस्तान एशिया के उन प्रमुख देशों में है, जहाँ हिन्दी का भरपूर विकास हुआ है। भारत की आजादी के बाद से ही उज्बेकिस्तान में हिन्दी के पठन-पाठन की प्रक्रिया आरंभ हुई। सरकारीय स्तर पर वहाँ के कई विद्यालयों में कक्षा 2 से ही हिन्दी पढ़ाई जाती है। यहाँ विद्यालयों, महाविद्यालयों, उच्च शिक्षा संस्थानों और विश्वविद्यालयों में हिन्दी की शिक्षा दी जाती है। वहाँ से बी.ए, एम.ए और पी.एच.डी तक की उपाधियाँ प्राप्त की जा सकती हैं। ताशकंद विश्वविद्यालय एशिया के प्रमुख शिक्षा संस्थानों में है और हिन्दी यहाँ एक प्रमुख विषय के रूप में सम्मानित है। ताशकंद सरकारी प्राच्य विद्या इंस्टीट्यूट में अनुवाद, भाषा-साहित्य आदि की पढ़ाई

होती है। बँटवारे के बाद सोवियत यूनियन के देशों में ताजिकस्तान और उज्बेकिस्तान दो ऐसे देश हैं, जहाँ भारत का नाम प्यार से लिया जाता है। व्यवसाय की दृष्टि से करीब तीन सौ पंजाबी परिवार वहाँ जाकर बस गए थे। उनसे भी पंजाबी और हिन्दी भाषा का वहाँ विकास हुआ। इस तरह उज्बेकिस्तान हिन्दी की अन्तर्राष्ट्रीयता के विकास में एक महत्वपूर्ण स्तम्भ है।

थाईलैण्ड, मलेशिया, सिंगापुर, इंडोनेशिया, भूटान, अफ्गानिस्तान, कजकिस्तान आदि ऐसे राज्य हैं, जहाँ प्रवासी भारतीयों की प्रचुर संख्या देखी जा सकती है। विशेषकर सिंगापुर, मलेशिया और थाईलैण्ड में तो काफी मात्रा में भारतीय रहते हैं। वहाँ हिन्दी भाषियों की संख्या कम नहीं है। वे अपनी संस्कृति और संस्कार से बँधे हुए हैं। वे वहाँ व्यवसायी, नौकरी पेशा एवं मजदूर के के रूप में हैं। क्योंकि भाषा उनके साथ है, इसीलिए छिट-पुट लेखन भी कभी-कभार देखने को मिल जाता है। वहाँ की रचित कविता आदि कुछ भी व्यवस्थित रूप से प्रकाश नहीं पा सकी हैं। शायद आने वाले कुछ वर्षों में वहाँ से भी साहित्य-उत्पाद मिलने लगेगा।

2.2.2 उत्तर अमेरिका में हिन्दी :

उत्तर अमेरिकी देशों में संयुक्त राज्य अमेरिका और कनाडा जैसे देश आते हैं। दोनों ही देश प्रवासी भारतीयों और उनकी भाषा की दृष्टि से महत्वपूर्ण हैं। इन देशों में प्रवासी भारीतयों की एक बडी संख्या निवास करती है। इस तरह वहाँ हिन्दी भाषा और साहित्य का वर्तमान और भविष्य ठोस नजर आता है।

2.2.2.1 संयुक्त राज्य अमेरिका में हिन्दी :

भारतीयों का अमरीका संबंध बहुत प्राचीन नहीं है। भारतीय मूल के लोगों का अमेरिका प्रवास उनकी विवशता न होकर उनकी आवश्यकता के कारण रहा। यह न तो उपनिवेशी सरकार की दुर्नीति का फल था और न ही भारतीय प्रवासियों की

आराम यात्रा का नतीजा। बीसवीं सदी का पूर्वार्द्ध भारतीयों की स्वाधीनता की लड़ाई का काल था और उत्तरार्द्ध आजाद विकासोन्मुख भारत की स्थापना का। अमेरिका जाने वाले भारतीयों में शिक्षित, व्यवसायी, विद्यार्थी और अन्य पेशेवर लोग थे। आज भी प्रतिवर्ष हजारों-हजार की संख्या में इनका जाना लगा हुआ है। शिक्षा, व्यवसाय, मनोरंजन, विज्ञान, राजनीति, सूचना प्रौद्योगिकी और समाज के अन्य क्षेत्रों में आज प्रवासी भारतीयों की पहुँच है। भाषा ऐसी वस्तु है जिसे न तो कुछ दिन या महीनों में सही तरह से सीखा जा सकता है और न ही शीघ्र भुलाया जा सकता है। वहाँ गए अधिकांश भारतीय आपसी अपनत्व या भारतीयता का प्रदर्शन करने के लिए हिन्दी को बोलचाल की भाषा के रूप में प्रयोग करते ही हैं। भले ही यह हिन्दी एक हद तक अंग्रेजी मिश्रित होती है।

एक पुस्तक में हरिबाबू कंसल हिन्दी का अमेरिका के संबंध, भारतीय स्वाधीनता संघर्ष के समय से स्थापित करते हुए आज इसे कई एशियन देशों के मध्य आपसी बोलचाल की भाषा मानते हैं। वे कहते हैं - ''गदर की गूँज नामक पत्रिका का प्रकाशन अमेरिका की भूमिका पर हिन्दी का प्रथम सृजनात्मक प्रयास था। तब से लेकर आज तक भारतीय, पाकिस्तानी बंग्लादेशी, लंकाई और कुछ सीमा तक अफगानिस्तानी लोगों की आपसी बोलचाल की भाषा हिन्दी बन गई है।''[66] वे यह भी मानते हैं कि ''बहुत थोड़ी सीमा तक भारतीय धनता वाले क्षेत्रों या नगरों में सरकार ने भी किसी न किसी रूप में हिन्दी को मान्यता प्रदान ही है।''[67]

भाषा बोलने वालों के सामाजिक स्तर के अनुसार उनकी भाषा का मान-सम्मान निर्धारित होता है। इधर कुछ वर्षों में अमेरिकी भारतीय समाज की प्रतिष्ठा बढ़ रही है। इसका कारण उनकी आर्थिक सम्पन्नता एवं शिक्षा की उपादेयता है। आज भारतीयों ने वहाँ, कई रूपों में अपनी पहचान कायम की है। इसी कारण उनकी प्रिय चीज़ों की अनदेखी नहीं की जा सकती है। भाषा, संस्कृति की धरोहर को, एक से दूसरी संतति को सौंपती है। यही काम हिन्दी भी आज अमेरिका में कर

रही है।

अमेरिका में हिन्दी, एक भाषा के रूप में विश्वविद्यालयीन अध्ययन से लेकर आम भारतीय समाज की बोलचाल की आवश्यकता की पूर्ति करते हुए अपनी साहित्यिक भूमिका का निर्वाह कर रही है। अमेरिका में मनोरंजन और संचार माध्यमों जैसे रेडियो और दूरदर्शन के सहारे हिन्दी, भारतीयों को भारत से मिलाने की कड़ी का काम करती हुई एक महत्वपूर्ण भूमिका अदा कर रही है। वहाँ हो रहे साहित्य सृजन, अध्ययन-अध्यापन और पत्र-पत्रिकाओं के प्रकाशन आज न सिर्फ़ देश से कटे भारतीयों को अपनी भाषा से जोड़ने के कार्य कर रहे हैं बल्कि हिन्दी को एक वैश्विक भाषा बनाने की दिशा का मार्ग भी प्रशस्त कर रहे हैं। इंटरनेट भी इस योगदान में पीछे नहीं है।

हिन्दी भाषा का प्रचार-प्रसार अनेक सरकारी विश्वविद्यालय, महाविद्यालय, गैर-सरकारी संस्थाएँ एवं व्यक्तिगत स्तर पर किया जा रहा है। अब तो हिन्दी साहित्य सृजन भी उभर कर सामने आ रहा है। सूरीनाम में हुए सातवें विश्व हिन्दी सम्मेलन के संदर्भ में प्रकाशित स्मारिका, भारतीय सांस्कृतिक संबंध परिषद के अंतर्गत अमेरिकी कॉलेजों में विभिन्न एशियाई भाषाओं में छात्र एवं कॉलेजों की संख्याओं के आँकड़े के अनुसार 29 कॉलेजों में 625 स्नातक और 69 स्नातकोत्तर विद्यार्थियों ने दाखिला लिया। एक अन्य विवरण के अनुसार 'न्यूयार्क में तो 74 नं स्ट्रीट पर भारतीयों की ही दुकानें हैं। वहाँ पर देखने से ऐसा लगता है कि यह मिनी भारत है। अमेरिका की लगभग 20 यूनिवर्सिटियों (कुछ यूनिवर्सिटी के नाम 1. अमेरिकन यूनिवर्सिटी-वाशिंगटन डी.सी, 2. यूनिवर्सिटी ऑफ़ कैलिफ़ोर्निया, लास एंजेल्स, 3. स्टेट यूनिवर्सिटी ऑफ न्यूयार्क, बफलो, 4.कर्नेल यूनिवर्सिटी -इबात न्यूयार्क, 5. यूनिवर्सिटी ऑफ इलियोनिस, शिकागो, 6. यूनिवर्सिटी ऑफ बर्जीनिया, बर्जीनिया 7. यूनिवर्सिटी ऑफ वर्जीनिया 8. यूनिवर्सिटी और टैक्सास एण्ड आस्टिन टैक्सास) में हिन्दी हिन्दी पठन-पाठन की सुविधा है। न्यूयार्क में ही भारतीयों की

संख्या डेढ़ लाख के आसपास आँकी जाती है। हिंदी समिति जैसी कुछ और संस्थाओं ने न सिर्फ़ हिन्दी का प्रचार-प्रसार किया है बल्कि गतिविधियों का भी संसार में फैलाने का प्रयास किया है। इनके कार्यों एवं लक्ष्यों में हिन्दी सम्मेलनों एवं गोष्ठियों का आयोजन, सम्पर्क भाषा का प्रोत्साहन एवं वातावरण तैयार करना, हिन्दी सीखने की प्रेरणा हिन्दी साहित्य को पढ़ाने को पाठक वर्ग को तैयार करना आदि उनके कार्यों एवं भावी योजनाओं का हिस्सा है। 'सौरभ ' एवं 'विश्वा ' जैसी पत्रिकाएँ भी प्रकाशित होती हैं।

साहित्यिक जगत के लेखक और कविगण, अमेरिका में रहने वाले भारतीय भी हैं और भारत से रचनाएँ भी वहाँ जाती हैं। वहाँ की रचनाओं का एक दृष्टांत इस प्रकार मिलता है - ''इसके साथ ही वहाँ के निवासी हिन्दी लेखकों की पुस्तकें भी समिति द्वारा प्रकाशित की गई हैं। इनमें डॉ.विजयकुमार का मधुमास के फूल, काव्य संकलन, वेद प्रकाश सिंह का प्राचीन हिन्दी राष्ट्र व आमंत्रण, उपन्यास रामेश्वर अशान्त का यशोधर्मन, उपन्यास आदि हैं।''[68] वहाँ काव्य रचना प्रचुर मात्रा में हो रही है। समकालीन अमेरिकी हिन्दी काव्य संदर्भ पर दृष्टिपात करते डॉ.श्याम सिंह कहते हैं कि - ''उक्त संदर्भों में यदि अमेरिका के समकालीन हिन्दी साहित्य पर दृष्टिपात किया जाय तो लगेगा कि यहाँ का हिन्दी काव्य कलापक्ष की दृष्टि से भले ही आरंभिक काल से गुजर रहा हो किन्तु भाव पक्ष में वह किसी से पीछे नहीं है।''[69]

2.2.2.2 कैनेडा में हिन्दी :

उत्तरी अमरीका महाद्वीप में संयुक्त राज्य अमेरिका की तरह कैनेडा भी मूलरूप से प्रवासियों का देश है। यहाँ आज भी आव्रजन तीव्र गति से जारी है। इसीलिए दुनिया भर के कई देशों से आकर लोग यहाँ बस गए हैं। भारत से भी भारी मात्रा में लोग कैनेडा जाकर बस गए। यह प्रक्रिया कई वर्षों से चल रही है। आज कैनेडा में प्रवासी भारतीयों की दूसरी-तीसरी पीढ़ी इसे अपना देश मानकर निवास कर रही है। प्रवासी व्यक्ति के साथ-साथ उसकी भाषा-संस्कृति आदि भी

चली जाती हैं। यही हिन्दी के साथ भी हुआ । वह भी भारतीयों के, मुख्यतः उत्तर भारतीयों के कैनेडा प्रवास के दौरान उनके साथ रही। वहाँ पर आए भारतीय या तो गिरमिटिया देशों से आकर बसे या फिर सीधे भारत से गए। उनकी भावनाओं, आवश्यकताओं और मूलगत संस्कृति आदि की अभिव्यक्ति अंग्रेजी समेत अन्य भारतीय भाषाओं प्रमुखतः हिन्दी में भी हुई। तेजी से बढ़ते हुए हिन्दी भाषा के स्वरूप का फैलाव यहाँ भी हुआ और इसे कतिपय शिक्षण संस्थानों के साथ विश्वविद्यालयों में भी स्थान प्राप्त हुआ। 'टोरंटो विश्वविद्यालय ' में हिन्दी की शिक्षा दी जाती है। इसके अलावा 'ओटावा ' में कुछ स्कूलों द्वारा हिन्दी की शिक्षा दी जाती है। कैनेडा की प्रांतीय सरकारें 'हैरिटेज लैंग्वेज ' के अन्तर्गत हिन्दी शिक्षण की सुविधा उपलब्ध करवाती है। वहाँ कुछ चुने हुए स्कूलों में इसकी शिक्षा दी जाती है।

कैनेडा के हिन्दी सेवकों में प्रो.शंभुदास, प्रो.हरिशंकर आदेश, डॉ.भारतेन्दु और आशावर्मन आदि के नाम प्रमुख हैं। साहित्यकार कवियों में शैलशर्मा, श्रीनाथ द्विवेदी, रमेश गुप्ता, भारतेंदु श्रीवास्तव, रीमा गुप्ता, शिवशंकर द्विवेदी, कृष्ण कुमार गुप्त, सुरेन्द्र कुमार, कंचन शर्मा, कृष्ण सैनी आदि का विशेष योगदान है। काव्य के विषयों में स्मृतियों के चिन्ह, गाँव-देश की याद, प्रवासियों की ऊहापोह की स्थिति, भारतीय संस्कृति, भारतीयों का बदलता रहन-सहन, साम्यवाद, समसामयिकता, वैयक्तिक अनुभूति, प्रेम के मनोभव, प्रकृति प्रेम, दार्शनिकता आदि देखने को मिलती हैं।

कैनेडा से 'विश्व भारतीय', 'अंकुर', 'हिन्दी चेतना', 'संगम' और 'संवाद' नाम के पाक्षिक तथा मासिक पत्रिकाएँ प्रकाशित होती हैं। हिन्दी के प्रचार-प्रसार हेतु हिन्दी परिषद, हिन्दी लिटररी सोसाइटी एवं हिन्दू सोसाइटी आदि संस्थाएँ हैं। यहाँ पर्व, त्योहार एवं शादी, विवाह जैसे खुशी के मौकों पर हिन्दी का अधिक प्रयोग देखने को मिलता है। कैनेडा सरकार भले ही हिन्दी के प्रति दुराग्रह नहीं रखती है, परन्तु भारतीयों का लगाव एवं हिन्दी प्रयोग सामाजिक स्तर पर जितना कम होगा,

हिन्दी के विकास एवं पल्लवन में उतनी ही बाधा आएगी। इसलिए इसके विकास हेतु प्रवासी भारतीयों को गंभीर चिन्तन करना होगा। भारत सरकार और उसका कैनेडा स्थित दूतावास निश्चित रूप से इसमें सहयोग दे सकते हैं। टेलीविजन, हिन्दी फ़िल्में, गीत-संगीत आदि इसकी रीढ़ साबित हो सकते हैं।

2.2.3 दक्षिण अमरीकी देशों में हिन्दी :

सूरीनाम और गयाना के अतिरिक्त भी दक्षिण अमरीका महादेश के कई देशों में हिन्दी का पठन-पाठन और प्रयोग होता है। इन देशों में चिली, अर्जेंटाइना, ब्राजील, पेरु, युरुग्वे, वेनेजुएला, कैराकास, और मैक्सिको आदि है। इनमें से कई देशों के विश्वविद्यालयों में कई जगह स्वैच्छिक संस्थाओं द्वारा कक्षा लगाकर और प्रायः सभी देशों में भारत सरकार के सहयोग से दूतावासों की मदद से हिन्दी कक्षाएँ लगाकर हिन्दी सीखने वालों को हिन्दी पढ़ाई जाती है।

अर्जेन्टाइना के मैमोनिडेस विश्वविद्यालय में भारतीय संस्कृति, कला और साहित्य की शिक्षा दी जाती है। वहाँ इंटरडिसिप्लिनरी ऑफ़ एफ्रो-एशियन स्टडीज में 2 साल का डिप्लोमा कोर्स पढ़ाया जाता है।

इसी तरह चिली और कैराकास में रहने वाले कई भारतीय जो हिन्दी पढ़ने में रुचि दिखाते हैं, भारतीय दूतावास उनके लिए हिन्दी कक्षाएँ लगाता है और भारत विदेशी मंत्रालय और उनके लिए पुस्तकें भिजवाता है। अभी तक इन देशों में स्वयंसेवी संस्थाओं का गठन नहीं हुआ है। हिन्दी फिल्में और गाने आदि के कारण तथा भारत आने के पहले रुचि के कारण वहाँ के भी कुछ लोग हिन्दी ज्ञान रखना चाहते हैं। दक्षिण अमेरिका में हिन्दी भाषा-साहित्य के जानकारों की संख्या प्रायः नगण्य है।

सैन्ट्रल अमेरिकन राष्ट्रों में ग्वाटेमाला निकारगुआ और होंडूरस प्रमुख हैं जहाँ लाखों लाख की संख्या में प्रवासी भारतीय रहते हैं। यहाँ ग्वाटेमाला की चौथाई

आबादी इसे जानती है जबकि होंडूरस में कई प्रवासी भारतीय इसका प्रयोग करते हैं।

2.2.4 अफ्रीका में हिंदी :

अफ़्रीका महाद्वीप में दक्षिण अफ़्रीका और मॉरिशस के साथ-साथ अन्य कई देशों में हिन्दी का बोलबाला है। अधिकांश अफ़्रीकी देशों में भारतीयों के निवास के कारण वहाँ हिन्दी का अस्तित्व बना हुआ है। कई देशों के शिक्षण संस्थानों में भी इसे स्थान प्राप्त हुआ है। विशेषकर भारतीय स्कूलों में हिन्दी शिक्षा की अनुमति है। ऐसे स्कूल आई.सी.एस.सी. अथवा सी.बी.एस.सी. के अन्तर्गत आते हैं। ऐसे अफ़्रीकी देश जहाँ के जानकार अथवा भाषा-भाषी रहते हैं वे निम्न हैं - मोजाम्बिक, बोत्स्वाना, कीनिया, युगांडा, तंजानिया, सेशेल्श, जांबिया आदि।

इन देशों में जैसे तंजानिया, कीनिया, युगांडा आदि में इंडियन स्कूलों में 10वीं स्तर तक हिन्दी की पढ़ाई होती है। इसके अलावा हिन्दू लेर्नन एसोशियन (जाम्बिया) एवं आर्य समाज जैसी संस्थाएँ हिन्दी पठन-पाठन के कार्यक्रम चलाते हैं। कई देशों में इच्छुक विद्यार्थी दक्षिण अफ़्रीका के डर्बन विश्वविद्यालय में उच्च स्तर की हिन्दी शिक्षा ग्रहण कर सकते हैं। शिक्षा के स्तर पर हिन्दी का प्रयोग अफ़्रीका में उत्साहित नहीं करता। अफ़्रीकी देशों में होटल आदि जगहों पर हिन्दी संगीत काफ़ी प्रचलित है। हिन्दी फिल्मों का प्रचलन भी देखा जाता है। मंदिरों और धार्मिक सांस्कृतिक कार्यक्रमों के जरिये भी हिन्दी वहाँ जिन्दा है। मंदिरों में सायंकालीन कक्षाएँ भी चलाई जाती हैं। अफ़्रीकी लोग हिन्दी को भारत की राष्ट्रभाषा मानकर इसे सीखने को लालायित रहते हैं, परन्तु जब उन्हें पता चला है कि सुशिक्षित वर्ग द्वारा ही हिन्दी की उपेक्षा की जा रही है तो उन्हें दुःख होता है। टैक्सी जैसी साधारण सेवा संबंधी व्यावसायिक लोगों द्वारा 'नमस्त्ते बाबूजी आप कहाँ जा रहे हैं', 'आपको हमारा देश कैसा लगा?', 'आपका नाम क्या है?', 'आपको कहाँ जाना है?', आदि वाक्य प्रायः सुना जा सकता है। तंजानिया, केन्या और युगान्डा आदि

की भाषा स्वाहिली में हिन्दी के भी कुछ प्रचलित शब्द प्रायः पाए जाते सकते हैं।

अगर भारतीय दूतावास और हिन्दी प्रचार-प्रसार संबंधी संस्थाएँ मिल-जुल कर कार्य करें तो अफ़्रीका में हिन्दी विकास के कार्य सुचारु रूप से अन्जाम दिया जा सकता है। मुख्य रूप से भारत से इन देशों को गये व्यवसाय और नौकरीशुदा लोग हिन्दी का प्रयोग करते हैं।

2.2.5 आस्ट्रेलिया महाद्वीप में हिन्दी :

आस्ट्रेलिया एक सम्पन्न आधुनिक राष्ट्र है। अमेरिका, इंग्लैण्ड और कनाडा के साथ-साथ आस्ट्रेलिया भी एक ऐसा देश है जहाँ भारतीय विद्यार्थी शिक्षा या उच्च शिक्षा हेतु काफ़ी संख्या में जाते हैं। इसके अलावा वहाँ रह रहे प्रवासी भारतीयों की संख्या भी कम नहीं है। इस प्रकार हिन्दी भी वहाँ घर बनाने में सफल रही है। न्यूजीलैण्ड, आस्ट्रेलिया महाद्वीप का दूसरा देश है जहाँ हिन्दी का नन्हा पौधा फल फूल रहा है। फीजी की स्वाधीनता प्राप्ति के बाद जनरल रबूका ने जब सरकार का तख्त प्लाट करके सरकार पर कब्जा किया और सन् 2000 में जार्ज स्पेइट (व्यावसायिक राजनीतिज्ञ) ने भी भारतीय मूल के प्रधानमंत्री श्री महेन्द्र चौधरी की सरकार को जबरन उखाड़ फेंका और पचासों दिन तक उन्हें नजरबन्द रखा। इस राजनीतिक उथल-पुथल से बचने के लिए कई सौ भारतीय मूल के फीजी वासी देश छोड़कर आस्ट्रेलिया में बस गए। उनकी भाषा फीजी-हिन्दी है। इससे भी वहाँ के हिन्दी भाषियों की संख्या में बढोत्तरी हुई।

यह विशेषकर प्रवासी भारतीयों की भाषा है, परन्तु कुछ आस्ट्रेलियन विद्यार्थी और प्रसिद्ध क्रिकेटर शेनवार्न एवं ब्रेट ली जैसे अन्य लोगों को भी टूटी-फूटी हिन्दी आती है। आस्ट्रेलिया के केनबरा विश्वविद्यालय में शोध स्तर एवं मेलबॉर्न विश्वविद्यालय में बी.ए. लेवेल तथा सिडनी विश्वविद्यालय में त्रिवर्षीय हिन्दी डिप्लोमा की शिक्षा दी जाती है।

आस्ट्रेलिया नेशनल युनिवर्सिटी की विशाल लाइब्रेरी में संस्कृत समेत हिन्दी की भी अनगिनत पुस्तकें देखने को मिलेंगी। इतना होते हुए भी वहाँ भारतीय जनसंख्या अथवा हिन्दी भाषी जनता के अनुपात में हिन्दी की स्थिति संतोषप्रद नहीं लगती। फिलहाल तो सिर्फ़ उम्मीद ही की जाने चाहिए कि इसका भविष्य जल्द ही सुधरेगा।

2.2.6 यूरोप में हिन्दी :

यूरोप दुनिया की कई प्रमुख भाषाओं का गृह है। वहाँ अंग्रेजी, फ़्रेंच, इटालियन, जर्मन, रूसी, डच, पुर्तगाली, स्पेनिश और पोलिस आदि संपन्न भाषाएँ बोली जाती हैं। यूरोप में इंग्लैण्ड को छोड़कर हिन्दी की स्थिति मजबूत नहीं है। यह नगण्यता की स्थिति तब तक बनी रहेगी, जब तक भारत में इसका अस्तित्व हाशिये पर होगा। इतने बड़े भूभाग पर हिन्दी की स्थिति में होने वाले उतार चढ़ाव के अपने कारण हैं। भारतीयों का यूरोप प्रवास प्रायः उनकी इच्छा का नतीजा था। इनमें व्यावसायिक, शिक्षार्थी, डॉक्टर, इंजीनियर, अध्यापक अथवा आम सरकारी, गैर-सरकारी कर्मचारी एवं सॉफ्टवेयर इंजीनियरों की अच्छी खासी तादाद देखने को मिलती है। जिन देशों में प्रवासी भारतीयों और हिन्दी प्रयोग को एक हद तक महत्वपूर्ण माना जा सकता है, वे हैं - इंग्लैण्ड, बेल्जियम, चेक गणराज्य, फिनलैण्ड, फ्राँस, इटली, जर्मनी, रूस, बेला रूस, यूक्रेन, अजरबैजान, पुर्तगाल, नीदरलैण्ड, नार्वे, पोलैण्ड, रोमानिया, स्वीडन, हंगरी, और बल्गारिया।

यह प्रसन्नता की बात है कि प्रायः सभी यूरोपीय राष्ट्रों में विश्वविद्यालयों या अन्य संस्थानों में स्वतंत्र रूप से या इंडोलाजी अथवा एशियन स्टडीज के अन्तर्गत हिन्दी को एक विषय के रूप में पढ़ाया जाता है। यूरोप में मूल रूप से भारतीय भाषाओं के अध्ययन की शुरुआत संस्कृत से मानी जा सकती है। यूरोप में हिन्दी का मूल अथवा वैकल्पिक विषय के रूप में स्वतंत्र अध्ययन का कार्य, भारत की आजादी

और 1950 में संविधान द्वारा हिन्दी को संघ की राजभाषा घोषित होने के बाद शुरू होने लगा। ''सन् 1958 में 'नाटो' देशों की सिफ़ारिश पर एशियाई तथा अफ़्रीकी भाषाओं के लिए 26 सदस्यों का एक अध्ययन दल बना, जिसने 1959 में अपनी रिपोर्ट में कहा है कि यूरोप तथा अमेरिका देशों में एशियाई भाषाओं के अध्ययन के लिए बड़े पैमाने पर आवश्यक सुविधाएँ उपलब्ध कराई जाएँ। रिपोर्ट में 33 भाषाओं का उल्लेख है जिसमें भारत की 12 भाषाएँ हैं - हिन्दी, उर्दू, बंग्ला, पंजाबी, मराठी, उड़िया, गुजराती, तमिल, तेलुगु, कन्नड़, मलयालम, नेपाली।''[70] वहाँ के विश्वविद्यालयों में हिन्दी के अध्ययन अध्यापन की व्यवस्था जरूर है, पर यह उन्नति नहीं कर पा रही है।

भारत सरकार के राजभाषा के प्रति नरम रुख के कारण शायद इसकी अवस्था ढीली है। यह भले ही एक कटु सत्य हो, परन्तु जिसकी कद घर में न हो उसे बाहरी सम्मान की अपेक्षा कम ही करनी चाहिए। हिन्दी के विकास के कुछ अवरोधक तत्वों के बावजूद अब भारत की सुधरती आर्थिक, शैक्षिक अवस्था के बाद हिन्दी के सम्मानित भविष्य की आशा की जा सकती है। आगे यूरोप के कुछ प्रमुख देशों में फैल रही हिन्दी का विवरण दिया गया है।

2.2.6.1 इंग्लैण्ड में हिन्दी

भारत और इंग्लैण्ड का संबंध बहुत पुराना है। प्रायः चार सौ साल के इस संबंध में पिछला सौ साल अधिक उतार चढ़ाव का समय था। अपने शासन के दौरान अंग्रेजों ने चाहे जैसी भी छाप छोड़ी हो, परंतु अपनी भाषा की ऐसी अमिट छाप छोड़ी जो आज तक अमिट है और शायद आगे भी रहे। जब तक अंग्रेज भारत में थे तब तक हिन्दी हिन्दी अंग्रेजों के ख़िलाफ़ लड़ने का माध्यम थी। आज वह अंग्रेजी के ख़िलाफ़ संघर्ष कर रही है। इन सारी स्थितियों के बावजूद इसका जो वैश्विक विकास हुआ है, उस पर दृष्टिपात करने से पता चलता है कि गिरमिटियों

के अतिरिक्त "हिन्दी भाषा को प्रत्यक्ष या अप्रत्यक्ष रूप से भारत से बाहर प्रस्तुत करने का बहुत बड़ा श्रेय उन ईसाई पादरियों तथा अंग्रेजी भाषाविदों को है जिन्होंने अधिकांशतः समय भारत में रहकर हिन्दी या हिन्दुस्तानी व्याकरण तथा स्वयं शिक्षक पुस्तकें लिखी, जैसे - गिलक्राइस्ट (हिन्दुस्तानी व्याकरण), पिंकाट (हिन्दी मैन्युअल), फोबर्न प्लेट्स (हिन्दी व्याकरण शब्द कोश), एउसन (हिन्दी व्याकरण), एस.एच.कैलाग (ए ग्रामर ऑफ द हिन्दू लैंग्वेज, 1875), ए.एच.हार्ली (कलोकियल हिन्दुस्तानी, 1944), एच.सी.शोल बर्ग (कन्साइज ग्रामर ऑफ द हिन्दी लैंग्वेज,1940) और ग्राहम बेली (टीच योरसेल्फ हिन्दुस्तानी,1950) आदि।"[7]

इंग्लैण्ड में हिन्दी दो तरह से प्रसारित हुई। एक विश्वविद्यालय में पठन-पाठन द्वारा, दूसरा वहाँ बसे लोगों के द्वारा। विश्वविद्यालयों में लंदन विश्वविद्यालय का 'प्राच्य एवं अफ्रीकी विद्या संस्थान' अधिक प्रचलित है। पहले और आज भी लोग व्यक्तिगत रुचि, भारत भ्रमण, राजनायिक सेवा और भाषा विज्ञान आदि के लिए भाषा सीखना चाहते हैं, परन्तु यह संख्या शायद ही कोई खास मायने रखती है। वहाँ के भारतीय एवं एशियाई लोगों के बीच संपर्क भाषा, मनोरंजन (फ़िल्म और टेलीविजन) और संचार माध्यमों में हिन्दी प्रयोग धीरे-धीरे एक नई आशा का संचार करने लगा है। शायद इस उम्मीद को आगे बढ़ाने में सन् 1999 में लंदन में संपन्न छठवें विश्व हिन्दी सम्मेलन का भी हाथ था। वहाँ सबसे पहले 1883 में हिन्दुस्तान नामक पत्र का प्रकाशन किया गया। बाद में 'अमरदीप' 'प्रवासिनी' आदि पत्रिकाएँ प्रकाशित की गईं। सन् 1997 से 'पुरवाई' नामक पत्रिका प्रकाशित हो रही है।

इंग्लैण्ड में भारतीयों की संख्या लाखों में है। उनके साथ पाकिस्तानी और बंग्लादेशियों की संख्या कुछ कम नहीं है। इसलिए आपसी बोलचाल की संपर्क भाषा के लिए भी अधिकतर हिन्दी का प्रयोग होता है। आजकल वहाँ साहित्य लेखन भी खूब हो रहा है। डॉ.लक्ष्मीमल सिंह के सहयोग से इसने जो जोर पकड़ा वह सृजन

अब तक जारी है। वहाँ के हिन्दी लेखकों में दिव्या माथुर, रूपर्ट स्नेल, डॉ.मैक ग्रेगर, टी.एन.शर्मा, गौतम सचदेव, उषाराजे सक्सेना, मोहन राना, सत्येन्द्र श्रीवास्तव, कृष्ण अनुराधा, उषा वर्मा, सोहन राही, राकेश माथुर, के.जी.खण्डेलवाल आदि प्रमुख हैं। हिन्दी परिषद गीतांजलि समुदाय, भारतीय भाषा संगम आदि प्रमुख हिन्दी सेवी संस्थाएँ हैं, जो हिन्दी का प्रचार-प्रसार करती हैं। वहाँ कैंब्रिज यूनिवर्सिटी, लंदन यूनिवर्सिटी और योर्क यूनिवर्सिटी में उच्चतम और शोध स्तर की शिक्षा दी जाती है। वहाँ की स्कूली शिक्षा में भी इसे बढ़ावा मिल रहा है।

ब्रिटेन के सांस्कृतिक, धार्मिक जीवन में हिन्दी का बड़ा महत्व है। वहाँ अक्सर अन्तर्राष्ट्रीय, राष्ट्रीय और क्षेत्रीय साहित्यिक गोष्ठियाँ की जाती हैं। अगर व्यवस्थित रूप से हिन्दी को बढ़ावा मिलता रहे तो कुछ ही वर्षों में इंग्लैण्ड में हिन्दी का स्वरूप सशक्त हो जाएगा। वहाँ हिन्दी पत्र-पत्रिकाएँ खूब प्रचलित हैं। हिन्दी सिनेमा, गीत-संगीत, भारतीय भोजन का प्रभाव बड़ी संख्या में भारतीय विद्यार्थियों का इंग्लैण्ड आगमन कुछ ऐसे पहलू हैं जिससे वहाँ हिन्दी का भविष्य उज्ज्वल दिखता है। यूरोप में इंग्लैण्ड मात्र ऐसा देश है जहाँ हिन्दी की स्थिति सभी देशों से बेहतर है। इंग्लैण्ड में भारतीय उपमहाद्वीप के अप्रवासियों की संख्या प्रायः 20-22 लाख के आसपास आँकी जाती है। यह हिन्दी भाषा के लिए खुशी की बात है। भले ही नई पीढ़ी के लोग अंग्रेजी की ओर अधिक आकर्षित हैं, परन्तु वे अपनी मातृभाषा अथवा संपर्क भाषा हिन्दी से अपरिचित नहीं हैं। बूढ़े लोगों तक सीमित हिन्दी भाषा को दूसरी-तीसरी पीढ़ी तक पहुँचाने के लिए हिन्दी प्रेमी लोगों, संस्थाओं और सरकार को व्यापक योजना बनानी होगी। यह भी संयोगवश खुशी की बात है कि यहाँ भारतीय उच्चायोग के द्वारा संपूर्ण प्रोत्साहन की बात भी अक्सर मानी जाती रही है। यहाँ भी शिक्षा संबंधी अनेक कठिनाइयाँ हिन्दी के रास्ते में आ रही हैं। इस पर भी हिन्दी विकास मार्ग पर अग्रसर है।

2.2.6.2 पोलैण्ड में हिन्दी :

हिन्दी भाषा के अन्तर्राष्ट्रीय संदर्भ की बात करना कोरी कल्पना या भावुकता नहीं है। इसके वैश्विक विकास में जिन यूरोपीय देशों ने स्तम्भ रूपी सहारा दिया है, उनमें पोलैण्ड एक है। डॉ.वृस्की के अनुसार ''पोलैण्ड में हिन्दी अध्ययन की परम्परा काफ़ी पुरानी है - विश्वयुद्ध से पहले भी थी और विश्वयुद्ध के तुरंत बाद भी प्राच्य विद्या संस्थान की शुरुआत हुई। यह कार्य भी सूशकेविच ने शुरू किया।''[72] स्वयं डॉ.वृस्की विश्वयुद्ध के बाद भारतीय विद्या में एम.ए. करने वाले प्रथम पोल थे। सोवियत संघ की श्रीमती रुतवोस्की की विशेष रुचि और प्रेरणा से पोलैण्ड के वारसा विश्वविद्यालय में हिन्दी की शुरुआत हुई। इसमें भारत विद्या विभाग सन् 1953 से है। डॉ.हिरण्यमाल घोषाल ने वारसा में रह कर एंटन चेखव पर शोध किया और बंग्ला और हिन्दी अध्यापन में मदद की। वहाँ पर डॉ.ततियाना रूथकोस्का के आने पर सन् 1955 में विधिवत रूप से हिन्दी की शिक्षा आरंभ हुई। इसके अलावा क्राकूव विश्वविद्यालय में भी हिन्दी की शिक्षा की शुरुआत हुई। वहाँ प्रो.शेयर ने कबीर के कुछ दोहों का वारसा के शिक्षक यु. पार्लोन्वस्की ने कबीर-वाणी, नोबल पुरस्कार विजेता लेखक चेस्लावमिलोस ने अंग्रेजी के माध्यम से कबीर की पोलिस में अनूदित कविताओं का अंग्रेजी में अनुवाद किया है। श्री पार्नोव्स्की ने रामचरित मानस के कुछ अंशों के साथ प्रेमचंद की कहानियों को एक संग्रह में अनुवाद 1915 में प्रकाशित किया है। डॉ.तात्याना रूत्कोव्स्का एवं डॉ.दानूता स्ताशिक के एक लेखक के अनुसार ''स्वातंत्र्योत्तर हिन्दी साहित्य अब अनेक पोलिश विद्वानों के रुचि एवं अध्ययन का क्षेत्र बन रहा है, जिसके परिणाम स्वरूप अब अनेकानेक लेखों, शोध निबंधों और अनुवादों का विषय बन गया है।''[73] डॉ. क्रिस्टोव वृस्की, डॉ.रुत्कोव्स्की, डॉ.पार्नोव्स्की आदि के अलावा और भी लेखक हैं जिन्होंने आधुनिक हिन्दी साहित्य के कहानियों, नाटक एवं कविता का पोलिश भाषा में अनुवाद किया है। क्राकूव और वार्सा विश्वविद्यालय में पाँच साल की अवधि के अन्तर्गत हिन्दी व्याकरण, हिन्दी साहित्य का इतिहास, हिन्दी साहित्य एवं भक्तिकाल

का विस्तृत अध्ययन कराया जाता है। निराला, प्रसाद, अज्ञेय, रेणु, मोहन राकेश, निर्मल वर्मा, कबीर, जायसी, तुलसी एवं सूर आदि कवि को प्रमुखता दी जाती है। डॉ.दानूता स्ताशिक भी वहाँ शिक्षण का कार्य करती है। समय समय पर डॉ.सुरेन्द्र, भूटानी, डॉ.मंजु गुप्ता जैसे भारतीय हिन्दी अध्यापक पोलैण्ड जाकर उल्लेखनीय सहयोग देते रहे हैं। यह ऐसा देश है जहाँ हिन्दी पठन-पाठन व्यावसायिक दृष्टि से कम और रुचि के कारण अधिक पढ़ा जाता है। हिन्दी भाषा-साहित्य के माध्यम से वे भारत की आत्मा को समझना चाहते हैं। यह एक सुखद अनुभूति है।

2.2.6.3 रूस में हिन्दी :

भारत की स्वाधीनता की प्राप्ति के बाद विदेशों में हिन्दी की स्थिति का सतत विकास हुआ। तत्कालीन सोवियत संघ ने भी इसे महत्व दिया और संघ के प्रायः सभी प्रान्तों में हिन्दी पठन-पाठन पर ध्यान दिया गया। आज सोवियत संघ के विभाजन के बाद भी कई देश इसे व्यापक तरजीह देते हैं। रूस सबमें प्रमुख राष्ट्र है। वहाँ आज भी हिन्दी भाषा-साहित्य की उपस्थिति देखने को मिलती है। हरिबाबू कंसल मानते हैं कि ''सोवियत रूस में हिन्दी के प्रचार-प्रसार का आरंभ अक्तूबर, 1917 से समझना चाहिए जब वहाँ सर्वहारा क्रान्ति के महान नेता लेनिन के आदेश से महान रूसी साहित्यकार गोर्की के नेतृत्व में प्राच्य विद्या विभाग की स्थापना हुई। .... इसी विभाग के अन्तर्गत भारत विद्या (इन्डोलॉजी) का भी अध्ययन प्रारंभ हुआ।''[74] बँटने से पहले तजकिस्तान, अर्मीनिया, तुर्कमीनिया, उजबेकिस्तान, कजाकिस्तान, यूक्रेन आदि में हिन्दी की शिक्षा हेतु शिक्षण संस्थान थे। प्रायः सभी स्थानों पर, विशेषकर मास्को, लेनिनग्राद और ताशकंद विश्वविद्यालयों में आज भी भारतीय भाषा और साहित्य पर अनुसंधान स्तर तक कार्य हो रहा है। वहाँ के सर्वप्रिय और प्रसिद्ध लेखक अलेक्सेय पित्रोविच वारन्निकोव माने जाते हैं। उनकी मातृभाषा यूक्रेनी है। इन्होंने रामचरित मानस के रूसी अनुवाद के कारण व्यापक प्रसिद्धि पाई। प्रेमचंद के जीवित रहने पर ही उन्होंने उनकी कहानी का अनुवाद

किया। उनके बाद मल्केयेविच ब्रेस्कोल्नी, डॉ.पी.वी.ग्लादिशेव आदि विद्वान हैं। ग्लाशिदेव ने प्रेमचंद की रचनाओं पर पी.एच.डी की है। इनके अलावा चेलीशेव क्रशेमिन्नीकोव, यू.लाक्रीनेन्को, एनव्यूकोवा, एस.दीमशित्स, ओ.उलप्सीफेराव, ई.रावीनोविच, यूना सेन्को, ओ.आफानासियेव, एस.पोतावेन्को, बूस्मिनों.एम, एन्तीनोव एफ.अनूफ्री, बू प्लोकोव, वी.मखोतिन आदि''[75] प्रमुख हैं। इन सभी राष्ट्रों में तुलसी के रामचरित मानस और प्रेमचन्द साहित्य का विस्तृत और ठोस अध्ययन की परम्परा को महत्व मिला है। कहना न होगा कि इससे हिन्दी का खूब भला हुआ।

रूस और भारत की मैत्री जगजाहिर है। निश्चित है इसका असर संस्कृति एवं भाषा पर भी हुआ। जब सोवियत संघ बँटा नहीं था, तब वहाँ हिन्दी की स्थिति सुखद थी। अब धीरे-धीरे क्षीण होती जा रही है। दोस्ती अब भी है, परन्तु संयुक्त संघ बिखर चुका है। यह बिखराव हिन्दी के प्रसार में भी बाधित है। वहाँ कुछ स्कूलों के अलावा इन्स्टीटय़ूट ऑफ़ एशियन एण्ड अफ्रिकन कन्ट्रीज (मास्को), मास्को स्टेट इन्स्टीटय़ूट ऑफ़ इंटरनेशनल रिलेशंस (मास्को), लेनिनग्राद स्टेट यूनिवर्सिटी (लेनिनग्राद), ताशकंद स्टेट यूनिवर्सिटी और ताजिक स्टेट यूनिवर्सिटी आदि विश्वविद्यालय भी प्रमुख हैं। भारतीय लेखकों में भारतेंदु हरिश्चंद्र, प्रेमचन्द, जयशंकर प्रसाद, सूर्यकान्त त्रिपाठी निराला, सुभद्राकुमारी चौहान, सुमित्रानंदन पंत, वृन्दावनलाल वर्मा, यशपाल, रामधारी सिंह दिनकर और उपेन्द्रनाथ अश्क शामिल हैं।'[76] यहाँ पठन-पाठन आज भी चल रहा है।

मास्को विश्वविद्यालय, रूस में अध्यापक का कार्य कर चुकी। डॉ.जोगेश कौर रूस में हिन्दी अध्ययन के कारणों पर प्रकाश डालती हुई लिखती हैं कि ''विदेशी अध्येताओं के लिए हिन्दी शिक्षण-प्रशिक्षण, विभिन्न व्यावहारिक एवं प्रयोजनात्मक क्षेत्रों में उसका उपयोग संसार में हिन्दी के माध्यम से एकता का आना, व्यापार का क्षेत्र विकसित होना आदि कई कार्य संपन्न हो रहे हैं, जिसका अनुभव रुचिकर है।

इसका कारण ऐतिहासिक परंपरा, व्यापकता, धर्म निरपेक्षता है। विदेशों में भाषा-शिक्षण अत्यंत रुचिकर है।''[77] रूस समेत अन्य सोवियत संघ के देशों के विश्वविद्यालयों की सूची सोवियत संघ के अंतर्गत परिशिष्ट में दी जा रही है।

2.2.6.4 फ्राँस में हिन्दी :

पराधीनता के दौरान भारतीय भाषा हिन्दी पर जिन विदेशियों ने प्रमुख रूप से कार्य किया, उनमें फ्राँस के गार्सा द तासी प्रमुख हैं। उन्होंने 'हिन्दुई भाषा का इतिहास' लिखा। वे आधुनिक विश्व पूर्वी भाषा संस्थान पेरिस में अध्यापन करते थे। यह कार्य उन्होंने 1875 तक किया। उनके बाद कोई विशेष रूप से पठन-पाठन नहीं हुआ। उनके बाद सन् 1921 में ज्यूल ब्लॉक एवं 1939 में प्येर मैल इस संस्थान के प्रोफ़ेसर हुए। सन् 1964 में सौरवेन विश्वविद्यालय (पेरिस विश्वविद्यालय) में डॉ.श्रीमती वोदवील की अध्यक्षता में हिन्दी साहित्य के अनुसंधान कर्ताओं के लिए एक मध्यकालीन हिन्दी पाठ्यक्रम शुरू हुआ जिसमें सूर, तुलसी, कबीर, जायसी आदि मध्यकालीन कवियों की प्रमुख रचनाओं की फ्राँसीसी में व्याख्या की जाती। श्रीमती वोदवील ने स्वयं 'रामचरित मानस' 'ढोला मारू' तथा कबीर की रचनाओं का अनुवाद किया।''[78]

आज पेरिस विश्वविद्यालय में हिन्दी, उर्दू, बँग्ला और तमिल नामक चार भारतीय भाषा विभाग हैं। वहाँ नवीन पद्धति द्वारा भाषा शिक्षण होता है। हिन्दी भाषा का व्याकरण, भाषा और साहित्य आदि का अध्ययन होता है। हिंदी-फ्रेंच शब्द कोशों का निर्माण हो चुका है। आम जनता में गिनु-चुने प्रवासी भारतीय को छोड़कर हिन्दी भाषा का ज्ञान नहीं है। अधिकांश लोगों को पता है कि यह भारत की भाषा है। कला की नगरी पेरिस एवं आधुनिकता का पर्याय फ्राँस अपनी भाषा और साहित्य का सम्मान सीमा की हद तक करता है। ऐसा अगर सभी भाषाओं विशेषकर भारतीय भाषाओं के साथ हो तो सब रोना ही खत्म हो जाय।

2.2.6.5 बेल्जियम में हिन्दी :

भारत की आजादी के बाद जब हिन्दी भारत की राष्ट्रभाषा बनी तब बेल्जियम में सन् 1956 में ब्रूसेल्स विश्वविद्यालय में हिन्दी भाषा शिक्षण प्राच्य भाषा विज्ञान तथा इतिहास संस्थान में आरंभ हुआ। आज वहाँ लूवेन विश्वविद्यालय, स्टेट गेंट विश्वविद्यालय और ल्यैज विश्वविद्यालय में हिन्दी अध्यापन का कार्य होता है। यहाँ व्याकरण के साथ भाषा कौशल तथा वार्तालाप पर जोर दिया जाता है। वहाँ के अध्यापक लगातार लेख आदि लिखते रहते हैं। लूवेन विश्वविद्यालय में एक बार अन्तर्राष्ट्रीय स्तर का (1970 में) सम्मेलन भी आयोजित किया जा चुका है। वहाँ मूल रूप से भारत की सांस्कृतिक सम्वृद्धि को समझने हेतु हिन्दी भाषा का अध्ययन किया जाता है। वहाँ प्रेमचन्द, जैनेन्द्र, सुदर्शन, यशपाल एवं प्रसाद जैसे महान लेखकों को विषय में शामिल किया गया है। *बुद्धिजम, हिन्दुजम* आदि के साथ संस्कृत भाषा भी पढ़ाई जाती हैं।

'गेंट विश्वविद्यालय ' में हिन्दी का सर्वाधिकार सुदृढ रूप देखा जा सकता है। बेल्जियम में शिक्षण हेतु भारत से भी अध्यापक बुलाए जाते हैं। यह नियुक्ति 'भारतीय सांस्कृतिक संबंध परिषद' की ओर से होती है। प्रसिद्ध हिन्दी विद्वान डॉ.फादर कामिल बुल्के इसी देश के निवासी थे। इनके अलावा डॉ.वीनंद कलवार्त जैसे हिन्दी प्रेमी भी बेल्जियम के थे। यहाँ होने वाली प्रगति को देखकर भविष्य में हिन्दी की उन्नति की आशा बँधती है।

2.2.6.6 जर्मनी में हिन्दी :

यूरोप में जिन कुछ राष्ट्रों में भारतीय संस्कृति एवं भाषा के प्रति गहरा लगाव है, उनमें जर्मनी सबसे आगे है। मुख्य रूप से पश्चिमी जर्मनी। आज पूर्व और पश्चिमी दोनों जर्मनी का एकीकरण हो गया है, परन्तु फिर भी उनके भारत भाषा संबंधी दृष्टिकोण में कोई विशेष बदलाव नहीं आया है। सन् 1975 के समाचार अंश के अनुसार ''पश्चिम जर्मनी के लगभग चौदह विश्वविद्यालयों में हिन्दी भाषा और

साहित्य का अध्ययन और अध्यापन लगभग 1960 से चल रहा है। दो तीन विश्वविद्यालयों में वर्तमान शताब्दी के तीसरे दशक से ही हिन्दी पढ़ाई जा रही है और वहाँ हिन्दी पुस्तकों की संख्या भी अच्छी है। बर्लिन, बॉन, हाइडिलबर्ग, हैंबर्ग, ट्यूबिगन, भारबुर्ग, गेओटिगन, म्युनिरव, फ्राइबुर्ग, म्युस्टर माइत्स, कील, कोलोन और फैंकफुर्त के विश्वविद्यालयों में किसी न किसी रूप में हिन्दी शिक्षण का प्रबंध है।''[79] प्रायः सभी विद्यालयों में आज भी यह शिक्षण भारत शिक्षा विभाग, दक्षिण एशिया संस्थान या भारोपीय भाषाशास्त्र विभाग के अन्तर्गत होता है। इनकी सूची परिशिष्ट में संलग्न है। वहाँ उच्चारण आदि की सुविधा के लिए टेपरिकार्डर आदि का प्रयोग किया जाता है। आज वहाँ इन संपर्क सूत्रों की कमी है, जिनके सहारे हिन्दी साहित्य, लेखक, शिक्षक और शिक्षार्थी नजदीक आ सकें। हिन्दी का व्यावहारिक प्रयोग वहाँ बहुत कम देखने को मिलता है। हिन्दी के अध्यापकों पर ज्यादा जिम्मेदारी पड़ती है। अगर निष्ठा बनाये रखें तो रचनाधर्मिता के स्तर को भी उठाया जा सकता है। हिन्दी के जर्मन छात्र, हिन्दी व्याकरण का मनोयोगपूर्वक अध्ययन करते हैं। इस तरह लिखित रूप से वे मजबूत होते हैं। वहाँ अधिकतर शैक्षणिक डिप्लोमा के रूप में हिन्दी पढ़ाई जाती है।

''हिन्दी की विविध साहित्यिक विधाओं पर अनुवाद के माध्यम से काफ़ी काम हुआ है।'[80] इनमें प्रेमचंद, निराली और भीष्म साहानी आदि की कृतियों के साथ साथ कई अन्य भारतीय कवियों की रचनाओं का प्रचुर अनुवाद हुआ है। यहाँ के हिन्दी विद्वानों में श्री लोत्से, श्रीमती मार्गरेट गात्सलाफ, श्रीमती बारबारा ब्यूरनर कुमारी हनी लोत्सक, कुमारी क्रिस्टीना और श्री लुप्त बगान्त्स प्रमुख हैं।

हिन्दी के प्रचार हेतु वहाँ की स्थिति कुछ प्रगतिशील लगती है। इसका कारण वहाँ की जनता की हिन्दी-आस्था है। विश्वविद्यालयों में विद्यार्थियों की संख्या में इजाफा इस बात का द्योतक है। भारत सरकार और जर्मन सरकार के तत्वावधान में

बृहत् जर्मन-हिन्दी और हिन्दी-जर्मन शब्द कोश पर कार्य हुआ है। वहाँ के रेडियो और टेलीविजनों पर हिन्दी के अधिक से अधिक हिन्दी के शैक्षणिक और मनोरंजन के कार्यक्रम प्रसारित करके इसका प्रचार किया जा सकता है। जर्मन स्थित भारतीय दूतावास, हिन्दी शिक्षा संबंधी परेशानियों के समाधान में सहायक हो सकता है। जर्मनी में धीरे-धीरे बढ़ती भारतीयों की संख्या भी इसके लिए सहयोगी साबित होगी।

2.2.6.7 हालैण्ड में हिन्दी :

भारत और हालैण्ड का संबंध सन् 1602 में 'डच ईस्ट इण्डिया कंपनी' की स्थापना से आरंभ होता है। डच या नीदरलैण्ड के नाम से भी इसे अभिहित किया जाता है। कम्पनी भारत से व्यापार के लिए स्थापित की गई थी। "ईस्ट इण्डिया कम्पनी की स्थापना से भारत में गुजरात, बंगाल, कोरमंडल तट और मालबार तट पर इन्होंने अपनी कोठियाँ खोलीं। चूँकि व्यापारिक लेन-देन में भाषा का ज्ञान आवश्यक था इसलिए इन्होंने भारतीय कारकूनों को रखा जो फारसी और हिन्दुस्तानी भाषाओं के द्वारा कम्पनी और मुगलदरबार के बीच पत्र-व्यवहार किया करते थे। 17वीं शताब्दी में हिन्दी को हिन्दुस्तानी या खडी बोली के नाम से समझा जाता था।"[81] इस तरह व्यापार ने भाषा के प्रसार में योगदान दिया। भारतीयों का सीधे हालैण्ड जाकर नौकरी एवं विकास करने के उदाहरण नाममात्र हैं, परन्तु युगान्डा आदि देशों में रह रहे भारतीयों ने ईदी अमीन के दुःशासन के दौरान भागकर हालैण्ड जैसे देशों में नौकरी आदि कर ली और वहीं बस गए। डच साम्राज्य से आजाद होने के बाद हजारों सूरीनामी प्रवासी भारतीय यहाँ आकर बस गए। उनमें अधिकांश की मातृभाषा हिन्दी थी। इस तरह यहाँ हिन्दी के पौधे ने जन्म लिया और पल्लवित हो रहा है। सन् 1999 में प्रकाशित एक उद्धरण के अनुसार "हालैण्ड में कुल लगभग 4000 प्रवासी भारतीय इस समय रह रहे हैं और वे अपने-अपने तरीके से डच समाज के विकास में अपना योगदान कर रहे हैं।"[82] सूरीनाम से आकर हालैण्ड में बसे प्रवासी भारत वंशियों की संख्या काफ़ी है और वे

सरनामी (अवधी-भोजपुरी मिश्रित खड़ीबोली) बोलते हैं। डॉ.शारदा भसीन के अनुसार "हालैण्ड में सूरीनाम से आए लगभग दो लाख प्रवासी भारतीय हैं, जिनकी मातृभाषा पूर्वी हिन्दी की बोली भोजपुरी है। पुरानी पीढ़ी के लोग आपस में भोजपुरी बोलते हैं, किन्तु आधुनिक पीढ़ी के युवा एवं बालक डच भाषा का व्यवहार करते हैं।"[83] प्रायः सभी प्रवासी भारतीय बहुभाषी हैं। वे हिन्दी को हो रहे लोप से भयभीत हैं। इसीलिए धार्मिक कार्यों, मनोरंजन माध्यमों हिन्दी की विशेष कक्षाओं आदि के सहारे इसे नई पीढ़ी तक पहुँचाना चाहते हैं। अब धीरे-धीरे किशोर वर्ग में इसे सीखने की प्रवृत्ति बढ़ी है। हिन्दी शिक्षण की स्वैच्छिक संस्थाएँ इसके प्रचार- प्रसार में योग दे रही हैं। 'हिन्दी परिषद, नीदरलैण्ड' का विशेष योगदान है। यह राष्ट्रभाषा प्रचार समिति, वर्धा के कार्यक्रम चलाती है। वहाँ 'हिन्दी पत्रिका' नाम की एक पत्रिका भी निकलती है।

वहाँ स्कूलों में अभी तक हिन्दी को स्थान नहीं मिल पाया है, परन्तु दो विश्वविद्यालयों लायडन तथा यूटरेक्ट में हिन्दी विषय पर शिक्षा दी जाती है।
अध्यापकों में प्रोफेसर हेस्टरमान, ए.एम.बी.जायसवाल, डॉ.जगेश्वर प्रसाद एवं कौलेश्वर सुकुल प्रमुख रहे हैं। भारत के बढ़ते प्रभुत्व के कारण हालैण्ड में भी हिन्दी का प्रभुत्व बढ़ सकता है।

2.2.6.8 यूरोप के अन्य देशों में हिन्दी :

यूरोप के अन्य देशों में जहाँ हिन्दी भाषा-साहित्य की शिक्षा दी जाती है, उनमें हंगरी, बल्गारिया, चेक गणराज्य, इटली, स्वीडन तथा फिनलैण्ड आदि प्रमुख हैं।

हंगरी में हिन्दी पठन-पाठन की परम्परा काफ़ी प्राचीन नहीं है। सन् 1992 में भारतीय सांस्कृतिक संबंध परिषद के सहयोग से हंगरी में हिन्दी शिक्षण हेतु अतिथि शिक्षक की नियुक्ति की गई। इस तरह श्री असगर वज़ाहत को 1992 में बुदापेस्ट के ओत्वोश लोरान्द विश्वविद्यालय के भारोपीय अध्ययन विभाग में पढ़ाने के लिए

भेजा गया। वहाँ डॉ.मारिया नेज्यैशी विभाग की प्रमुख हैं। इसके अलावा बुदापेस्ट की 'कोस्मा द कोरोनी सोसाइटी' और 'स्टुडेन्ट्स हॉस्टल' इवोत्वेस में भी हिन्दी शिक्षण होता है। वहाँ के लोगों में हिन्दी सीखने के प्रति उत्साह है। हंगेरियन माध्यम से हिन्दी पढ़ाने की पुस्तक भी तैयार की गई है। भारतीय दूतावास में भी कक्षाएँ लगती हैं। डॉ.रविप्रकाश गुप्त भी वहाँ हिन्दी शिक्षण कर चुके हैं। वहाँ से उच्च शिक्षा लेकर इमरै बंगा जैसे विद्यार्थी भारत के शान्तिनिकेतन विश्वविद्यालय से आनन्दघन पर पी.एच.डी कर चुके हैं। व्याकरण एवं शिक्षण प्रणाली पर आधारित पुस्तक पर काम चल रहा है। अभी भी हंगरी में हिन्दी की स्थिति अपनी बाल्यावस्था में है। बल्गारिया का हिन्दी शिक्षण, वैज्ञानिक ढ़ंग से सुचारू शिक्षण देने के कारण जाना जाता है। वहाँ हिन्दी शिक्षा की शुरुआत सन् 1983 में हुई। इसका शिक्षण सोफिया विश्वविद्यालय के भारतीय विद्या विभाग के अन्तर्गत होता है। इसके अन्तर्गत विद्यार्थियों को हिन्दी के प्रारंभिक स्तर से उच्च स्तर तक हिन्दी की शिक्षा का प्रावधान है। विद्यार्थियों की मौखिक और लिखित दोनों प्रकार की हिन्दी की शिक्षा पर ध्यान दिया जाता है। वहाँ भी भारत सरकार शिक्षक नियुक्त करती है। प्रेमचन्द वहाँ सबसे ज्यादा प्रचलित हैं। हिन्दी फ़िल्मों के बल्गारियन सबटाइटल्स के सहारे दिखाने का भी कार्य हो रहा है। हिन्दी प्रसार की शुरुआत दरअसल विमलेश कांन्ति वर्मा द्वारा सन् 1975 में ही की जा चुकी थी। परन्तु बाद में वह कुछ ढ़ीला रहा। वहाँ भी अन्य यूरोपीय देशों के विद्यार्थियों जैसी समस्या का सामना करना पड़ता है। देश की आम जनता इसके विकास की बात सोचना शायद अभी जल्दबाजी होगी।

इटली में सरकारी तौर पर सन् 1965 में हिन्दी शिक्षण की शुरुआत हुई। इटली के रोम, वेनिस, नेपल्स तथा ट्यूरिन विश्वविद्यालयों में हिन्दी भाषा और साहित्य का अध्ययन-अध्यापन होता है। वेनिस विश्वविद्यालय का महत्व सब से ज्यादा है क्योंकि वहाँ शोध स्तर तक की शिक्षा प्राप्त की जा सकती है। यहाँ हिन्दी की शिक्षा प्राथमिक और उच्च दो स्तरों पर दी जाती है। प्रो.मारिओला ओफरेदी

(वेनिस विश्वविद्यालय) ने इसके अध्यापन को गंभीरता से लिया और विकसित किया है। शिक्षा का माध्यम खड़ी बोली हिन्दी ही होती है, परन्तु साहित्य अध्ययन के अन्तर्गत ब्रज, अवधी, राजस्थानी एवं मैथिली में लिखी रचनाएँ पढ़ाई जाती हैं। पाठक्रम में कबीर, रहीम, मीरा, सूर, विद्यापति, चंदबरदाई, खुसरो एवं तुलसी आदि पढ़ाए जाते हैं। अब आधुनिक साहित्य की शिक्षा पर ज़ोर दिया जाता है।

स्वीडन में उपासला विश्वविद्यालय और स्टॉक होम विश्वविद्यालय में भारत विद्या विभाग में हिन्दी पढ़ाई जाती है। हिन्दी शिक्षा की शुरुआत वहाँ 1968 में हुई। रोमानिया के 'बुखारेस्ट विश्वविद्यालय' में हिन्दी शिक्षा की शुरुआत सन् 1965 में हुई। हिन्दी शिक्षण की स्थिति अच्छी है। अनुवाद के साथ-साथ यहाँ मौलिक लेखन भी होता है। मिहाई एमिनेस्कु यहाँ के प्रसिद्ध कवि हैं। महाभारत, ऋग्वेद और अभिज्ञान शाकुंतलम का अनुवाद हो चुका है। गोदान, मैलाआँचल आदि का भी अनुवाद हुआ है।

भारी संख्या में भारतीय प्रवासी स्विट्जरलैण्ड में निवास करते हैं। वहाँ भी पुरानी और नवीन दो पीढ़ियों के लोग पाए जाते सकते हैं। वहाँ गए भारतीय प्रायः बहुभाषी हैं। उच्च शिक्षा प्राप्त जितने लोग हाल ही में गए या जा रहे हैं वे तो हिन्दी का थोड़ा बहुत ज्ञान रखते ही हैं। परन्तु जो दूसरी पीढ़ी की सन्तानें हैं, वे भी व्यक्तिगत प्रयास के बल पर हिन्दी सीखने की ओर झुक रही हैं। किसी भी पर्व त्योहार के दिन इसका अधिक प्रयोग देखा जा सकता है। वहाँ के भारतीय सम्पन्न हैं। इस तरह हिन्दी भी सम्मानित है। प्रायः भारतीय घरों में खिचड़ी भाषा भी देखने को मिलती है। यह अभी तक सरकारी शिक्षा संस्थानों में अपना स्थान नहीं बना सकी है। स्वैच्छिक संस्थाएँ इसके शिक्षण, प्रचार एवं प्रसार में अग्रणी हैं।

फिनलैण्ड में हेलसिंकी (राजधानी) स्थित भारतीय राजदूतावास में कक्षाएँ चलती हैं। व्यक्तिगत स्तर पर वहाँ के निवासी वहाँ भी और भारत आकर भी हिन्दी

का अध्ययन करते हैं। वहाँ के निवासी बर्तिन तिक्कनेल जाने माने हिन्दी सेवी हैं। उन्होंने प्रेमचंद पर कार्य किया है। पिछले पच्चीस वर्षों से हेलसिंकी विश्वविद्यालय के एशियाई अफ्रीकी संस्थान में हिन्दी पढ़ाई जाती है। आगे आने वाली पीढ़ी हिन्दी सीखने की इच्छुक लगती है।

स्वीडन की तरह नार्वे और डेन्मार्क के प्रवासी भारतीय भी आपस में सम्पर्क भाषा के रूप में हिन्दी का उपयोग करते हैं। डेन्मार्क के कोपेन हेगेन विश्वविद्यालय में और नार्वे के ओसलो विश्वविद्यालय में हिन्दी की शिक्षा दी जाती है। नार्वे के तो कुछ स्कूलों में भी हिन्दी शिक्षा का प्रावधान था। सन् 1993 में बजट की कटौती के कारण इसे बन्द करना पड़ा। कई देशों की तरह नार्वे में भी हिन्दी पत्रिकाएँ निरन्तर निकलती रहती हैं। वहाँ के प्रमुख पत्रकारिता के स्तम्भों में डॉ.राजेन्द्र प्रसाद शुक्ल और श्री कैलाश राय के नाम प्रमुख हैं। 'शान्तिदूत' और 'इम्मिग्रेन्ट्स टाइम्स' का प्रकाशन आज भी हो रहा है।

इस तरह एशिया के बाद यूरोप दूसरा महादेश है, जहाँ प्रायः सभी देशों में हिन्दी शिक्षण की व्यवस्था है। कहीं कहीं जैसे इंग्लैण्ड, स्विट्जरलैण्ड, नार्वे, रूस आदि देशों में प्रवासी भारतीयों की संख्या अधिक होने के कारण यह शिक्षा संस्थानों से निकल कर आम लोगों के द्वारा भी बोली जाती है। इन देशों में थोड़ा बहुत लेखन कार्य भी हो रहा है। भाषा और साहित्य दोनों दृष्टियों से हिन्दी को अन्तर्राष्ट्रीय स्तर प्रदान करने में यूरोप का प्रमुख हाथ है।

* * *

संदर्भ सूची

1) विश्व में हिन्दी - खण्ड -1 हरिबाबू कंसल - पृ 77.

2) वहीं पृ 78.

3) हिन्दी भाषा और साहित्य का इतिहास - डॉ. भगवत शरण चतुर्वेदी

4) राष्ट्र भाषा - अगस्त 2003 - पृ 12.

5) प्रवासी भारतीयों की हिन्दी सेवा - डॉ. कैलाश कुमारी सहाय - पृ 33.

6) फीजी में हिन्दी - स्वरूप और विकास - विमलेश क्रान्ति वर्मा और धीरावर्मा - पृ -11.

7) प्रवासी भारतीयों की हिन्दी सेवा - डॉ. कैलाश कुमारी सहाय - पृ 28-29.

8) वहीं - पृ - 30.

9) वहीं - पृ - 38.

10) साहित्य अमृत -जुलाई -2002, पृ - 28.

11) In Mauritius it started in 1834, to Guyana in 1838, to Trinidad in 1845, to Natal in 1860, to Surinama in 1873 and in Fiji in 1878. Indian Communities abroad-Themes and Literature, Prof. Ravindra kumar Jain. pg-6.

12) ibid.,(Migration in the West Indies was organised by the indentured sytem that was introduced in different countries at various periodes) pg-6.

13) प्रवासी भारतीयों की हिन्दी सेवा - डॉ. कैलाश कुमारी सहाय - पृ - 32.

14) Coming to overseas migration, in contrast to the medieval emigration was the creation of British colonialism. Indian Communities abroad-Themes and Literature, Prof. Ravindra kumar Jain. pg-2.

15) साहित्य अमृत - जुलाई 2003 - पृ - 28.

16) विश्व में हिन्दी - खण्ड -2 हरिबाबू कंसल - पृ - 257.

17) प्रवासी भारतीयों की हिन्दी सेवा - डॉ. कैलाश कुमारी सहाय - पृ -37.

18) In Mauritius it started in 1834, to Guyana in 1838, to Trinidad in 1845,

to Natal in 1860, to Surinama in 1873 and in Fiji in 1878. Indian Communities abroad-Themes and Literature, Prof. Ravindra kumar Jain. pg-6.

19) विश्व में हिन्दी - खण्ड -2 हरिबाबू कंसल - पृ - 256.

20) मॉरिशस में हिन्दी साहित्य का उद्‌भव और विकास - डॉ. श्यामधर तिवारी - पृ - 360.

21) विश्व में हिन्दी - खण्ड -2 हरिबाबू कंसल - पृ - 257.

22) स्मारिका - सांतवाँ विश्व हिन्दी सम्मेलन -जून 2003 - पृ -355.

23) प्रवासी भारतीयों की हिन्दी सेवा - डॉ. कैलाश कुमारी सहाय - पृ -36.

24) वहीं

25) The survivial, growth and development of Hindu communities depended on four religious, cultural facets. These were Bhajan (Song in Praise of God), Bhojan (Food), Bhashan (Language) and Bhushan (Garment) and ware emphasized by all Hindu families irrespectrive of their sect of traditional differences. Hinduism in the carebbean - Ram Charan Gosine - pg -3.

26) हिन्दी की विश्व यात्रा - सं.डॉ. सुरेश ऋतुपर्ण - पृ - 237.

27) धर्म युग - जनवरी -12, 1975,

28) विश्व में हिन्दी - खण्ड -2 हरिबाबू कंसल - पृ -197.

29) वहीं - पृ -202.

30) वहीं - पृ - 203.

31) नया ज्ञानोदय - जनवरी 2004 - पृ -35.

32) वहीं - पृ - 32.

33) मदर इन्डिया चिल्ड्रन एब्रोड -(हिन्दी अँग्रेजी मासिक) जनवरी 1991 - पृ - 142.

34) वहीं - पृ - 78.

35) साहित्य अमृत - जुलाई 2002, पृ - 30.

36) वहीं

37) राष्ट्र भाषा - अगस्त 2003, पृ - 4.

38) मदर इन्डिया चिल्ड्रन एब्रोड -(हिन्दी अँग्रेजी मासिक) जनवरी 1991 - पृ - 143.

39) वहीं - पृ -145.

40) मॉरिशस में हिन्दी साहित्य का उद्भव और विकास - डॉ. श्यामधर तिवारी - पृ - 359.

41) स्मारिका - सांतवाँ विश्व हिन्दी सम्मेलन - जून 2003, पृ - 307.

42) वहीं - पृ - 308.

43) वहीं - पृ - 323.

44) फीजी में हिन्दी - स्वरूप और विकास - विमलेश कान्ति वर्मा और धीरावर्मा - पृ -8.

45) Arthur Gordan who was appointed the governor of Suva, capital of Fiji requested his principals to recruit indentured laborers from India to clear the forest in Fiji and raise sugarcane plantations. To labour depots were opened, one in culcutta and the other one in chennai. Between May 1879 and November 1960, when the indentured system was abolished 63,533 workers were transported from India to Fiji in 87 ships. According to the girmit agreement, they were to work initially for a period of five years, after which they would be set free.... However if they signed up for an another five year, they were promised returned passage. Hardly any one chose to return. After the abolition of the endentured system, more Indians mostly from Gujarat, migrated to Fiji and entered into business activities in their adopted country... A hybrid Hindi became their lingua franca. (Hindu (English Daily) August 4th 2003, Sam Rajappa.

46) गगनान्चल - अप्रेल-जून 2000, पृ-208.

47) नया ज्ञानोदय - फरवरी 2004 -पृ - 36.

48) विश्व में हिन्दी - खण्ड -2 हरिबाबू कंसल - पृ -188.

49) नया ज्ञानोदय - फरवरी 2004, पृ -40.

50) प्रवासी भारतीयों की हिन्दी सेवा - डॉ. कैलाश कुमारी सहाय - पृ - 105.

51) वागर्थ - जनवरी 2003 (संपादकीय से).

52) वहीं.

53) विश्व हिन्दी दर्शन - जनवरी - मार्च, 1991, पृ - 34.

54) वहीं - पृ - 36.

55) विश्व में हिन्दी - खण्ड -2 हरिबाबू कंसल - पृ -146.

56) वहीं - पृ - 147.

57) वहीं - पृ - 149.

58) वहीं - पृ - 125.

59) राष्ट्र भाषा - जून 2000, पृ - 8.

60) हिन्दुस्तान (हिन्दी दैनिक, दिल्ली) अक्टूबर-13, 1983.

61) स्मारिका - विश्व हिन्दी सम्मेलन, जून 2003, पृ - 267.

62) वहीं, पृ - 266.

63) वहीं, पृ - 266-267.

64) गगनांचल - जनवरी-मार्च 2000, पृ - 199.

65) वहीं, पृ - 200.

66) विश्व में हिन्दी - खण्ड -2 हरिबाबू कंसल - पृ -236.

67) राजभाषा भारतीय -जनवरी-मार्च, 2003, पृ - 12.

68) वहीं, पृ - 23.

69) स्मारिका - सातवाँ हिन्दी सम्मेलन - जून 2003, पृ -229.

70) विश्व में हिन्दी - खण्ड -2 हरिबाबू कंसल - पृ - 14

71) वहीं, पृ - 17.

72) दिनमान - (सप्ताहिक) 8-14-1978, पृ - 39.

73) हिन्दी की विश्व यात्रा - सं.डॉ. सुरेश ऋतुपर्ण - पृ - 70.

74) विश्व में हिन्दी - खण्ड -2 हरिबाबू कंसल - पृ - 101.

75) स्मारिका - सॉतवाँ विश्व हिन्दी सम्मेलन, जून 2003, पृ -301.

76) वहीं. पृ - 110.

77) गगनांचल - अक्टूबर-दिसंबर, 1993,

78) विश्व में हिन्दी - खण्ड -2 हरिबाबू कंसल - पृ - 51.

79) वहीं, पृ - 14.

80) वहीं, पृ - 17.

81) वहीं, पृ - 32.

82) कादमंबिनी - (मासिक) जनवरी 1999, पृ - 181.

83) विश्व में हिन्दी - खण्ड -2 हरिबाबू कंसल - पृ - 307.

तृतीय अध्याय

मॉरिशस में हिन्दी : ऐतिहासिक विकास

3.1 मॉरिशस : एक देश

हिन्द महासागर की गोद में बसा यह देश अपनी खूबसूरती के लिए विश्वविख्यात है। प्राकृतिक सम्पदा से परिपूर्ण मॉरिशस, मुम्बई से दक्षिण-पश्चिम में 4442 कि.मी. की दूरी पर अवस्थित है। ज्वालामुखी से उत्पन्न मॉरिशस का इतिहास बहुत प्राचीन नहीं है। 16वीं में बसाए गए इस द्वीप पर सन् 1715 में फ़्राँसीसियों का अधिकार हुआ और अन्ततः सन् 1810 में यह अंग्रेजों के हाथ आ गया। अफ़्रीकी महादेश के अन्तर्गत आने वाला देश मॉरिशस छोटा भले ही हो मगर यह एक ऐसा द्वीप है जिसके चारों ओर लहराता नीला समुद्र है। मॉरिशस द्वीप में इन्द्रधनुषी वातावरण है। यहाँ की मिट्‌टी की शोभा अद्‌भुत है। यहाँ के निवासी तरह-तरह की संस्कृतियों के द्वारा एक मिला-जुला वैश्विक परिवेश रचते हैं। यह संसार के गिने-चुने रमणीय स्थलों में से एक है जो प्रकृति की सारी सुषमा से भरपूर है। उपलब्ध इतिहास के अनुसार सबसे पहले 1501ईस्वी में पुर्तगाली यहाँ आए थे। उन्होंने स्थाई रूप से रहने की योजना बनाई थी किन्तु करीब 75 वर्ष के कठिन संघर्ष के उपरान्त वे यहाँ से चले गये। सन् 1658 में डच ईस्ट इण्डिया कम्पनी ने मॉरिशस को अपने जहाजों का अड्‌डा बनाया। सन् 1715 ई. में फ़्रेंच लोगों ने इस द्वीप पर अपना अधिकार कर लिया।एक पुस्तक में इसका वर्णन कुछ इस तरह है - ''सन् 1715 में फ़्राँसीसी, मेडागास्कर द्वीप से हब्शी गुलामों को खरीद कर लाते थे और अत्यन्त निष्ठुरता के साथ व्यवहार करते थे। सन् 1810 में भारतीयों की सहायता से अंग्रेजों का आधिपत्य मॉरिशस पर हो गया। इसी समय मॉरिशस में भारतीयों का प्रवेश हुआ।''[1] इसके बाद दास प्रथा की समाप्ति की घोषणा के साथ ही सन् 1834 से सन् 1923 तक शर्तबन्द मजदूरों के रूप में

भारतीयों को मॉरिशस ले जाया जाता रहा। 1810 से लेकर 1968 तक मॉरिशस, अंग्रेजों के उपनिवेश के रूप में रहा। 12 मार्च, 1968 को मॉरिशस आजाद हुआ। तब से लेकर आज तक प्रवासी भारतीय वहाँ के श्रम, समाज, सत्ता और संस्कृति निर्माण में अपना योगदान देते आ रहे हैं। मॉरिशस में निवास करने वाली कोई भी जाति वहाँ की मूल निवासी नहीं है। अंग्रेजों से आजादी की प्राप्ति के बाद के मॉरिशस का इतिहास, प्रमुख रूप में अप्रवासी भारतीयों के राजनैतिक अधिकारों के लिए संघर्ष का इतिहास है।

3.1.1मॉरिशस और हिन्दी भाषा :

मॉरिशस को बसाने में कई देशों और जातियों का योगदान रहा है। संख्या दृष्टि से भारतीय मॉरिशयनों की संख्या सर्वाधिक है। ऐतिहासिक रूप से मॉरिशस में भारतीयों का आगमन अंग्रेजी सेना के रूप में 1810 में हुआ। तब से लेकर 1834 तक वे वहाँ अंग्रेजी सरकार के सिपाही अथवा कर्मचारी के रूप में रहे। उसके बाद 1834 से 1923 तक जिन भारतीयों को शर्तबन्द मजदूर बनाकर ले जाया गया है वे ही वहाँ बस गए। इन्हीं अप्रवासी भारतीयों की संततियाँ आज भी मॉरिशस की अधिकांश जनसंख्या का हिस्सा हैं। मॉरिशस से हिन्दी का सम्बन्ध तब से माना जा सकता है। 1834 में शर्तबन्द मजदूर के रूप में वहाँ जाने पर उनकी संख्या और हिन्दी के एक भाषा के रूप में प्रयोग में वृद्धि हुई। अधिकांश भारतीय बँधुआ मजदूरों को अपनी क्षेत्रीय बोलियों को छोड़कर अन्य किसी भाषा का ज्ञान नहीं था। तब हिन्दी भाषा का वर्त्तमान स्वरूप वाली खड़ी बोली के रूप में पूर्ण विकास भी नहीं हुआ था। इस तरह आरंभ में मॉरिशस के भारतीयों में भाषा प्रयोग के रूप में भोजपुरी और अवधी ही अधिक प्रयोग में आती थीं। सोमदत्त बखोरी इस सम्बन्ध में अपना विचार प्रकट करते हुए कहते हैं - ''कुछ सुख सुविधा के आ जाने पर हिन्दी भी जीवन में अपना स्थान बनाने लगी, भोजपुरी तो हरदम मौजूद थी ही।''[2] मॉरिशस में हिन्दी की शुरुआत के सम्बन्ध में प्रकाश डालते हुए 'मॉरिशस में हिन्दी

कथा साहित्य : लाल पसीना के संदर्भ में' नामक शोध ग्रन्थ में कुछ इस प्रकार वर्णन किया गया है ''मॉरिशसीय हिन्दी 'बैठका' रूपी गंगोत्री से उद्गमित हुई, आर्य समाजी आन्दोलन में पली और आजाद सरकार के सत्प्रयासों के फलस्वरूप चौतरफ़ा विकसित एवं पल्लवित हुई। हिन्दी रूपी वृक्ष के बीज का काम किया भोजपुरी ने।''[3] हिन्दी के प्रारंभिक विकास में 'बैठका' और 'आर्य समाजी आन्दोलन' का प्रमुख योगदान रहा। ''भारतीयता का तत्व, चाहें वह संस्कृति का हो, धर्म का हो जिजीविषा का हो या नीति का हो, प्रायः सभी कुछ इसी बैठका के माध्यम से जीवित रहा। आर्य समाजी आन्दोलन के सर्वत्र दीपशिखा जलाये रखने में ईंधन का कार्य किया।''[4] आजादी के बाद मॉरिशस की शैक्षिक, साहित्यिक और सरकारी भाषा के रूप में हिन्दी पूर्ण विकास की दिशा में आगे बढ़ी। ''शिक्षा माध्यम, दफ़्तरों एवं अन्य सरकारी काम-काजों में अपनाए जाने से इसका फैलाव हुआ और परिश्रमी-मौलिक साहित्यकारों के साहित्य सृजन से इसका विकास हुआ।''[5] इस तरह हिन्दी भाषा के ऐतिहासिक विकास को समझने के लिए इसे मॉरिशसीय स्वतंत्रतापूर्व की हिन्दी और मॉरिशसीय स्वातंत्र्योत्तर कालीन हिन्दी नामक दो भागों में बाँटकर 'मॉरिशस में हिन्दी भाषा : ऐतिहासिक विकास' का आकलन किया जा सकता है।

3.1.1.1 स्वतंत्रता पूर्व हिन्दी की स्थिति :

सन् 1810 से लेकर सन् 12 मार्च, 1968 तक मॉरिशस में हिन्दी भाषा का क्रमिक विकास दिखाई पड़ता है। मॉरिशस की स्वतन्त्रता प्राप्ति से पूर्व हिन्दी प्रचार का मूल स्रोत भोजपुरी थी। अनपढ़ मजदूरों की अपनी भाषा भोजपुरी अगर उनके साथ न रही होती तो शायद मॉरिशस में आज हिन्दी का नामोनिशान नहीं मिलता। उन दिनों यह भोजपुरी एक ऐतिहासिक अनिवार्यता थी। इसके बारे में डॉ.श्यामधर तिवारी लिखते हैं ''मॉरिशस में अप्रवासी कुली समाज का सम्पर्क एवं सम्बन्ध बहुभाषी समाज से था। कई प्रांतों से आए भारतीयों की भिन्न-भिन्न भाषा होते हुए भी वे बहुसंख्यक भोजपुरी भाषियों के सान्निध्य में अधिक रहते थे। कार्य एवं व्यवहार के

क्षणों में इसी बोली में लोग वार्तालाप किया करते थे। भोजपुरी बोली से हिन्दी का ऐतिहासिक विकास हुआ। दरअसल मॉरिशस की बस्ती, झोंपड़ी, खेत, कारख़ाना, कोठी तथा जेल आदि सभी जगहों में कुली-मजदूर ही तो थे। अतः यह एक ऐतिहासिक अनिवार्यता थी कि सुख-दुख, गाली-गलौज, काम-काज, घृणा-द्वेष, पर्व-त्यौहार, हर्ष-उल्लास के क्षणों में यही भाषा सम्पर्क के रूप में अधिक व्यवहृत होती। मालिक-सरदार भी गाली-गलौज, मार-पीट के क्षणों उनकी बोली को जंगली भाषा की उपाधि देकर, उनकी भाषा के शब्दों को दुहराकर या नकल कर अनजाने उनके शब्दों को ग्रहण करने से वंचित नहीं रह सके।'[६] मॉरिशस में भोजपुरी को हिन्दी का आधार मानकर ब्रजेन्द्र भगत मधुकर ने 'भोजपुरी न होती तो हिन्दी न होती' कहा और सोमदत्त बखोरी ने अपनी पुस्तक 'हिन्दी इन मॉरिशस' में भोजपुरी को 'प्रवासियों की मातृभाषा' माना। यह एक तथ्य है कि भोजपुरी ने मॉरिशस में हिन्दी के विकास में नींव का कार्य किया है।

3.1.1.2 मॉरिशस में हिन्दी भाषा : प्रथम चरण :

मॉरिशस में हिन्दी भाषा के विकास के प्रथम चरण में भाषा के मौखिक प्रयोग को देखा जा सकता है। यह भारतीयों के मॉरिशस आगमन के साथ ही प्रारंभ होता है। हिन्दुस्तानी बँधुआ मजदूरों की जीविका और जिजीविषा के संघर्ष के साथ उनका भाषा संघर्ष भी जुड़ा हुआ था। स्वतंत्रता पूर्व के हिन्दी प्रयोग पर अगर हम दृष्टि डालें तो यह बात साफ़ हो जाती है कि मॉरिशस में स्वतन्त्रता पूर्व का पूर्वार्द्ध, प्रवासी भारतीयों के भयानक शोषण का काल था। वे किसी तरह कि विरोध के लिए समर्थ नहीं थे। भाषा सत्ता का पुनरुत्पाद भी है। इसी ओर शोषण यद्यपि हीन भावना उत्पन्न करता है, मगर क्रांति का जनक भी वही है। शोषित भारतीयों ने प्रबल संघर्ष भावना का परिचय दिया। उनका विरोध न्यूनाधिक रूप में भाषा, संस्कृति, शारीरिक और राजनीतिक सभी प्रकार शोषण के ख़िलाफ़ था। वे धीरे-धीरे समर्थ भी हुए। उसी अनुपात में धीरे-धीरे हिन्दी भी विकसित हुई। स्वतन्त्रता पूर्व का

पूर्वार्द्ध मौखिक रूप से हिन्दी के संरक्षण का काल था। हिन्दी भाषा के विकास के इस प्रथम चरण में तत्कालीन जीवन के सुख-दुख की अभिव्यक्ति करनेवाले भोजपुरी, अवधी के लोकगीतों, रामायण, महाभारत, हनुमान चालीसा, आल्हा के प्रेरक प्रसंगों, तोता मैना तथा विक्रम बेताल आदि की कहानियों ने ऐतिहासिक विरासत की सक्रिय भूमिका निभायी। इसके बाद धीरे-धीरे भारतीयों की सामाजिक प्रतिष्ठा में परिवर्तन आया। यह परिवर्तन सर्वत्र दिखाई पड़ा। सन 1810 से 1835 तक भारतीय सैनिकों के मॉरिशस प्रवास के 25 वर्ष पूरे हो चुके थे। ''1835 में भारतीय मजदूरों का प्रथम दल यहाँ आया। हिन्दुओं के साथ कुछ मुस्लिम भी थे जो उर्दू बोलते थे। उर्दू को हिन्दुस्तानी कहने का रिवाज़ चल पड़ा।''[7] इस तरह बोलचाल की भाषा एक मिश्रित रूप लिए हुए थी जिसका आरंभिक स्वरूप भोजपुरी का था। उसमें उर्दू या हिन्दुस्तानी का मिश्रण हुआ। भारत की अन्य भाषाओं के कुछ शब्दों के साथ अवधी आदि का योगदान रहा। बाद में भारतीय मूल के लोगों की आर्थिक एवं राजनीतिक सम्पन्नता ने हिन्दी के प्रभाव को बढ़ाया। प्रमुख मॉरिशसीय लेखक और विद्वान सोमदत्त बखोरी लिखते हैं - ''कुछ सुविधा के आ जाने पर हिन्दी भी जीवन में अपना स्थान बनाने लगी, भोजपुरी तो हरदम मौजूद थी ही।''[8] कई प्रकार के आंतरिक दबाव भी मॉरिशस में हिन्दी के रूप में परिवर्त्तन, प्रसार और उन्नयन का कारण रहे। ''विदेशी जमीन के सम्पर्क में आने पर यहाँ की हिन्दी के स्वरूप में भी थोड़ा बहुत अन्तर आया। इसकी उच्चारण विधि तथा ध्वन्यादि में किञ्चित परिवर्तन परिवर्त्तनों ने मूल हिन्दी भाषा से इसे थोड़ा-सा अलग रूप प्रदान किया, किन्तु इस परिवर्तन से गुजरते हुए हिन्दी की भी प्रगति होती गई। मॉरिशस में दासता से स्वतन्त्रता और स्वतन्त्रता से सत्ता प्राप्ति तक की भारतीयों की यात्रा में हिन्दी ने सक्रिय योगदान किया है। मॉरिशस में हिन्दी का विकास वहाँ के हिन्दी भाषा भाषियों के विकास के साथ जुड़ा हुआ है।''[9]

शुरू-शुरू में हिन्दी भाषा आपसी बातचीत, किस्सागोई और धार्मिक प्रवचनों

के सहारे विकसित होती रही। आरंभिक शिक्षा भी कक्षा से बंधी या औपचारिक पद्धति पर निर्भर रही थी। हिन्दी भाषा शिक्षा में 'बैठका' ने प्रमुख भूमिका निभाई। श्री प्रह्लाद रामशरण ने हिन्दी भाषा सिखाने की औपचारिक शिक्षा विधि की बात की है। रामचरित मानस की पंक्तियों, मुहावरों, कहावतों, लोकगीतों आदि के टुकड़े ही 'पाठ' (Text) का काम करते थे, यथा -

'राम गति देहु सुमति'।

डॉ.कैलाश कुमारी सहाय ने उन दिनों बारह खड़ी की मात्राएँ सीखने की रोचक विधि कुछ इस प्रकार बतायी है :

"र पर मस्ते रंग कानून रा
हरखिन रि दुरगीन री
तरकुन रु बरजून रू
एकले रे दोनै रै
करमत रो दुचकन्ना रौ
मस्ते रंग पुरवासी रः

यानि र रा रि री रु रू रे रै रो रौ रं रः और इसी तरह पूरी बारह खडी सीखते थे।"[10]

साक्षरता के संदर्भ में इस तरह हिन्दी भाषा का मौखिक रूप लिपिबद्ध किया जाने लगा। बारह खड़ी को कुछ और अनोखे ढंग से भी सीखा जाता था। इसकी चर्चा डॉ.कैलाश कुमारी सहाय और ब्रजेन्द्र मधुकर ने की है।

1. क का च कि की च कुकू वदामि के कै पुनरैव को कौ कं कः
2. क का से कि की से कु कू वदामि के कै बनरा से को कौ कं कः।

(1810 से 1910)

इस तरह प्रायः 100 वर्षों तक हिन्दी भाषा अनियमित, अनियोजित रूप से अनिश्चितताओं के साथ कम पढ़े-लिखे मजदूरों के जीवंत प्रयोगों द्वारा प्रचलन में

आती रही। लोग चाहे सरकारी सेना में भर्ती होकर आये हों अथवा बँधुआ मजदूरों के रूप में, इन प्रवासी भारतीयों ने मानस, आल्हा, चालीसा, सत्यार्थ प्रकाश, विभिन्न किस्सों-कहानियों की पुस्तकों आदि के सहारे मॉरिशस में हिन्दी भाषा का बीज बोया, उसे अपने पसीने से सींचा। यह मॉरिशस में हिन्दी के पौधे का अंकुरण काल था जो आगे चलकर विकसित हिन्दी का आधार बना। मॉरिशस में हिन्दी भाषा के उद्‌भव का यह प्रथम चरण अधिकांशतः मौखिक माना जा सकता है। भले ही तब अक्षर, वर्णमाला, बारह खड़ी आदि को लिपिबद्ध कर लिया गया, परन्तु परिस्थितियों के दबाव के कारण भाषा में साहित्य का पल्लवन संभव नहीं हो पाया था। ''हस्तलिखित रामायण 'कैथी' भाषा में लिखी गयी थी, जिसकी अनेक प्रतियाँ तैयार की गई थीं। धार्मिक ग्रंथों का लेखन कैथी भाषा में होता था।''[11] इससे हम अनुमान लगा सकते हैं कि प्रवासी भारतीयों का संबंध बिहार तथा बिहार की बोलियों - भोजपुरी, मैथिली, मगही आदि से था। प्रारंभिक काल (1834 ई. से 1900 ई. तक) में हिन्दी भाषा के पठन-पाठन के ज्यादा अवसर प्रवासियों को उपलब्ध नहीं थे। गगनांचल में प्रकाशित लेख में भी अजामिल माताबदल बताते हैं कि ''मॉरिशस के सरकारी प्राथमिक स्कूलों में भारतीय भाषाओं की पढ़ाई सन् 1968 में आरंभ हुई। उन दिनों देश के 26 स्कूलों में हिन्दी और तमिल भाषाएँ प्रस्तावित की गई। लेकिन तत्कालीन उपनिवेशी शासकों के दबाव के कारण इन भाषाओं की पढ़ाई उचित ढंग से नहीं हो पाई।''[12] अतः हिन्दी शिक्षा का मूल प्रयास वैयक्तिक स्तर पर ही हुआ और यह शिक्षा-प्रसार स्वयंप्रेरित था। ''अध्यापक स्वयं शर्तबन्द होने के कारण व्याकरण का कम ज्ञान रखते थे फिर भी अपने छात्रों को स्वर और व्यंजन सिखा लेते थे। छात्रों को व्यंजन सीख लेने पर उन्हें हनुमान चालीसा व रामायण का पाठ करना सिखाया जाता था। इस तरह संस्कृति के साथ भाषा को भी कायम रखने का भार स्वयं अप्रवासियों के कंधों पर था।''[13] इस तरह हिन्दी भाषा 11वीं सदी तक व्यक्तिगत अथवा गैर सरकारी स्तर तक सीमित रही।

3.1.1.3 मॉरिशस में हिन्दी भाषा : द्वितीय चरण

स्वतन्त्रता पूर्व, मॉरिशस के हिन्दी भाषा के विकास का दूसरा चरण, भारतीयों की दशा में आये सुधारों से जुड़ा था। इस काल की सीमा 1901 से स्वाधीनता प्राप्ति तक मानी जा सकती है। 1901 में दक्षिण अफ्रीका से लौटते हुए महात्मा गाँधी मॉरिशस में रुके। महात्मा गाँधी के मॉरिशस पदार्पण से प्रवासी भारतीयों में नई चेतना जगी। गाँधीजी ने उन्हें हिन्दी पढ़ने-पढ़ाने के लिए भी प्रेरित किया। सन् 1901 से लेकर मॉरिशस के आजादी पाने तक के 68 सालों में हिन्दी भाषा निरन्तर विकास की सीढ़ियाँ चढ़ती रही। गाँधीजी के बाद सन् 1907 में डॉ.मणिलाल का मॉरिशस आगमन हुआ। ''माणिकलाल डाक्टर द्वारा 1909 में 'हिन्दुस्तानी' प्रेस की स्थापना तथा हिन्दुस्तानी पत्रिका के साप्ताहिक (बाद में दैनिक) प्रकाशन से भारतीयों के जन-जीवन में नए युग का सूत्रपात हुआ।''[14] इसका पहला अंक गुजराती और अंग्रेजी में निकला। लेकिन 2 मार्च, 1913 के अंक का प्रकाशन हिन्दी, गुजराती एवं अंग्रेजी भाषा में हुआ। इसके बाद लिखित भाषा का विकास सम्भव हो चला। फिर तो साहित्य सृजन ने हिन्दी भाषा को प्रौढ़ता प्रदान की। स्कूलों में हिन्दी-शिक्षण पर जोर दिया जाने लगा। गाँवों और शहरों में हिन्दी पाठशालाओं की स्थापना की गई। ''सन् 1911 में डॉ.मणिलाल जी के सहयोग से इस देश में कुछ लोगों ने 'आर्य परोपकारिणी सभा' की स्थापना की। इस सभा ने आर्य समाज के सिद्धांतों के साथ हिन्दी प्रचार का भार उठाया। गाँवों में समाजों की स्थापना और बैठकों में हिन्दी की सायंकालीन पाठशालाओं का प्रबन्ध होने लगा। भारत से 'सरल हिन्दी' और 'राष्ट्रभाषा' जैसी पुस्तकें मँगवाकर पढ़ने-लिखने की सुविधा दी जाने लगी। सन् 1926 में धारा नगरी (लौंग फ़ाउंटेन) के कुछ हिन्दी प्रेमियों ने 'तिलक विद्यालय' की स्थापना की। यही विद्यालय सन् 1935 में 'हिन्दी प्रचारिणी सभी' के नाम से पंजीकृत हुआ। इसका मुख्य उद्देश्य था हिन्दी का प्रचार। 'आर्य परोपकारिणी सभा' ने हिन्दी के प्रचार प्रसार कार्य की देश भर में व्यवस्था

की।"[15] अभी तक उपनिवेशी दबावों और प्रवासी भारतीयों के संख्याधिक्य से अंग्रेजी शासक हिन्दी शिक्षा के प्रसार को लेकर कतराते और हिचकिचाते रहे थे। भारतीय शर्तबन्द मजदूरों के विषम परिस्थितियों से गुजरते जीवन की स्थिति की जाँच करने के लिए सन् 1924 में नियुक्त सर हुँबर महराज ने सिंह की सिफ़ारिशों को अनदेखा किया। मॉरिशस के उपनिवेशवादी शासकों ने शर्तबन्द मजदूरों के बच्चों को हिन्दी पढ़ाना उचित न समझा। सन् 1941 में तो डब्ल्यू.ई.एफ.वार्ड ने सरकार को सलाह ही दे डाली कि भारतीय अप्रवासियों के बच्चों को उनकी अपनी भाषा सिखाने की कोई जरूरत नहीं। लेकिन इसके दो वर्षों के पश्चात सरकार द्वारा नियुक्त एक प्रवर समिति ने वार्ड की सिफ़ारिश को ठुकराते हुए कहा कि भारतीय मूल के लोगों को सरकारी खर्च पर भारतीय भाषाएँ पढ़ाई जानी चाहिए। इस सलाह के बाद मॉरिशस की " 27 सरकारी प्राथमिक पाठशालाओं में हिन्दी पढ़ाने की व्यवस्था की गयी। "[16] उपनिवेशवादी सरकार की परिषद में निर्वाचित (श्री गजाधर, और द.लाल-1926) एवं मनोनीत (डॉ.शिवसागर रामगुलाम-1948 ई.) आदि के प्रबल प्रयासों के बाद ही कहीं जाकर सन् 1954 से नियमित रूप से सरकारी स्कूलों में हिन्दी की पढ़ाई आरम्भ हुई। हिन्दी की पढ़ाई कामोबेश सरकारी सरकारी स्कूलों में स्वतंत्रता प्राप्ति तक घिसटती हुई चलती रही। लेकिन दूसरी तरफ़ गैर सरकारी हिन्दी शिक्षा और प्रचार प्रसार का कार्य स्वतंत्रता पूर्व के तीन दशकों में व्यापक स्तर पर होता रहा।

"हिन्दी साहित्य सम्मेलन, प्रयाग द्वारा भारत की 'परिचय' परीक्षा, हिन्दी प्रचारिणी सभा की देखरेख में, मॉरिशस में सर्वप्रथम 1946 में आरंभ हुई। 'प्रथमा' सन् 1953 से, 'मध्यमा' सन् 1962 से और 'उत्तमा' (साहित्य रत्न) सन् 1969 से हो रही है। इन परीक्षाओं में हजारों की संख्या में परीक्षार्थी भाग लेते हैं। इसके अतिरिक्त आर्यसभा, मॉरिशस द्वारा 'वैदिक सिद्धांत' की परीक्षा, 'विद्या विनोद', 'विद्या विशारद', 'विद्या वाचस्पति' आदि परीक्षाएँ भी आयोजित होती हैं।"[17] यहाँ के

भारतीय मूल के निवासी अपनी सांस्कृतिक अस्मिता के समक्ष अपनी भाषा के अस्तित्व को बचाए रखने के लिए संघर्षरत थे और इस संघर्ष में उस समय मॉरिशस ले जाये गये अन्य भाषा भाषी मजदूरों ने भी उनका साथ दिया। हिन्दी के साथ-साथ उर्दू, तमिल, तेलुगु, मराठी और गुजराती आदि भाषाएँ भी इस भाषायी विकास-यात्रा में शामिल थीं। इस तरह सन् 1901 से लेकर मॉरिशस की स्वाधीनता प्राप्ति तक के काल में हिन्दी और हिन्दुस्तानियों ने कठोर परिश्रम, अदम्य आत्मविश्वास और बुद्धिमत्ता के सहारे न सिर्फ़ अपनी आर्थिक बदलती और राजनीतिक दशा को सुधारा बल्कि अपने अभूतपूर्व बहुमुखी विकास को भी संभव बनाया।

3.1.2 स्वतन्त्र मॉरिशस में हिन्दी भाषा का विकास

भाषा की सामाजिक प्रतिष्ठा उसके बोलने वालों की सामाजिक प्रतिष्ठा से जुड़ी होती है। 12 मार्च, 1968 के दिन मॉरिशस अंग्रेजी उपनिवेश के चंगुल से मुक्त हुआ। उस समय वहाँ के निवासियों ने भारतीयों की संख्या सर्वाधिक थी। स्वाधीनता की लड़ाई में हिन्दुस्तानियों और हिन्दी भाषा का सर्वाधिक महत्वपूर्ण योग था। स्वाधीनता प्राप्ति के साथ-साथ नवनिर्मित बहु-संस्कृतवादी राष्ट्र मॉरिशस में हिन्दी और हिन्दुस्तानियों के विकास के अनेक रास्ते भी खुले। सत्ता भारतीयों के हाथ आयी और वे देश के भाग्य विधाता तो बने, लेकिन फ्रेंच और अंग्रेजी भाषा का प्रशासकीय दायरा इतना मजबूत था और अब भी है। उसके अन्दर घुसपैठ करना अथवा स्वयं को स्थापित कर पाना नाकों चने चबाना था। फिर भी देश के तत्कालीन प्रधान मंत्री सर शिवसागर रामगुलाम ने भारतीय भाषाओं के हितों का ध्यान रखा। उन्हें यह बात पता थी कि हिन्दी भारतीयों और उनकी सांस्कृतिक अस्तित्व की परिचायिका है। इसके बने रहने से निश्चित रूप से प्रवासी भारतीयों के भीतर वास्तविक सांस्कृतिक जीवन संचरित होगा। आगे आनेवाले प्रधान मंत्रियों ने अनिरुद्ध जगन्नाथ तथा सर नवीन चन्द रामगुलाम ने भी हिन्दी भाषा के विकास की बात ध्यान में रखी। सर शिवसागर रामगुलाम के नेतृत्व में सन् 1976 में तथा

श्री अनिरुद्ध के नेतृत्व में सन् 1983 में मॉरिशस में प्रथम और चतुर्थ विश्व हिन्दी सम्मेलनों का सफल आयोजन भी किया गया।

आजादी के बाद हिन्दी में एक नई आशा, उमंग, उत्साह और आत्मविश्वास का संचार हुआ। आजादी के बाद स्थापित महात्मा गाँधी संस्थान हिन्दी शिक्षण हेतु भी अपना योगदान देता आ रहा है। स्वतंत्रता के पहले मुख्य रूप से प्राथमिक स्तर पर ही हिन्दी पढ़ाई जाती थी। स्वाधीनता के बाद विशेषकर सन् 1974 से सरकार ने औपचारिक रूप से माध्यमिक विद्यालयों में हिन्दी भाषा शिक्षण आरम्भ किया। गैर सरकारी विद्यालयों में भी सरकार ने हिन्दी की पढ़ाई के लिए अध्यापक देने का निर्णय किया।

''सन् 1989 के आँकड़ों के अनुसार मॉरिशस के माध्यमिक विद्यालयों में हिन्दी भाषा शिक्षण से संबंधित संख्यात्मक स्थिति इस प्रकार थी :

क.	छात्र (फार्म 1 से एच.एस.सी. तक)	21,673
ख.	अध्यापक	117
ग.	विद्यालय	88
घ.	एफ.सी. में भाग लेनेवाले	1,089
ङ.	एच.एस.सी में भाग लेनेवाले	106

मॉरिशस सरकार हिन्दी अध्यापकों को प्रशिक्षण देने के बारे में भी मौन नहीं रही। 1980 में मॉरिशस शिक्षा संस्थान तथा महात्मा गाँधी संस्थान की ओर से स्नातक हिन्दी अध्यापकों के लिए पोस्ट ग्रेजुएट सटिलिमेंट ऑफ़ एजुकेशन कोर्स शुरू किया गया। 1989 ई. में एच.एस.सी. अध्यापकों के लिए डिप्लोमा इन एजुकेशन कोर्स प्रारंभ हुआ।''[18] बाद में चर्चा कर प्राथमिक स्कूल सम्बन्धी एक विवरण देते हुए डॉ.मुनीश्वरलाल चिन्तामणि ने लिखा है : ''सरकारी प्राथमिक स्कूलों में आजकल हिन्दी शिक्षण की स्थिति इस प्रकार है -

विद्यालयों की संख्या 247

अध्यापकों की संख्या 807

निरीक्षकों की संख्या 12

विद्यार्थियों की संख्या 48,421''[19]

यहाँ ध्यान देने की बात है कि मॉरिशस में हिन्दी की पढ़ाई अनिवार्य नहीं है। मॉरिशस के सरकारी प्राथमिक स्कूलों में अंग्रेजी और फ्रेंच को ही अनिवार्य भाषाओं के रूप में पढ़ाया जाता है जबकि हिन्दी तथा अन्य पूर्वी भाषाओं को वैकल्पिक स्तर पर पढ़ाया जाता है। प्राथमिक एक माध्यमिक हिन्दी शिक्षण के क्षेत्र में स्वैच्छिक संस्थाओं का योगदान प्रमुख है। इनमें हिन्दी प्रचारिणी सभा, आर्य रविवेद प्रचारिणी सभी, हिन्दी साहित्य सम्मेलन, राजपूत महासभा, आर्य सभा और अन्य गैर सरकारी संस्थान तथा विद्यालयों में प्रायः 600 अध्यापकों की मदद से कक्षाएँ चलाई जाती हैं। ''हिन्दी प्रचार सभा हर साल हिन्दी साहित्य सम्मेलन, प्रयाग की निम्नलिखित परीक्षाओं का आयोजन करती है - परिचय, प्रथमा, मध्यमा, उत्तमा प्रथम खण्ड और द्वितीय खण्ड।''[20] इन परीक्षाओं में प्रतिवर्ष 2000 से ऊपर छात्र भाग लेते हैं। अंशकालिक रूप में सायंकालीन कक्षाएँ चलाने वाले अध्यापक सेवा-भव से लगन के साथ हिन्दी भाषा-साहित्य का पाठ पढ़ाते हैं। ''इस सेवा को मान्यता देते हुए मॉरिशस सरकार आजकल सायंकालीन पाठशालाओं में पढ़ाने वाले प्रत्येक अध्यापक को प्रतीकात्मक रूप में 1,000 से 2,000 रुपये तक भत्ता उसकी शैक्षिक योग्यता के अनुकूल देती है।''[21] वहाँ माध्यमिक शिक्षण को ठोस नींव देने के प्रयास जारी हैं। इन सब प्रयासों के बावजूद इस प्रयास को सुचारु और सशक्त रूप देने की आवश्यकता है। मॉरिशस के विद्वान हिन्दी लेखक रामदेव धुरंधर एक और संदर्भ को महत्वपूर्ण मानते हुए लिखते हैं - ''हिन्दी शिक्षण पर सरकारी तथा गैर-सरकारी दोनों रवैयों से पैसे का खर्च होना यहाँ आम बात है। लेकिन आज के तरुण मात्र डिग्रीधारी होकर हिन्दी को रोटी का जरिया मान लें और इसी बिन्दु पर खामोश बैठ जाएँ तो इससे हिन्दी की सुरक्षा का कोई आभास दृष्टिगत होना तो दूर, बल्कि हिन्दी की जो खुशबू प्रत्यक्ष है उसका भी नामोनिशान मिट जाएगा।''[22] शिक्षण में

गुणवत्ता, समता तथा उत्कृष्टता जैसे उद्देश्यों की प्राप्ति बात पर विचार करते हुए, मॉरिशसीय हिन्दी शिक्षण के बैठका से लेकर विश्वविद्यालय तक की यात्रा कर चुकी हिन्दी के बारे में डॉ.मुनीश्वरलाल चिन्तामणि लिखते हैं - ''यह अनुभव किया जा रहा है कि हिन्दी को विश्वभाषा के रूप में प्रतिष्ठित करने के लिए पूरे विश्व में हिन्दी शिक्षण को मजबूत नींव पर खड़ा किया जाना चाहिए। ..... अतः हिन्दी शिक्षण को युग की माँग के अनुकूल अपनी भूमिका अदा करनी होगी; अगली सदी की चुनौतियों का सामना करने के लिए उसे समर्थ और सक्षम होना है।[23]

जो भी हो, मगर किसी समय, 'बैठका' में पढ़ाई जाने वाली भाषा हिन्दी आज सरकारी और गैर-सरकारी संस्थानों प्राथमिक और माध्यमिक स्तर पर पढ़ाई जाती है। एच.सी.सी. के हिन्दी की अव्वल छात्रों को छात्रवृत्ति देकर उन्हें इस क्षेत्र में आगे बढ़ने के लिए प्रोत्साहित किया जाता है। अब वहाँ हिन्दी में स्नातकीय कोर्स भी आरम्भ किया गया है। महात्मा गाँधी संस्थान में हिन्दी में बी.ए. में आनर्स, हिन्दी का त्रिवर्षीय कोर्स, हिन्दी डिप्लोमा, उच्च शिक्षण, शोध और सृजनात्मक लेखन होता है। विश्व हिन्दी सम्मेलनों की माँग के अनुसार अब मॉरिशस में विश्व हिन्दी सचिवालय की स्थापना भी की जा चुकी है। 1990 में पहली बार मॉरिशस विश्वविद्यालय के शिक्षा क्रम में हिन्दी को स्थान प्राप्त हुआ था।

''हिन्दी सम्बन्धी विभिन्न गतिविधियों को बढ़ावा देने के उद्देश्य से हिन्दी भाषा संघ (हिन्दी स्पीकिंग यूनियन) की स्थापना की गई। इसके लिए मॉरिशस की संसद ने हिन्दी स्पीकिंग यूनियन विधेयक 1994 में पारित किया। इसकी कार्यकारिणी में मॉरिशस के प्रमुख लेखक, बुद्धिजीवी तथा सामाजिक कार्यकर्त्ता हैं। इसके गठन में भारतीय उच्चायोग की महत्वपूर्ण भूमिका रही है।''[24] आज कई गैर-सरकारी संस्थाएँ भी हिन्दी भाषा की स्थिति को सुदृढ़ करने हेतु प्रयत्नशील है। हिन्दी प्रचारिणी सभा (1935), हिन्दी लेखक संघ (1961), हिन्दी परिषद (1963), 'आर्य सभा' आदि के

नाम प्रमुख हैं।

हिन्दी भाषा के प्रचार-प्रसार एवं समृद्धि हेतु जिन लोगों ने कार्य किए उन में सर सिवसागर रामगुलाम, डॉ.माणिकलाल, वासुदेव विष्णुदयाल, सोमदत्त बखोरी, ब्रजेन्द्र मधुकर, जयनारायण राय, सूरज मंगर भगत, अभिमन्यु अनत, मुनीश्वरलाल चिन्तामणि, प्रह्लाद रामशरण आदि के नाम आते हैं। इन के अलावा रंगमंच, रेडियो, दूरदर्शन तथा हिन्दी संगीत और हिन्दी फ़िल्में भी वहाँ हिन्दी भाषा विकास से सम्बन्धित गतिविधियाँ करती रही हैं। यह समझना ठीक नहीं कि वहाँ हिन्दी का परिदृश्य बेहत हरा-भरा और समस्याहीन है। वस्तुतः हिन्दी भाषा का विकास जो थोड़ा बहुत बाधित हुआ है। निश्चित रूप से इसका कारण वहाँ सामाजिक व प्रशासनिक क्षेत्रों में फ्रेंच, अंग्रेजी और क्रियोल भाषाओं का मजबूती से पाँव जमाते जाना है। अंग्रेजी और फ्रेंच वहाँ की प्रशासकीय भाषाएँ हैं। फ्रेंच तो शुरू से ही शोषकों की भाषा रही थी, अग्रेजी का वर्चस्व भी वहाँ कम नहीं है। इन दिनों क्रियोल के बढ़ते चरण भी हिन्दी के लिए चिन्ता के कारण हैं। मॉरिशस के गणमान्य विद्वान एवं प्रसिद्ध साहित्यकार श्री रामदेव धुरंधर ने द्वितीय विश्व हिन्दी सम्मेलन में पढ़े गये अपने एक लेख में हिन्दी की जिस दशा का वर्णन किया था वह आज सटीक है। उन्होंने माना - ''स्वतन्त्रता के बाद अस्मिता की खोज में यहाँ के हिन्दी भाषियों और राजनायकों ने हिन्दी का ही सहारा लिया है। किन्तु इसके होते हुए भी, हिन्दी को जहाँ पहुँचना है, वह यात्रा अभी अधूरी है, लेकिन फिर भी इतना तो है ही वह यात्रा कहीं शिथिल नहीं पड़ने की।''[25] मॉरिशस साहित्यकार श्री महेश राम जियावन हिन्दी भाषा के क्रमिक संदर्भ को निम्न रूप में देखते हैं :

''परसों हिन्दी मेरी संस्कृति की भाषा थी/
बपौती थी/मातृभाषा थी/
कल/यह नौकरी की भाषा हो गई/
रोटी की भाषा हो गई/
आज/यह वोट की भाषा हो गई/''[26]

इस तरह मॉरिशस में हिन्दी का लगातार बदलता हुआ परिदृश्य हमारे सामने आता है। निस्सन्देह हिन्दी भाषा भी मॉरिशस में राजकीय स्तर पर उठ नहीं पाई है। विशेषकर यह गरीबों और पीडितों की भाषा रही है। आरम्भ से आज तक ग्रामीण क्षेत्रों में मजदूरों-शोषितों ने उसे जीवित रखा और इसकी रक्षा की। शहरी मध्य या उच्चवर्ग के अधिकांश लोगों ने न सिर्फ़ इसकी अनदेखी की है, बल्कि इसका तिरस्कार भी किया है। प्रसिद्ध लेखक अभिमन्यु अनत इसके लिए लोगों की ही जिम्मेदारी ठहराते हैं। वे कहते हैं : ''यों तो हिन्दी भाषा अपनी अस्मिता के लिए संघर्ष कर रही है, तथापि आज हिन्दी की इस बिगड़ती हुई दशा के जिम्मेदार जहाँ काफ़ी हद तक खुद हिन्दी वाले ही हैं, जिनका हिन्दी पुस्तकों और पत्र-पत्रिकाओं से कोई रिश्ता ही नहीं रहा, वहीं सत्ता और भारतीय सरकार भी उतनी ही जिम्मेवार हैं इस दयनीयता की।''[27]

फिर भी हिन्दी भाषा आज भी मॉरिशसीय प्रवासी भारतीय की अस्मिता की प्रतीक है। यह वहाँ के लोगों के दिमाग और जबान से ज्यादा दिल के नजदीक है। इसकी प्रगति का भार अधिकांशतः वहाँ के प्रौढ़ और नवीन लेखक वर्ग पर है। हिन्दी साहित्य की हो रही निरन्तर रचना वहाँ हिन्दी की पहचान को मजबूती प्रदान करती है।

भाषा आज मानव होने की प्राथमिक अनिवार्यताओं में से हो गयी है। सभ्यता और संस्कृति का विकास और फैलाव वस्तुतः भाषा पर आधारित है और भाषा का विकास बहुत कुछ सभ्यता और संस्कृति पर। इसी के माध्यम से सभ्यताओं की सांस्कृतिक विरासत की झाँकी देखी जा सकती है। मॉरिशस बहुलतावादी सांस्कृतिक धरोधर की मशाल जलाये रखने वाले देशों में एक है। जहाँ तक हिन्दी का इस देश से सम्बन्ध है तो वह अभी भी अपनी विकसित अवस्था में वहाँ देखने को मिलती है। परन्तु यह देश भर में क्रियोल की तरह सर्व प्रचलित और सम्पर्क भाषा बनने से थोड़ी दूर ही रह गयी है। हालाँकि यह वहाँ के संप्रेषण और संवाद का आधार भाषा एवं आपसी सहयोग और सद्भाव की भाषा है। यही भाषा पहले

उनके संघर्ष का अस्त्र थी, फिर उनकी सांस्कृतिक अस्मिता या पहचान बनी। हिन्दी भाषा के विकास को प्रसिद्ध मॉरिशसीय हिन्दी साहित्यकार मुनीश्वरलाल चिन्तामणि ने तीन भागों में बाँटा है :

''1. प्रारम्भिक काल (1834 से 1900)

2. मध्य काल (1900 से 1935)

3. आधुनिक काल (1935 से आगे)''[28]

प्रथमकाल को उन्होंने रामचरितमानस,आल्हा और लोकगीतों आदि के मौखिक संरक्षण का काल माना। द्वितीय काल को भाषा शिक्षा 'शैशव काल' मानकर अक्षर ज्ञान और पद्धति पर भोजपुरी का व्यापक प्रभाव माना। तीसरे काल को 'नई चेतना और जागरण' का काल मानते हुए इसे स्वतन्त्रता संघर्ष की भाषा करार दिया। वस्तुतः यह वहाँ के जीवन-संघर्ष की भाषा है जिससे विकास और प्रसार में अनेक व्यक्तियों और संस्थाओं का योग रहता आया है। इस प्रसंग में डॉ.लता लिखती हैं कि - ''आर्य समाज के प्रचार से बीसवीं सदी के प्रथम दशक से इस भाषा (खड़ी बोली हिन्दी) का वहाँ प्रचार हुआ। यह भारतीय भाषाओं की प्रतिनिधि भाषा के रूप में स्वीकृत थी। ..... इसके सीखने वाले साढ़े चार लाख लोग हैं। फ़िल्म और नाटकों के माध्यम से यह भाषा अहिन्दी भाषियों की जबान पर भी चढ़ गई है। प्रत्येक मॉरिशसियन काम चलाने के लिए हिन्दी बोल सकता है। स्वाधीनता संघर्ष की भाषा रही है। जन साधारण के गीत सर्वाधिक इसी भाषा में गाये जाते हैं।''[29]

बहुभाषी और छोटा देश होने के कारण मॉरिशस की हिन्दी में फ़्रेंच, क्रियोल और भोजपुरी के शब्दों का समावेश हो गया है। यह सिर्फ़ भाषा तक ही सीमित नहीं है बल्कि साहित्य सृजन में भी इसके उदाहरण देखने को मिलते हैं। उदाहरण के तौर पर दो बहनों के इस वार्तालाप को देखा जा सकता है -

'कहाँ जात अव?'

'हम बूतिक जात हयँ'

'का की ने?'

'हमके बहुत सोज कीने के बां।'

'का?'

'हमके लापूद, लोस्यों, प्लूम की ने के वां'

'अउर मुसवार?'

'हाँ, मुसवार भी।'

'बूतिक में जीबूत होने के पडेला?'

'हाँ हम फाचीगे हो जाइला।[30]

यह भोजपुरी है जिस पर कुछ फ्रेंच और कुछ क्रियोल के शब्दों का प्रभाव है। वहाँ की खड़ी बोली हिन्दी भी इसकी अपेक्षा थोड़ी कम प्रभावित हुई है। किन्तु उसमें किताबीपन अधिक दिखाई पड़ता है। भाषाओं का सम्मिश्रण सांस्कृतिक अंतरंगता दिखलाता है। लेकिन अधिकतर भाषाओं के अपने निजी स्वरूप को खो देने का खतरा भी बना हुआ है। वहाँ की हिन्दी में फ्रेंच, अंग्रेजी और क्रियोल भाषाओं की कहावतों और मुहावरों का प्रयोग भी यत्र-तत्र होता है। भाषाओं के अधिक मेल-जोल से भाषा का व्याकरणिक स्वरूप भी किंचित् प्रभावित-परिवर्तित हुआ है। इससे ''व्याकरण, उच्चारण और विन्यास में भी काफ़ी परिवर्तन आ गये हैं।''[31] हिन्दी वहाँ के लोक जीवन में गहराई से व्याप्त होती जा रही है। डॉ.गंगा प्रसाद विमल मॉरिशस में हिन्दी को भाषाई विविधता की दृष्टि से एक कदम आगे मानते हैं। शोषकों की भाषा के द्वारा वे भाषाई साम्राज्यवाद को पाँव फैलाते हुए देखते हैं। मॉरिशस में अंग्रेजी और फ्रेंच के प्रभुत्व को वे साम्राज्यवाद का नया चेहरा मानते हैं। इस भाषाई वेश में संपन्न राष्ट्र अल्प विकसित देशों का शोषण करते हैं। वे लिखते हैं कि - ''यह बहुतों को अटकल भी लग सकता है। किन्तु जिस भाषा की शक्ति से अल्प विकसित देशों के हाथों में अपनी नियति का अधिकार आया है

उसीसे हम अपने नव निर्माण, अपने भविष्य के संवर्द्धन का कार्य पूरा कर पायेंगे।''[32] आगे पुनः वे इसका कार्यान्वयन के लिए सबके सामने यह बात रखते हैं - ''यह प्रस्ताव विधिशास्त्रियों, भाषाविदों, राजनीति के पंडितों, विशेषज्ञों के सामने है कि मॉरिशस हिन्दी के द्वारा अपनी एक विशेष छवि निर्माण कर अन्तर्राष्ट्रीय भाषायी उपनिवेश को तोड़ सकता है इसलिए कि वह छोटा देश है तथा कई अर्थों में अभी अपने निर्माण के विचार में सद्यता लिए हुए है।''[33]

यह सच है कि हिन्दी भाषा-भाषियों के संघर्ष और सहयोग से ही मॉरिशस जल्द से जल्द स्वतंत्रता की साँस ले सका। ''मॉरिशस ने इतिहास को हिन्दी में जिया है और हिन्दी में ही स्वतन्त्रता तक की यात्रा तय की है। स्वतंत्रता के बाद अस्मिता की खोज यहाँ के हिन्दी भाषियों ने हिन्दी का सहारा लिया। इस लम्बी दौड़ में हिन्दी को कहीं विस्मृत नहीं किया गया। यह हिन्दी की बहुत बड़ी उपलब्धि है। हिन्दी को इन लोगों ने मूल भाषा के रूप में प्रतिष्ठित किया है। मंदिरों में शंखों, मस्जिदों में मुल्लाओं की अजानों और गिरजे की घंटियों में उसी एक अव्यक्त परमपिता के आह्वान के स्वरों की अनुगूँज सुनाने का एकमात्र श्रेय भारतीय भाषा हिन्दी को प्राप्त है।''[34] मॉरिशस में हिन्दी भाषा के विकास का सवाल वहाँ के प्रथम प्रधान मंत्री सर सिवसागर रामगुलाम के राजनैतिक जीवन से भी संबंधित है। जब वे प्रधान मंत्री नहीं थे और मॉरिशस आजाद नहीं हुआ था तब ''1941 में जब शिक्षा निर्देशक बोर्ड ने कहा कि हिन्दी की पढ़ाई नहीं होनी चाहिए तो उन्होंने यह बताया कि हिन्दी हमारी विरासत है। इसमें हमारी संस्कृति के प्राण हैं।''[35]

इस तरह हिन्दी भाषा अपनी सशक्तता, आवश्यकता और प्रायोगिकता के कारण लोगों की आकांक्षा में एक जिम्मेदार भाषा का रुतबा रखती है। इसकी दीर्घ लेखन-परम्परा और इतिहास है जिसके सहारे वहाँ भारतीयता और सभ्यता- संस्कृति को अभिव्यक्ति प्राप्त हुई है। मॉरिशस में हिन्दी भाषा का क्रमिक विकास एक उपलब्धि के रूप में माना जाना सकता है परन्तु उसे गतिमान बनाये रखने की दिशा

में कम समस्याओं का सामना नहीं करना पड़ रहा है। पाठ्यक्रम, पाठ्य पुस्तक की कमी, अप्रशिक्षित शिक्षक, संदर्भ एवं भाषा कोशों की कमी, दृश्य-श्रव्य साधनों की कमी आदि के साथ आम जनता का नजरिया, उपयोगितावाद की आँधी पाश्चात्य प्रभाव आदि प्रमुख हैं। सामूहिक रूप से हिन्दी प्रेमियों को एक दूसरे का सहायक एवं परिपूरक बनकर शिक्षण को रोचक बनाकर एक सुन्दर हिन्दीमय वातावरण तैयार करने की आवश्यकता है। इसके लिए निश्चित रूप समूचे विश्व हिन्दी परिवार को एकजुट होकर योजनानुरूप प्रयास करने होंगे।

3.2 मॉरिशस में हिन्दी साहित्य : एक अवलोकन

हिन्दी भाषा भाषियों के भौगोलिक विस्तार के साथ ही हिन्दी साहित्य की सीमा का भी विस्तार हुआ। कई देशों को गये तथा वहाँ स्थायी रूप से बसे प्रवासी भारतीयों एवं उनकी सन्ततियों ने अपनी भाषा में सर्जनात्मक कार्य किए। तमिल या गुजराती जैसी अन्य भारतीय भाषाओं में उतनी रचनाएँ नहीं लिखी गईं जितनी हिन्दी में। सुविधा-असुविधा के मध्य प्रवासी भारतीयों ने मॉरिशस में, भारत के बाद हिन्दी में, सर्वाधिक रचना कार्य किया है। मॉरिशस जानेवाले अधिकांशतः शर्तबन्द मजदूर उत्तर भारत के रहने वाले थे। उनकी बोली अवधी अथवा भोजपुरी थी भारतीय भाषा और जीवन पद्धति के अलावा मॉरिशस की सरकार भी उन्हीं अंग्रेजों की थी, जो भारत में राज्य कर रहे थे। दोनों में एक समानान्तर परिदृश्य देखा जा सकता है। भाषा की प्रांजलता के साथ अगर काव्यशास्त्र के सख्त मानदण्डों को आधार न माना जाए तो मॉरिशस में रचित हिन्दी साहित्य को सम्पूर्ण हिन्दी साहित्य का हिस्सा माना जा सकता है। ऐसा करने पर उसमें क्षेत्र विशेष का असर और वैशिष्ट्य देखा जा सकता है। 'नौंवे दशक के मॉरिशसीय हिन्दी साहित्य' पर शोध करने वाली लेखिका डॉ.लता के अनुसार ''यदि मॉरिशस भारत से भौगोलिक स्तर पर जुड़ा होता, तो इसके साहित्य की गन्ध को हम आँचलिक कहते। यह हिन्दी साहित्य भारतीयों के परिश्रम और संस्कृति-संरक्षण की वह अस्मिता है, जो बरबस

ही अपनी ओर खींचती है। यह दलित, पीड़ित और संघर्षरत मानव की वह महत्वकांक्षा जो एकजुट होने पर किसी भी लक्ष्य तक पहुँच सकती है।'[36]

मॉरिशस का साहित्यिक विकास भाषिक विकास के समानान्तर नहीं रहा है। विश्व के कई देशों के लोगों के आव्रजन से गठित मॉरिशसीय लोगों की भाषा का विकास बहुभाषिक और अपरिष्कृत रूप में हुआ है। सबसे ज्यादा व्यवहार में लायी जानेवाली भाषा क्रियोली में तो साहित्य रचना प्रायः नहीं के बराबर है। चीनी एक छोटे-से समुदाय की अपनी भाषा है। फ्रेंच और अंग्रेजी के साथ-साथ हिन्दी साहित्य भी अपने स्थान निर्धारण के लिए संघर्षरत है। मॉरिशस में हिन्दी भाषा और साहित्य की विशेष प्रतिष्ठा का कारण सांस्कृतिक है। इसे वहाँ के प्रवासी भारतीय अपनी सम्मिलित अस्मिता के प्रतीक के रूप में देखने के आदी रहे हैं। इसीलिए औपनिवेशिक दमन और उत्पीड़न के बावजूद उन लोगों ने अनवरत रूप से हिन्दी में साहित्य साधना की है। अभिमन्यु अनत, सोमदत्त बखोरी ब्रजेन्द्र मधुकर, प्रह्लाद रामशरण, रामदेव धुरंधर, भानुमती नागदान और मुनीश्वर चिन्तामणि जैसे कुछ ऐसे साहित्यकार हैं जो भारत में भी जाने जाते हैं। इन लोगों ने लेख, कविता, कहानी, उपन्यास और नाटकों की रचना की है। ''उपन्यास, कहानी, काव्य, निबन्ध और पत्र-पत्रिकाओं की दृष्टि से यह मॉरिशस की सबसे समृद्ध भाषा है। 1968 से 1988 तक देश का श्रेष्ठ सृजन इसी भाषा में हुआ है।''[37]

प्रवासी भारतीयों के हृदय में अक्षुण्ण भारतीय परम्परा थी जो भारत के सन्दर्भ में मानवता का रेखांकन करती थी। अधिकांश मॉरिशसीय साहित्यकारों ने अभिव्यक्ति में सदैव इस बात का ध्यान रखा है। जीवन के कटु अनुभव और सामाजिक जीवन का यथार्थ उनका दिग्दर्शन करता रहा है। उनके साहित्यिक प्रतिमान साधारण साहित्यिक मानदण्ड से परे नहीं हैं।

3.2.1 मॉरिशस में हिन्दी साहित्य : पृष्ठभूमि और परिवेश :

मॉरिशस में शर्तबन्द भारतीय मजदूरों के आगमन के साथ वहाँ हिन्दी भाषा और साहित्य का काल आरम्भ होता है। मॉरिशस जाने वाले प्रायः सभी मजदूर निरक्षर थे। वे शिष्ट भाषिक और साहित्यिक ज्ञान से लगभग अनभिज्ञ थे। जिन्हें खड़ी बोली थोड़ा-बहुत मालूम मालूम भी थी वे इसका उचित प्रयोग नहीं कर पाते थे। आर्थिक रूप से तो वे पराधीन थे और अधिकतर इसी कारण सामाजिक रूप से भी वे हीन भावना के शिकार थे। व्यापक राजनीति का न उन्हें ज्ञान था और न ही वे इसके हकदार माने जाते थे। शायद यही कारण था कि इन गरीब, अनपढ़ और भोले भाले भारतीय किसानों का गोरे अंग्रेज और फ्रेंच मालिकों ने बड़ी क्रूरता से शोषण किया। आत्म शान्ति अथवा मनोरंजन नाम की कोई भी चीज़ इन भारतीयों के पास नहीं होती थी। वे करीब-करीब ग़ुलामों जैसा जीवन व्यतीत करते थे। आपसी बैठक, निज भाषा अथवा बोली में बातचीत, कुछ लोकगीतों की गुनगुनाहट या किसी कंठस्थ धार्मिक-सांस्कृतिक चरित्र का आख्यान ही ऐसा माध्यम था जो उन्हें दिन भर जिल्लत भरी अनुभवों से मुक्ति दिलाता। धीरे-धीरे इन लोगों ने कठिन परिश्रम के बल पर अपनी रोजी-रोटी का बन्दोबस्त कर लिया था। उनकी धमनियों में भारतीय संस्कृति का रक्त प्रवाहित था। रामचरित मानस और हनुमान चालीसा जैसे ग्रन्थ उन्हें कंठस्थ थे। उनके धार्मिक कार्यकलाप और नाच-गाने, कीर्तन-भजन सामूहिकता के प्रमाण थे, जो वहाँ जारी रहे। 'सोनवा के खातिर अइली मिरच देशवा गलि गइले सोनवा शरीर' जैसे लोकगीतों के शब्दों में अपनी वर्तमान स्थिति के प्रति उनके हृदय की पीड़ा व्यक्त होती थी। ''उनके लिए 'पराधीन सपनेहुँ सुख नाहीं' वाली कहावत चरितार्थ होती थी। किन्तु उस दुर्दिन के आघातों को सहने के लिए उनके पास तीन अमोघ कवचें थीं। प्रथम कवच के रूप में तुलसी कृत 'रामचरित मानस' द्वितीय 'आल्हाखण्ड' तथा तृतीय और अत्यन्त सहज कवच था 'हनुमान चालीसा'। इन धर्म पुस्तकों की त्रिवेणी हिन्दी के लिए रामबाण बन गयी।''[38]

इनके अलावा अन्य लोक गीत, लोक कथाएँ जैसे सारंगा, तोता मैना एवं अन्य स्फुट-अर्ध स्फुट सुनी-सुनाई किस्से-कहानियाँ। यही सब कुछ थी उनके मौखिक साहित्य की सम्पत्ति। इन सबका वाचन, पारायण होता और भोजपुरी में उनका अर्थ प्रतिपादन किया जाता। पराधीनता का परिवेश और वह भी विदेशी धरती पर भारतीयों की सर्जनात्मक सोच को कितना प्रभावित कर पाया होगा, यह सहज ही अनुमान का विषय है। मौखिक, धार्मिक साहित्य और किस्सागोई ने वहाँ के हिन्दी साहित्य की पृष्ठभूमि तैयार की थी। उनके पास न तो प्रौढ़ भाषा थी, न ही कलापक्ष की चतुराई। यहाँ तक कि भाव पक्ष का वैविध्य भी नहीं था। फिर भी, उन्होंने हार नहीं मानी। उनमें जिजीविषा थी, संघर्ष था और अपने अनुभवों को वाणी देने की ललक थी। समुद्र की लहरों की भयानकता को पार करनेवाले भारतीयों का जीवन कम न था। मॉरिशस की रेत की मिट्टी पर लिखाई-पढ़ाई आरम्भ करने वाले भारतीयों ने उस धरती के पत्थरों पर अपनी मेहनत से किस्मत की ऐसी अमिट लकीर खींची कि वह उन्हें भाग्योदय की रेखा बन गयी। आज उन्हीं शोषित, प्रताडित बँधुआँ मजदूरों की सन्तानें उस देश की कर्णधार हैं। आरंभ में भाग्य पर रोने वाले भारतीय मजदूरों की सन्ततियाँ आज मॉरिशस का भाग्य और भविष्य है। इस पृष्ठभूमि और परिवेश में रचित मॉरिशसीय हिन्दी साहित्य वहाँ के इतिहास, समाज देश की दास्तान प्रस्तुत करता है।

''वास्तविक रूप से मॉरिशसीय लिखित साहित्य (हिन्दी) अभी तक तीन चौथाई शताब्दी को भी पार नहीं कर सका है। वहाँ भाषा पर दबाव के अलावा अन्य राजनीतिक व आर्थिक परिस्थितियों ने भी साहित्य सर्जन तथा विकास के रास्ते में रुकावट डाली।''[39] इन लोगों का जीवन परतंत्रता और शोषण का शिकार था, फिर भी राजनैतिक तौर पर स्वतंत्रता के लिए संघर्ष भी कर रहा था। आर्थिक तौर पर भी वह मुक्ति की चेष्टा में लगा हुआ था। इस तरह ''मॉरिशसीय हिन्दी साहित्य के सृजन का परिवेश राजनीतिक रूप में परतन्त्रता के विरुद्ध संघर्ष एवं स्वतंत्रता दो स्थितियों का रहा है।''[40]

सन् 1968 में आजादी के बाद वहाँ की परिस्थितियों में लगातार सुधार होते रहे। आज आजादी के के लगभग चार दशक के बाद अपने भाग्य, व्यवसाय, सत्ता और भाषा का फँसला भारतीयों के अपने हाथों में है। परिस्थितियों में सुधार आने से हिन्दी भाषा और साहित्य के विकास का अवसर प्राप्त हुआ। बदली हुई राजनैतिक स्थितियों का निश्चित रूप से साहित्य और समाज पर सकारात्मक असर हुआ। आज हिन्दी साहित्य विकास के जिस रास्ते पर अग्रसर है वहाँ जरूरत है तो सिर्फ़ मनोबल और भाषा तथा साहित्य के प्रति जनता का रुझान बनाये रखने की। यह प्रसन्नता की बात है कि वहाँ के बुद्धिजीवी, सरकार और भारतीय समर्थन हिन्दी साहित्य के लिए हितकारी प्रयास में लगे हुए हैं।

मॉरिशस में हिन्दी की स्थिति पर संतोष करते हुआ वहाँ के विद्वान लेखक रामदेव धुरंधर कहते हैं - ''हमारे यहाँ साहित्य और भाषा की स्थिति काफ़ी सुखद है। ..... 1968 में स्वतन्त्रता के बाद से हिन्दी ने जितना काम किया है उतना शायद फ्रेंच और अंग्रेजी ने भी नहीं किया है। दरअसल स्वतन्त्रता की लड़ाई में हिन्दी मानस के लोगों का महत्वपूर्ण योगदान रहा था। स्वतन्त्रता के संघर्ष में हिन्दी साहित्यकार और नेता कंधे से कंधा मिलाकर चल रहे थे। इसके चलते हिन्दी की प्रतिष्ठा भी बढ़ी।''[41] एक जगह रामदेव धुरंधर दावा करते हैं कि ''हमारे यहाँ 99 फ़ीसदी लोग हिन्दी समझते हैं।''[42] निश्चित रूप से यह सरकारी और सामाजिक प्रयासों के समान विचारों का फल है।

3.2.2 मॉरिशस में हिन्दी साहित्य : उद्भव और विकास :

मॉरिशस में लिखी गयी हिन्दी की पहली साहित्यिक रचना से लेकर आज तक, प्रायः साहित्य की सभी प्रमुख विधाओं में वहाँ लेखन कार्य हुआ है। भाषा की संरचना में भी निखार आता गया है। मॉरिशस की आजादी के पहले और बाद के कथ्य और साहित्य प्रयोजन भी बदलते रहे हैं। ''मॉरिशस का हिन्दी साहित्य

शैशवावस्था को लाँघकर यौवन के द्वार को खटखटा रहा है। यहाँ के हिन्दी साहित्य का मूल्यांकन हम भारतीय साहित्य की तुला पर रखकर नहीं कर सकते। लेकिन अगर प्रवासी साहित्य के रूप में इसका विश्लेषण करें तो मॉरिशस के हिन्दी साहित्य का स्थान अत्यंत ही महत्वपूर्ण है।''[43]

मॉरिशसीय साहित्य के उद्‌भव और विकास को समझने के लिए इसका काल विभाजन किया जा सकता है। इसके द्वारा साहित्य का लेखा जोखा और उनकी प्रवृत्तियों की दिशा एवं दशा पर उचित प्रकाश डाला जा सकता है। हिन्दी साहित्य की विभिन्न विधाओं में भी प्रमुख रूप से कविता एवं कथा का क्षितिज अपेक्षाकृत विस्तृत और संभावनाओं से भरपूर नजर आता है। आज भी वहाँ हिन्दी साहित्य में सृजन का प्रवाह वेगवान है। यहाँ पर भिन्न-भिन्न विधाओं का अलग से विवेचन करना उचित होगा।

आरंभ में मॉरिशस में हिन्दी साहित्य मौखिक रूप से रचा गया। हिन्दी साहित्य में रचना के प्रेरक तत्त्व मॉरिशस में तभी से उपस्थित थे जब 1834 में पहली बार प्रवासी भारतीयों ने शर्तबन्द मजदूर के रूप में मॉरिशस की सतरंगी भूमि पर अपने कदम रखे। हिन्दुस्तानी प्रेस की स्थापना के साथ ही हिन्दी साहित्य में लिखित रचना के दौर आरम्भ माना जा सकता है। डॉ.मणिलाल ने सन्1909 में 'हिन्दुस्तानी प्रेस' की स्थापना की। सबसे पहले उन्होंने 'हिन्दुस्तानी' नामक साप्ताहिक पत्रिका की शुरुआत की जिसे बाद में दैनिक के रूप में प्रकाशित किया गया। हालाँकि पहले-पहल इसे अंग्रेजी और गुजराती भाषा में निकाला गया। लेकिन बाद में हिन्दी में भी इसे प्रकाशित किया गया। श्री प्रह्लाद रामशरण इसके बारे में लिखते हैं कि ''अभी यह बताना सम्भव नहीं है कि हिन्दी भाषा का प्रयोग (पत्रिका में) मॉरिशस में किस साल से किया गया। पर 1913 के 'हिन्दुस्तानी' में 'होली' विषय पर जो लेख और कविता छपी है, वही मॉरिशस में प्रकाशित हिन्दी का प्रथम उपलब्ध लेख और प्रथम कविता है।''[44] 'मॉरिशसीय हिन्दी साहित्य का उद्‌भव और

विकास' पर शोध करने वाले डॉ.श्यामधर तिवारी अपनी खोज के आधार पर निजी धारणा इस प्रकार व्यक्त करते हैं - ''लेखक ने स्वयं मॉरिशस के आर्काइव्ज में 'हिन्दुस्तानी' पत्र के 15 मार्च, 1909 तथा 2 मार्च, 1913 के अंकों का अध्ययन किया और पाया कि 1909 के अंक का प्रकाशन गुजराती और अंग्रेजी भाषा में हुआ है। इसी 1913 के अंक में 'होली' कविता तथा 'सत्य होली' लेख प्रकाशित हुए हैं। ये ही मॉरिशसीय हिन्दी साहित्य की प्रथम रचनाएँ हैं। अतः इससे पूर्व के अंकों की अनुपलब्धता और हिन्दी रचना की अस्तित्व हीनता को देखते हुए 'हिन्दुस्तानी' के 1913 के अंक की कविता और लेख को हिन्दी साहित्य के उद्‌भव के रूप में स्वीकार करना समीचीन है।''[45] उपलब्ध प्रमाणों एवं तत्कालीन सामाजिक-सांस्कृतिक, धार्मिक तथा राजनीतिक जागरण की दृष्टि से भी बीसवीं शताब्दी का प्रारम्भ मॉरिशस में हिन्दी साहित्य के उद्‌भव का काल है।

वहाँ के साहित्य ऐतिहासिक विकास की दृष्टि से अध्ययन हेतु इसके अध्येताओं ने जो काल विभाजन किया है उस पर दृष्टिपात करना समीचीन होगा। आज मॉरिशसीय हिन्दी साहित्य से सम्बन्धित अनेक ऐसी पुस्तकें भी उपलब्ध हैं (जैसे सोमदत्त बखोरी द्वारा रचित 'हिन्दी इन मॉरिशस', श्री जयनारायण राय की 'मॉरिशस में हिन्दी भाषा का संक्षिप्त इतिहास' तथा डॉ.कैलाश कुमारी सहाय की पुस्तक 'प्रवासी भारतीयों की हिन्दी सेवा आदि) जिनमें काल विभाजन पर ध्यान नहीं दिया गया है।

जबकि बीरसेन जागासिंह, डॉ.श्यामधर तिवारी, डॉ.लता और डॉ.मुनीश्वर लाल चिन्तामणि जैसे विद्वानों ने मॉरिशस में हिन्दी साहित्य के उद्‌भव और उसके विकास को दर्शाते हुए अपने-अपने अनुसार काल विभाजन किया है। डॉ.मुनीश्वर लाल चिन्तामणि स्वयं मॉरिशस में हिन्दी के मूर्धन्य साहित्यकार हैं। उन्होंने अपने लेख 'मॉरिशस में हिन्दी का विकास' में मॉरिशसीय हिन्दी साहित्य का काल विभाजन इस प्रकार किया है - -

"1. प्रारम्भिक काल	(1834 ई. - 1900 ई.)
2. मध्यकाल	(1900 ई. - 1935 ई.)
3. आधुनिक काल	(1935 ई. - अब तक) "[46]

सन् 1985 में प्रकाशित 'अभिमन्यु अनत : व्यक्तित्व और कृतित्व' पुस्तक में डॉ.श्यामधर तिवारी ने मॉरिशस के हिन्दी साहित्य के इतिहास को दो भागों में बाँटा है - आरम्भिक काल (1834 ई. से 1934ई) और विकास काल (1935 ई. से अद्यतन)। लेकिन अपनी अन्य पुस्तक (मॉरिशस में हिन्दी साहित्य का उद्‌भव और विकास) में डॉ.श्यामधर तिवारी काल विभाजन तथा नामकरण इस प्रकार करते हैं -

"1. प्रारम्भिक काल (या प्रेरणा काल)	1913ई. से 1935 तक
2. मध्यकाल (या संघर्ष काल)	1935ई. से 1968 तक
3. आधुनिक काल (या स्वातन्त्र्य काल)	1968ई. से अब तक"[47]

किन्तु काल विभाजन की आधारक मान्यताओं पर दृष्टिपात करने पर पता चलता है कि वे पूरी तरह सुनिश्चित नहीं है। साहित्य की मौखिक और लिखित परम्परा और तत्कालीन भाषा तथा साहित्य सृजन के प्रेरक तत्त्वों का विवेचन करने पर काल विभाजन के और भी रूप मिल सकते हैं, यथा -

1. मौखिक युग (या आरम्भिक काल)	1834 ई. से 1901 ई.
2. गाँधी युग (या प्रेरणा काल)	1931 ई. से 1934 ई.
3. संघर्ष युग	1934 ई. से 1968 ई.
4. स्वातन्त्र्योत्तर युग	1968 ई. से अद्यावधि

इस तरह मॉरिशस में पदार्पण से लेकर स्वातन्त्र्योत्तर काल तक वहाँ के निवासियों की हिन्दी साहित्य साधना को उपयुक्त तरीकों से रेखांकित किया जा सकता है।

मॉरिशस पहुँचकर प्रवासी भारतीय मजदूरों ने रामचरित मानस, विभिन्न लोकगीतों तथा फुटकर भक्ति, नीति के पदों, कहानियों और रोजाना के आम प्रयोग की कहावतों और मुहावरों को कभी मरने नहीं दिया। अपनी सांस्कृतिक- साहित्यिक धरोहर उन्होंने मौखिक रूप से आरंभ के कई वर्षों तक सुरक्षित और जीवित रखी। सन् 1901 में महात्मा गाँधी के मॉरिशस पदार्पण से वहाँ रह रहे भारतीय प्रवासियों के जीवन-संघर्ष उनकी सांस्कृतिक अस्मिता और हिन्दी भाषा एवं साहित्य को नई जीवन-प्रेरण प्राप्त हुई। प्रवासी भारतीयों की स्वाधीनता, आर्थिक स्वनिर्भरता एवं निजी पहचान का निर्धारण करने में हिन्दी भाषा और साहित्य सदा सहयोगी रहे। आजादी के उपरान्त प्रवासियों को अपनी सांस्कृतिक विरासत और अपनी अस्मिता को प्राणवान बनाये रखने के लिए जैसे हथियारों और सहयोग की आवश्यकता पड़ी, हिन्दी भाषा और साहित्य उस दायित्व को निभाते रहे हैं। इस तरह भिन्न-भिन्न कालों में भिन्न-भिन्न विधाओं में हिन्दी साहित्य का लगातार सृजन होता रहा है। इन चारों साहित्यिक युगों का अवलोकन करने पर पता चलता है कि समस्त महत्वपूर्ण साहित्यिक विधाओं में हिन्दी में वहाँ प्रचुर मात्रा में रचना कार्य हुआ है।

मॉरिशस की हस्तलिखित हिन्दी पत्रिका 'दुर्गा' के आधार पर कमल डॉ.किशोर गोयनक जी ने उस समय प्रयोग की जाने वाली साहित्यिक विधाओं का वर्णन इस प्रकार किया है - ''यहाँ पाठकों की जानकारी के लिए विधा के अनुसार कुल रचनाओं की संख्या दी जा रही है -

1. सम्पादकीय	297	2. लेख	730
3. कविता	63	4. कहानी	167
5. गद्य काव्य	25	6. यात्रा-संस्मरण	38
7. नाटक	7	8. लघु कथा	9
9. इंटर्व्यू (भेंटवार्ता)	14	10. व्यंग्य	6
11. पत्र	17	12. पुस्तक समीक्षा	9

13. अनुवाद	45	14. विचार संग्रह	11
15. समाचार	15	16. चुटकुले	20
17. सम्मति	18	18. अभिभाषण	14
19. पहेली	2	20. संस्मरण	12
21. चित्र/कार्टून/रेखाचित्र	177		

इस प्रकार 'दुर्गा' के 1935-37 के उपलब्ध 34 अंकों में 1686 रचनाएँ प्रकाशित हुईं। 'दुर्गा' के अंकों से स्पष्ट है कि हिन्दी साहित्य की अधिकांश विधाओं का जन्म उस समय हो चुका था।''[48]

3.2.2.1 मॉरिशस का हिन्दी काव्य साहित्य :

मॉरिशस में काव्य साहित्य की रचना का काल कब से आरम्भ हुआ, यह कहना कठिन है, परन्तु सन् 1913 में 'हिन्दुस्तानी' में प्रकाशित 'होली' कविता के लिखित रूप से इसका प्रारम्भिक बिन्दु माना जा सकता है। हालाँकि उसके पहले भी निश्चित रूप से पद्य साहित्य लेखन हुआ होगा अथवा होता रहा होगा। डॉ.श्यामधर तिवारी की पुस्तक 'मॉरिशस में हिन्दी साहित्य का उद्‌भव और विकास' के अनुसार 'होली' कविता के कवि का वास्तविक नाम तो पता नहीं, परन्तु उपनाम 'गणेशी' था। उक्त कविता निम्नवत थी -

''होली

आर्यो ने ऐसी होली मचायी
चहूँ दिशि से सज्जन सब आये, बैठे सभा बनाई।
गावत वेद अति नीको, ध्यान यश यगराई
अगम गन जाकि है राई ।।**1**।।

खेलत फाग सुलभ सुचि संयम, सत पिचकारी बनाई।
प्रेम रंग-रंग भरी, भरी, भरत सा गुलाल सुहाई

रंगे सज्जन सब आई ।।2।।

जप तप गान वेदन को भी उत्साह बढाई।
मिलत परस्पर से सज्जन, दाह कष्ट बिसराई।
करत है जगत भलाई ।।3।।

विधवा अनाथ विपति गाँव की, तापर दृष्टि चलाई।
करत प्रबन्ध अहर निशि बासा, तन मन धन से रदाई।
दुःख जिन पर अधिकाई ।।4।।

सत्य प्रचार सुधार जगत को, कि फाग सुखदाई
खेलहु परहित कारण, देहु अविद्या निशाई
'गणेशी' बलि-बलि जाई ।।5।।
क्या आनन्द दें, वाह रे होली''[49]

इसके बाद प्रायः दस साल तक किसी भी लिखित कविता का उल्लेख नहीं मिलता है। 'होली' कविता के कवि की अज्ञात स्थिति में मॉरिशस के प्रथम हिन्दी कवि के रूप में प्रवासी भारतीय कवि पं.लक्ष्मीनारायण चतुर्वेदी को लिया जा सकता है। इनका सन् 1921 में उत्तर प्रदेश के बलिया जिले से मॉरिशस में पदार्पण हुआ था। वहाँ रह रहे अपने पिता की तरह ही चतुर्वेदी जी भी लोगों में स्वधर्म-निष्ठा, भाषा-संस्कृति और एकता एवं संगठन के मंत्र फूँकते रहे।

मॉरिशस में सन् 1923ई. में इन्होंने अपनी कविताओं का प्रथम संकलन 'रसपुंज कुण्डलियाँ' के नाम से प्रकाशित करवाया। इनकी दूसरी काव्य-पुस्तक 'शताब्दी सरोज' का प्रकाशन सन् 1935 में हुआ।

सन् 1934 में जदुनन्दन शर्मा के दस गीतों का संग्रह 'कृष्ण की वंशी' का प्रकाशन हुआ जिसके कृष्ण की भक्ति से संबंधित गीत पहले मौखिक रूप से गाये जाते थे। इनकी दूसरी कविता-पुस्तक 'वंशी की तान' नाम से छपी।

मॉरिशसीय स्वतन्त्रता के संघर्ष में प्रमुख रूप से साहित्यिक योगदान देने वाले श्री ब्रजेन्द्र कुमार भगत मधुकर मॉरिशसीय साहित्यकारों में प्रमुख माने जाते हैं। सन् 1948 में उन्होंने 'मधुपर्क' और 1949 में 'वीरगाथा' तथा 'रागिनी की रचना की। बाद में 'मधुकरी' लिखी। 1963 में मधुकर जी के चार काव्य सग्रह - 'अमर संदेश', 'गुंजन', 'हमारा देश एवं रणभेरी' और 'रसरंग' का प्रकाशन हुआ। उन्होंने कभी भी लेखन कार्य को विराम नहीं दिया। 1969-73 के मध्य मधुकलश, मधुवन, मधुमास और मधुचक्र जैसी काव्य पुस्तकों की रचना की। उन्होंने 'घुरहू मौसा क सनेस' (1963) नामक भोजपुरी कविता संग्रह भी लिखी। प्रायः 40 रचनाएँ मधुकर जी की लिखी हैं। मॉरिशस के हिन्दी साहित्यकार डॉ.लक्ष्मीप्रसाद रामयाद मानते हैं कि - ''डॉ.भगत मधुकर जी की कृतियाँ मॉरिशस की नई पीढ़ी के लेखकों के लिए प्रेरणा है।''[50] डॉ.बीरसेन जागा सिन्ह उन्हें राष्ट्र कवि मानते हैं। पं.हरिप्रसाद रसाल द्वारा रचित 'भजनमाला' (1958), और 'छन्दमाला' (1958) नामक पुस्तकों के प्रकाशन भजन-गायन परम्परा में हुए। इस तरह मॉरिशस में विविध छन्दों में काव्य रचना होती रही। राम रत्न रसाल मिश्रा की कृति 'बिखरे सुमन' भी छन्दोबद्ध काव्य का अच्छा उदाहरण है।

अंग्रेजी और फ़्रेंच का अध्ययन करते हुए भी मुनीश्वरलाल चिन्तामणि का हिन्दी से गहरा लगाव था। 'प्रथम किरण' (1960) और 'शान्ति निकेतन की ओर' (1961) जैसे महत्वपूर्ण कविता संकलन के रचयिता डॉ. मुनीश्वर चिन्तामणि जी ने पहली बार मॉरिशसीय काव्य परम्परा में मुक्त छन्द का प्रयोग किया। विष्णुदत्त मधु 'चन्द्र' ने भी 'रश्मि रवि' (1961) और 'मॉरिशस भारती' (1966) नामक दो कविता

संग्रहों की रचना की। ये रचनाएँ भावों की गहरी सच्चाई दिखलाती हैं। मंदोदरी भगत पुरस्कार से पुरस्कृत जयरूद देशिया की रचना 'सुधा कलश' में सहजता तथा गांभीर्य का पुट देखने को मिलता है। इसमें व्यक्तिगत जीवन का राग-विराग, प्रकृति प्रेम तथा आध्यात्मिकता का संदेश भी मिलता है। 'कवि सम्मेलन' (1966) नामक कविता संग्रह में रविशंकर कोलेश्वर, गौतम रिसाल, जयरूद दोसिया, ब्रजेन्द्र कुमार भगत, सोमदत्त बखोरी और मुनीश्वरलाल चिन्तामणि द्वारा भाग लिए गए कवि सम्मेलन कविताओं को संगृहीत किया गया है। सोमदत्त बखोरी एक कर्मठ और प्रौढ़ रचनाकार थे। उनके रचनाकाल से ही मॉरिशसीय हिन्दी कविताओं में भाषा एवं शिल्पगत प्रौढ़ता देखने को मिलता है। 'एक मॉरिशसवासी की हिन्दी यात्रा' (1967), 'गंगा की पुकार' (1968), 'मुझे कुछ कहना है' (1967), 'बीच में बहती धारा', 'नशों की खोज में' (1981), 'साँप भी सपेरा भी' (1982) आदि इनकी प्रसिद्ध रचनाएँ हैं।''[51]

12 मार्च, 1968 को मॉरिशस स्वतन्त्र हुआ। अब वहाँ देश के चतुर्दिक नवनिर्माण का समय आरम्भ हुआ। इसका प्रतिफलन वहाँ के हिन्दी काव्य साहित्य में भी देखने को मिलता। लेकिन जैसा कि स्वाधीनता प्राप्ति के पश्चात भारतीय जन जीवन में देख पड़ा था वैसा ही कुछ मॉरिशस में भी हुआ जहाँ ''अनेक मंगलमयी एवं कल्याणकारी योजनाएँ जनता के लिए लागू की गई, परंतु जनता को वह प्राप्य नहीं मिला जो उन्हें मिलना चाहिए था। स्वतन्त्रता प्राप्ति के बाद उनकी आशाओं, आकांक्षाओं तथा अपेक्षाओं के अनुकूल उनके स्वप्न पूरे नहीं हुए, फलतः एक मोहभंग की स्थिति, एक निराशा, हताश की स्थिति जनमानस में घर करने लगी। ..... इन्हीं परिस्थितियों से उबरने तथा बदतर स्थितियों से जूझते लोगों को आगाह करने तथा एक बेहतर समाज के निर्माण के लिए साहित्यकार सन्नद्ध हैं। स्वातन्त्र्योत्तर काव्य साहित्य इसी का प्रतिफलन है।''[52] स्वातन्त्र्योत्तर मॉरिशसीय हिन्दी कविता के बारे में दिए डॉ.श्यामधर तिवारी के इस वक्तव्य से हमें कविता की

दिशा का ज्ञान होता है। डॉ.कैलाश कुमारी सहाय मानती हैं कि मॉरिशस में ''स्वतन्त्रता के साथ बेकारी और निर्धनता की समस्याएँ पनपीं। आर्थिक और सामाजिक स्वाधीनता के लिए व्यक्ति की संघर्ष चेतना को काव्यों में स्थान मिला।''[53]

स्वातन्त्र्य कालीन कवियों में ब्रजेन्द्र कुमार 'मधुकर' प्रमुख हैं। आजादी के बाद उन्होंने 'स्वराज्य गीतांजली' (1968), 'एक कहानी कुली की' (1968), 'हिन्दी गौरव गान' (1969), 'मधुकलश' (1969), सर शिवसागर राम गुलाम (1970), मधुवन (1970), रसवन्ती (1970), मधुमास (1971), मधुचक्र (1973), गोस्वामी तुलसीदास (1973), स्वागत ज्ञान (1976), जयहिन्दी (1976), मधुद्वीप (1984), अमरकुली गाथा (1984), मधुश्री (1985), मधुवाण(1986), मधु व्यंजना (1988), माधुरी (1988-89) और मधु गुंजार (1989) जैसी कृतियों से मॉरिशस का हिन्दी काव्य भंडार समृद्ध हुआ।

मोहनलाल हरदयाल को साहित्य सेवा हेतु मंदोदरी पुरस्कार प्रदान किया गया था। उन्होंने 'तरंगिणी' (1968) काव्य संग्रह की रचना की। देश विदेश का अनुभव रखनेवाले ठाकुर प्रसाद मिश्र ने दो खण्ड काव्य - 'दीपावली' (1968) तथा 'हिन्दू नेता' (1971) प्रकाशित करवाये। श्री हरिनारायण सीता को भी उनकी रचना 'प्रभात' (1969) पर मंदोदरी रामलाल भगत पुरस्कार से सम्मानित किया गया। रामरत्न रसाल मिश्र द्वारा रचित काव्य पुस्तक 'बिखरे सुमन' का प्रकाशन सन् 1969 में हुआ। कवि-कथाकार अभिमन्यु अनत निस्संदेह मॉरिशसीय हिन्दी साहित्य के सर्वप्रमुख स्तम्भ हैं। डॉ.श्यामधर तिवारी लिखते हैं कि - ''अनत जी को मॉरिशस का कथा सम्राट एवं प्रेमचंद कहा जाता है। दूसरे शब्दों में अनत जी भारत में मॉरिशस के प्रेमचंद हैं। मॉरिशस के हिन्दी जगत में आपके पूर्ववर्ती साहित्यकार भी आपका सम्मान करते हैं, समवर्ती लोग आपकी साहित्यिक उत्कृष्टता-अग्रगण्यता को स्वीकार करते हैं तथा परवर्ती लोग आपके लेखन से प्रेरणा ग्रहण करते हैं।''[54]

अभिमन्यु अनत ने अपने एक साक्षात्कार में अपने लेखन की प्रेरणा के बारे में बताया कि ''यहाँ की प्रकृति और जनजीवन दोनों के बीच उठते तूफानों और ज्वारभाँटों ने मुझे लेखक बनाया। यहाँ के जन-जीवन के संघर्ष, उनकी यातनाओं और उनकी जीविका ने मुझे कलम उठाने की शक्ति प्रदान की है। विपरीत परिस्थितियों में अपने को टूटने से बचाये रखने के उनके संकल्प और सांस्कृतिक अस्मिता पर उनकी आस्था ने मुझे बल दिया है।''[55] अभिमन्यु अनत के अनेक कविता-पुस्तकें प्रकाशित हैं, यथा -

''1. नागफनी में उलझी साँसें	1972
2. कैक्टस के दाँत	1982
3. एक डायरी के बयान	1985
4. गुलमोहर खौल उठा	1994''[56] आदि

हिन्दी परिषद ने 1971 में मॉरिशस के ग्यारह (11) हिन्दी कवियों की पाँच-पाँच कविताओं का एक संकलन प्रकाशित किया था और अनत भी उन कवियों में एक थे और भी बहुत सारे कवियों ने मॉरिशस के हिन्दी काव्य साहित्य में अपना योगदान दिया है, जिनमें कुछेक नाम और कृतियाँ निम्नवत हैं - गिरिजानन गंगू की 'मॉरिशस में बाढ़' (1972), श्री जगलाल रामा की 'हृदय की निधि' (1972), कृष्ण बिहारी की 'मैं हूँ कलियुगी भगवान' (1972), लालमन बसराम अनुरागी द्वारा रचित 'रवि-अंशु' (1972), ज्ञानेश्वर रघुवीर की 'अलग बसेरा' जनार्दन कालीचरण की 'प्रथम-रश्मि' (1972), इन्द्रदेव भोला की 'वरदास' (1972), मुनीश्वरलाल चिन्तामणि द्वारा रचित 'नवनिर्माण की बेला' (1972), तथा 'ध्वनन' (1989), विष्णुदत्त मधु चन्द्र की 'हास्य वाटिका' (1973), चित्तरंजन ठाकुर की रचना 'मुहब्बत की राहों में' तथा परमेश्वर बिहारी शिवरत्न की रचना 'अभिशाप' आदि हैं।

मॉरिशस के स्वातन्त्र्योत्तर रचनाकारों में ठाकुर दत्त पाण्डेय जैसे अनेक नाम

प्रमुख हैं। ठाकुरदत्त के कई काव्य संग्रह प्रकाशित हुए। 'निशा' (1973), 'पुष्पांजलि' (1974), 'आलोक' (1977), 'प्रणाम' (1977), 'घूमता चक्र' (1989), आदि उनकी रचनाएँ हैं। हेमराज सुन्दर के कविता संग्रहों में 'चेतन' (1973), 'चुनौती' (1979) और 'अन्तर्ज्वाला' (1998) के नाम आते हैं।

ज्ञानदत्त धनुकचन्द का काव्य संग्रह 'काव्यकली' (1974), केश्ली कुमार रागपत का 'वीणावादिनी' (1974), राजवन्ती अयोध्या मातादीन नेहा का 'सिन्दूरी माँग' (1987), आदि उल्लेखनीय कविताओं के संग्रह हैं। इनमें विसंस्कृतीकरण की चिन्ता आध्यात्मिकता की भावना और भौतिक उन्नति की होड में फँसे, टूटते पारिवारिक सम्बन्ध और अर्थलोलुपता के अभिशप को मानवता की दिशा में सोच का केन्द्र बिन्दु माना गया है।

व्यक्तिगत काव्य संग्रहों के अतिरिक्त कई कवियों की रचनाओं को एक साथ संकलित करके कई सामूहिक काव्य संकलन भी निकाले गये। डॉ.श्यामधर तिवारी ने अपनी पुस्तक में कई दर्जनभर ऐसे कविता-संग्रहों की सूची प्रस्तुत की है -

''1. गाँधी स्मृति - 1969,

2. मॉरिशस की हिन्दी कविता - 1970

3. आकाश गंगा - 1970,

4. प्रवासी स्वर - 1971

5. सुरभित उद्यान - 1973,

6. नन्हे दीप - 1974

7. मॉरिशस की हिन्दी कविता - 1975,

8. तरंगिनी - 1976

9. विचारवीथिका - 1977,

10. हिन्दी-पथ-पराग - 1979

11. विश्व दर्पण - 1981,

12. आशादीप - 1983

13. मॉरिशस के नौ कवि - 1988''

इन सामूहिक काव्य संकलनों में विविध विषयों पर रची गयी कविताएँ हैं। गाँधी के प्रति श्रद्धा, जीवन मूल्य, आर्थिक सन्त्रास, सांस्कृतिक मूल्यों का ह्रास, हिन्दी अनुराग, स्वातन्त्र्योत्तर कालीन कटु अनुभव, पारिवारिक जीवन, राष्ट्रप्रेम, पूँजीवादी व्यवस्था, भ्रष्टाचार, अनास्था, मानवतावाद, क्षणभंगुर जीवन, देश की दुरावस्था व नपुंसक राजनीति के साथ-साथ वहाँ की बहुविध समस्याओं, आशाओं और आकांक्षाओं को स्वर प्रदान किया गया है। इन संग्रहों के कवियों में सोमदत्त बखोरी, अभिमन्यु अनत, इन्द्र देव भोला, मोहनलाल ब्रजमोहन, हरिनारायण सीता, वेणी माधव राम खेलावन, मधुकर, मोहनलाल हरदयाल, पूजानन्द नेमा, धर्मवीर घूरा, श्रीमती लखावती हरगोविन्द, पूरणलाल गुरविन, सूर्यदेव सिबस, महीदत्त नेमा, कुमारी शोभाराम रामगुलाम, कौलेश्वर, ठाकुरदत्त पाण्डेय, जनार्दन कालीचरण, मुनीश्वरलाल चिन्तामणि, शिवलाल मोती, सुनीति अलियार, टेकानन्द ठाकुर, हंसराज सुखलाल, विष्णुदत्त मधु, चन्दा, अमरीता मेवा, यशवन्त चूडामणि, सुरेन्द्रनाथ गोपाल, नरमदा धनुकचन्द, देव प्रकाश पति, भवेश हीरू, लोक प्रकाश हीरू, नारायण दत्त दसोई, महेश रामजियावन, देवनयन, हेमराज सुन्दर, सत्यानन्द फेंकू, रामदेव हेमराज, धनराज शम्भू, देवानन्द पूरण, हेमन्त लाल गणेश, विनय गुरिया, मुकेश जी बोध, बलवन्त सिंह नौबत सिंह, सुमति सन्धु आदि हैं।

कविता संग्रहों के अलावा मॉरिशसीय हिन्दी कवियों की कविताएँ भारतीय और मॉरिशसीय पत्र पत्रिकाओं में भी प्रकाशित होती रही हैं। मॉरिशस से प्रकाशित होनेवाली पत्र-पत्रिकाओं में 'दर्पण', 'अनुराग', 'आभा', 'वसंत', 'पंकज', 'इन्द्रधनुष' आदि हैं। भारतीय पत्रिकाओं में 'धर्मयुग', 'सारिका', 'आजकल', 'कदम्बिनी', 'दिनमान', 'साप्ताहिक हिन्दुस्तान', 'गगनांचल' आदि प्रमुख हैं। इन पत्र-पत्रिकाओं

में प्रकाशित होनेवालों में रेकानन्द ठाकुर, पं.दौलतराम शर्मा, कृष्णलाल बिहारी, ब्रजलाल रामदीन, पूजानन्द नेमा, ईश्वर सेन् जागासिंह आदि का नाम लिया जा सकता है।

मॉरिशसीय काव्य जगत में गीत-भजन-काव्य परम्परा का भी महत्वपूर्ण स्थान रहा है। बँधुआ मजदूरों के मॉरिशस प्रवास के समय से ही इसकी भजनों, लोकगीतों की अपनी परम्परा चली आ रही है। कवियों ने इसे 'पुष्पमाला', 'भजनमाला', 'भजन', 'भजनांजलि' आदि नाम से संबोधित किया है। ये धर्म भावना एवं लोकश्रुति और लोक परम्परा पर भी आधारित हैं। डॉ.श्यामसुन्दर तिवारी ने इसे इनसे सम्बन्धित एक तालिका इस प्रकार प्रस्तुत की है -

"1. लोकश्रुति पर आधारित-अलिखित लोक परम्परा के गीत।

2. पं.जदुनन्दन शर्मा - 'वंशी की तान', 'कृष्ण की वंशी', 'शादी के गीत', राष्ट्र गीत'।

3. मणिलाल कन्हैया ठाकुर - 'कोयल की कूक'।

4. पं.गया सिंह - 'वीर अमृत इतिहास की मंजरी'।

5. श्रीमती भगवती देवी - 'विवाह मंगल'।

6. ब्रजेन्द्र भगत मधुकर - 'मधुपर्क', 'मधुकरी', 'अमर संदेश', 'रणभेरी', 'मधु कलश', 'मधु बहार', 'स्वराज्य गीतांजलि', 'रसवन्ती', 'मधुमास', 'गुंजन', 'घुरहू मौसा क सनेस', 'मधु व्यंजना', 'मधु द्वीप' आदि।

7. पं.गोकर्ण रामगुलाम - 'गीतामला भाग-1'
'गीतमाला भाग-2

8. पं.ज्वाला प्रसाद शर्मा - देवेन्द्र भजनमाला(प्रथम पुष्प से पंचम पुष्प), नया तराना, मनभावना, नयी ज्योति, नवनिधि, गुंजन।

9. हरदेव सिननन - भजनांजलि, मधुर भजन माला, गीत सुषमा।

10. रुद्रदत्त पोखन - गीत गंगा, गीत सुधा, गीतामृत, गीत सुरस, गीत

उद्यान, गीतांजलि, गीत बहार, गीत उमंग, गीतोपदेश, भोजपुरी गीत, गीत सुमन, चेतावनी गीत, गीत अनुराग, गीत आनन्द, गीत सागर।

11. मुनीश्वरलाल चिन्तामणि - लोकप्रिय गीत।
12. मणिलाल सहदेव - मणि भजनमाला।
13. पाण्डो गोरापा - मनोरंजक भजन।
14. रामेश्वर महादेव - लघु गीतमाला।
15. विष्णु शर्मा - स्तुति-संग्रह।
16. पं.हरिप्रसाद रिसाल मिश्र - भजनमाला।
17. नारायणदत्त भीकी - लोकसंगीत माला।
18. सेवाशिविर मंडल - आश्रम भजनावली।
19. ज्ञानदत्त महावीर - ज्ञान नव भजन माला।
20. मोहनलाल मोहित - सत्संग सुमन।
21. हरिदत्त मुणिराम जी - गीतादर्श माला।
22. परमहंस विश्वनारायण - सन्त पुष्पमाला।
23. पं.बौद्धनाथ रामनाथ पांडे - 'जागरण गीत', सनातनी विवाह के गीत, मॉरिशस राष्ट्रगीत।
24. बेकल उत्साही - यह स्वदेश।
25. सुचीता रामदीन - मॉरिशस के भोजपुरी संस्कार गीत ('संस्कार मंजरी')
26. पत्र-पत्रिकाओं में प्रकाशित फुटकल गीत।'[58]

इन गीति भजन काव्यों का आरम्भ भारतीयों के मॉरिशस प्रवास के दौर से ही शुरू हुआ। यातना, संघर्ष और हर्ष के क्षणों में भारतीयों ने कजरी, विरहा, आल्हा, फगुवा, सोहर, भक्ति पद, तुकबन्दी गायन आदि के सहारे अपनी भावनाओं को वाणी प्रदान की। इन सब पर बम्बइया फिल्मी गीतों का प्रभाव भी देखने को मिलता है। आशा की जाती है कि गीतों, भजनों की यह परम्परा आगे भी मॉरिशसीय जनता की

आवश्यकताओं की पूर्ति करते हुए भविष्य में भी विकसित होगी।

मॉरिशसीय काव्य जगत की विशेषताओं में एक है खण्ड काव्य की रचना। ध्यान देने की बात है कि ये खण्डकाव्य वर्त्तमान समय के कथानक को ही ज्यादातर उपजीव्य बनाकर लिखे गये हैं। कुछ में कथा सूत्र मजबूती से बुने गये हैं तो कुछ में वे अत्यंत झीने हैं। कुछ खण्ड काव्यों के नाम इस प्रकार हैं -

''1. 'एक कहानी कुली की' - श्री बजेन्द्र कुमार भगत 'मधुकर' - 1968

2. 'मुडिया पहाड की आत्मकथा - श्री हरिनारायण सीता - 1968

3. 'दीपावली' - श्री ठाकुर प्रसाद मिश्र - 1968

4. 'हिन्दू-नेता' अज्ञेय नाम से (श्री ठाकुर प्रसाद मिश्र) - 1971''[59]

लेकिन शास्त्रीय ढंग से विवेचन करने पर निस्संकोच कहा जा सकता है कि इस विधा का मॉरिशस में कोई खास विकास नहीं हुआ है। अतः इस बात से अचरज नहीं होना चाहिए कि तीन दशकों में वहाँ कोई महत्वपूर्ण खण्ड काव्य नहीं लिखा जा सका है।

मॉरिशस में सृजित काव्य साहित्य के बारे में टिप्पणी करते हुए डॉ.लता कहती हैं कि - ''मॉरिशस की कविताएँ अपनी भूमि से जुड़े रहकर भी विश्व के वायु मण्डल की खबर रखती हैं। विश्वव्यापी समस्याओं में जीती, उनसे जूझती और उनकी कड़वाहट को महसूसते हुए रूप और सौन्दर्य की तलाश कर रही है। वे काल्पनिक और रोमानी संसार की खिलवाड़ नहीं हैं। इतनी जल्दी प्रौढ़ता की उपलब्धि उनकी निष्ठा और अटूट अध्यवसाय का ही परिणाम है। शिल्प और शैली के लिए वे भारत की ओर देखते हैं पर उसी स्तर पर निर्भर नहीं करते। यहीं उनकी पहचान शुरू होती है।''[60]

मॉरिशसीय कविताओं की भाषा-शैली, शिल्प पक्ष के विषय में डॉ. लता का कथन सत्य प्रतीत होता है। हिन्दी साहित्य, जो भारत में रचा जाता है, मॉरिशस उससे प्रभावित होता जरूर है। मॉरिशसवासी अंग्रेजी और फ्रेंच के माध्यम से हिन्दी

साहित्य की गतिविधियों की भी खबर रखते हैं, फलतः उनकी रचनाओं पर, क्षीणतर ही सही, उनका प्रभाव भी पड़ना स्वाभाविक है। मॉरिशस की अपनी सामाजिक, राजनीतिक और सांस्कृतिक समस्याएँ हैं जिनसे भी वहाँ के कवियों को जूझना पड़ता है। इस दृष्टि से वे मौलिक भावों और अनुभूतियों को हिन्दी कविता में शब्दायित करते हैं। उनकी काव्यात्मकता में वस्तु-रूप की मौलिकता भी झलकती है।

3.2.2.2 मॉरिशस का हिन्दी गद्य साहित्य :

मॉरिशस में पहली बार जब भारतीय मजदूरों का आगमन हुआ तो वे अपनी-अपनी क्षेत्रीय बोलियाँ बोलते थे। उस समय तक भारत में भी खड़ी बोली हिन्दी का वैसा विकास नहीं हुआ था जैसा आज दिखाई देता है। इस तरह वे भोजपुरी, ब्रज और अवधी जैसी बोलियो का ही व्यापक प्रयोग करते थे। मॉरिशस में खड़ी बोली हिन्दी और गद्य साहित्य के विकास के पीछे निम्न तीन महत्वपूर्ण कारण उल्लेखनीय कहे जा सकते हैं -

i. स्वामी दयानन्द सरस्वती के 'सत्यार्थ प्रकाश' का प्रचार।

ii. गाँधी का मॉरिशस आगमन और

iii. मॉरिशस में भारतीय भाषाओं में समाचार पत्रों का प्रकाशन।

भोलानाथ तिवारी नाम के सज्जन सन् 1897ई. में मॉरिशस आये थे। वे अपने साथ 'आर्य समाज' के संस्थापक स्वामी दयानन्द सरस्वती की विख्यात पुस्तक 'सत्यार्थ प्रकाश' लेकर आये थे। आर्य समाजी लोगों की संख्या प्रचुर होने के कारण यह पुस्तक उनके धर्म-प्रचार और उसके माध्यम से खड़ी बोली हिन्दी के भी प्रचार-प्रसार में सहायक बनी। डॉ.श्यामधर तिवारी मानते हैं कि - ''मॉरिशस में हिन्दी खडीबोली गद्य का प्रथम दर्शन 'सत्यार्थ प्रकाश' से हुआ।''[61] गाँधीजी का मॉरिशस आगमन वहाँ के इतिहास में एक महत्वपूर्ण घटना है। यह हिन्दी भाषा-साहित्य की दृष्टि से भी उल्लेखनीय है। डॉ. श्यामधर तिवारी पुनः लिखते हैं -

''खडी बोली हिन्दी गद्य की व्यापक जानकारी लोगों को सन् 1901 में गाँधीजी के व्याख्यानों एवं भाषणों से हुई। यद्यपि लोगों के लिए यह भाषा भोजपुरी से भिन्न थी, पर लोगों को इसे समझने में कठिनाई नहीं हुई। 1907 में मणिलाल डॉक्टर के मॉरिशस आगमन पर इस बोली को बल मिला। उन्होंने अपने अधिकतर भाषण और व्याख्यान इसी खड़ी बोली में प्रस्तुत किये। शनैः शनैः मॉरिशस में खडी बोली गद्य के मौखिक स्वरूप का गद्य लेखन के रूप में श्रीगणेश हुआ।''[62] इन्हीं मणिलाल डॉक्टर ने 'हिन्दुस्तानी' प्रेस की स्थापना की और सन् 1909 में पहली बार साप्ताहिक पत्रिका 'हिन्दुस्तानी' का अंग्रेजी और गुजराती में प्रकाशन किया। बाद में यह हिन्दी में भी प्रकाशित की गयी। प्रायः देखा गया है कि प्रेस की सुविधा से गद्य का विकास तीव्रगति से होता है। मॉरिशस में भी 'हिन्दुस्तानी' पत्रिका ने यह ऐतिहासिक कार्य किया। इसके आरंभिक अंक में 'होली' कविता के साथ 'सत्य होली' नामक गद्य लेख भी प्रकाशित किया गया था। ये दोनों हिन्दी साहित्य की रचना के प्रथम उपलब्ध उदाहरण हैं। मॉरिशस में हिन्दी गद्य के उद्‌भव-विकास और वहाँ के समाचार पत्रों के बारे में डॉ.कैलाश कुमारी सहाय लिखती हैं - ''मॉरिशस के समाचार-पत्रों से गद्य का आविर्भाव हुआ।''[63] इसके अलावा मधु प्रेस, आर्य वीर, सनातन धर्म मार्ग, जागृति, मॉरिशस मित्र, मॉरिशस आर्य पत्रिका, मॉरिशस इण्डियन टाइम्स और सनातन धर्मांक आदि पत्र-पत्रिकाएँ द्वितीय और तृतीय दशक में प्रकाशित हुई। कुछ स्वतन्त्रतापूर्व प्रकाशित साहित्योन्मुख पत्रिकाओं में दुर्गा, मासिक चिट्‌ठी, बालसखा, अनुरागी आदि आती हैं।

स्वातन्त्र्योत्तर साहित्यिक पत्रिकाओं के विषय में श्यामधर तिवारी का मानना है कि इनसे मॉरिशस में हिन्दी गद्य के विकसित होने में पर्याप्त सहायता मिली - ''स्वातंत्र्योत्तर काल में आकर अनुराग, आभा, दर्पण, वसंत, इन्द्रधनुष आदि साहित्यिक पत्र-पत्रिकाओं के साथ आर्योदय, हमारा देश, स्वदेश आदि पत्र-पत्रिकाओं ने गद्य लेखन को बढ़ावा दिया।''[64]

इस तरह अधिकांश उदीयमान लेखकों की रचनाओं का प्रकाशन इन पत्र-पत्रिकाओं में हुआ। इनकी सहायता से हिन्दी का स्वरूप भी निश्चित होता गया।

3.2.2.2.1मॉरिशस का हिन्दी कहानी साहित्य :

मॉरिशस का हिन्दी कहानी साहित्य बहुत ही पुराना है। जब से भारतीयों का आगमन इसी द्वीप पर हुआ तभी से मौखिक कहानियाँ उनके जीवन का हिस्सा बनी रहीं। बाद में भी यह लिखित-अलिखित किस्सागोई समय-समय पर भारत से मॉरिशस जाती रही। इन पारम्परिक और शिक्षा प्रद दादा दादी की कहानियों में रामायण, महाभारत, पुराणों के अतिरिक्त रानी सारंगा, उडन खरोला, हातिमताई आदि की होती थी। ऐसी कुछ और लोकप्रिय कहानियों के नाम इस प्रकार हैं - 'कुँवर विजय माल', 'बहुत दिन हुए', 'रानी सारंग', 'हँसता पान', 'हँसता ठग', 'खोज जिरान्ते राकस भइसा आँगने में ठाड', 'उडन घू खरोला', 'दुलारी बदन', 'सोनवा रानी', 'तेली का बेटा', 'सबुर राजा', 'काली चिडिया', 'लाल पर', 'अनार कली' आदि। चेपुराली कहानियाँ घर-घर रात्रि को सुनाई जाती थी।'[65]

डॉ.हरदयाल, मॉरिशस की प्रथम लिखित हिन्दी कहानी वली मुहम्मद की 'अनबोली चिड़िया' को मानते हैं जो सन् 1922 में प्रकाशित हुई थी, परन्तु उन्होंने इस कहानी का स्रोत नहीं बताया। डॉ. वीरसेन जागासिंह एवं डॉ.मुनीश्वर लाल चिन्तामणि ने सनातन धर्मांक में 'इन्दो' (1933) कहानी को मॉरिशस की प्रथम हिन्दी कहानी माना है।

इस तरह 'सनातन धर्मांक' के तीन अंकों में प्रकाशित पं.तारकेश्वरनाथ चतुर्वेदी द्वारा लिखित उक्त कहानी, कला पक्ष की अपनी सीमाओं के बावजूद मॉरिशस की पहली हिन्दी कहानी मानी जा सकती है। मॉरिशसीय हिन्दी साहित्य की सबसे विकसित विधा कहानी है। मॉरिशस के स्वातंत्र्योत्तर हिन्दी कहानी लेखन के विकास का सर्वाधिक महत्वपूर्ण समय आजादी के प्रथम दशक को माना जा

सकता है। इस अवधि में अधिकाधिक संख्या में कहानियाँ लिखी गयी हैं। लेकिन कहानियों के उतने संग्रह प्रकाशित नहीं हुए जितनी विभिन्न पत्र-पत्रिकाओं में कहानियाँ छप चुकी हैं। इन पत्रिकाओं में अनुराग, वसंत, दर्पण, आभा, हमारा देश, निर्माण, प्रभात, रणभेरी और त्रिवेणी आदि प्रमुख हैं।

कुछ भारतीय पत्रिकाओं जैसे - साप्ताहिक नवनीत, रानी, सुषमा, सारिका, सरिता, कल्पना, कहानी, बाल भारती, साप्ताहिक, हिन्दुस्तान, दिनमान, धर्मयुग, आजकल, कादम्बिनी और अक्षर माधुरी आदि में भी छपीं। मॉरिशस में अच्छी खासी संख्या में नये-पुराने कथाकार हैं जिन्होंने कहानियों के अनेक संग्रह प्रकाशित किये हैं। कतिपय संग्रहों के नाम इस प्रकार हैं : '' 'नये अंकुर'- सं.धर्मवीर घूरा (1967), 'नई कहानियाँ' - आलीमान ईश्वर दत्त (1968), 'एक सपना' - ईश्वरचन्द गंगाराम (1968), 'सागर पार' - दीपचन्द विहार (1972), 'चिराग और तूफान' - प्रेमचंद मूली (1972), 'दो शरीर एक आत्मा' - सुनीति आलियार (1973), 'नन्हे द्वीप' - यशवंत लाल यूणामणि (सं) (1974), 'इन्सान और मशीन' - अभिमन्यु अनत (1976), 'खामोशी के चीत्कार' - अभिमन्यु अनत (1976), 'परख' - बृजलाल रमादीन (1976), 'सुरभित उद्यान' - एम. चिन्ताणि (सं) (1973), 'मॉरिशस की हिन्दी कहानी' - अभिमन्यु अनत (1976), 'स्वर्ग में क्या रखा है' - दीपचन्द्र विहारी (1978), 'वह बीच का आदमी' - अभिमन्यु अनत (सं) (1981), 'मिनिस्टर' - भानुमति नागदान (1981), 'मॉरिशसीय हिन्दी कहानियाँ' - अभिमन्यु अनत (सं) (1987), 'एक थाली समुन्दर' - अभिमन्यु अनं (सं) (1978), 'मॉरिशस की हिन्दी कहानियाँ' - राजेन्द्र अरुण (सं) (1989), 'सैलाबों के बीच' - डॉ.वी.जागासिंह, 'मॉरिशस की प्रतिनिधि हिन्दी कहानियाँ' - डॉ. शशि प्रभा श्रीवास्तव (सं), 'मॉरिशस की हिन्दी कहानियाँ और समीक्षा' - डॉ.शशि प्रभा श्रीवास्तव (सं), 'नया सफर सहने का' - पूजानन्द नेमा (1992), 'त्रिकोण का

केन्द्र' - डॉ.बीरसेन जागासिंह (1995), 'विषमंथन' - रामदेव धुरंधर (1995)''[६६]

मॉरिशसीय कहानीकारों की भी लंबी सूची है। जयनारायण राय, सूर्यप्रसाद मंगर भगत, सोमदत्त बखोरी, अभिमन्यु अनत, रामदेव धुरंधर, ईश्वर जागासिंह, भानुमति नागदान, पूजानन्द नेमा, हरिनारायण महवीर, वेणीमाधव रामखेलावन, दामोदर सोमोरी, जनार्दन कालीचरण, दीपचन्द बिहारी, सोनलाल नेमधारी, नारायणपत देसाई, जगतलाल रामा, सदासिंह अस्ताना, महेश रामजियावन, इन्द्रदेव भोला मुनीश्वर लाल चिन्तामणि, कुमारी शोभना दशरथ, जगमोहन कुमारी, कृष्णलाल बिहारी, सत्यवान पिरथी, केवदत्त चिन्तामणि, लालदेव अंचराज, प्रह्लाद रामशरण, राजेन्द्र अरुण, श्री दिनमान मोहित, धर्मवीर घूरा शास्त्री, दानीश्वर शाम, वृजलाल रमादीन 'करुण', सुरेश सोमारू, मोहनलाल वृजमोहन, अजय मांगरा लालमन वसराम, प्रीतम भन्दू, अनीता अजायब, हरिनारायण सीता, हीरालाल, लीलाधर आनन्द देवी, सकीनाखोदाबरूस, पुण्याबम्मा, मोहनलाल दयाल, हेमराज सुन्दर, साहेबा बीबी कर्जली, लक्ष्मी प्रसाद रामयाद, लोचन विदेशी, जय जीऊत, ठाकुरदत्त पाण्डेय आदि।''[६७]

कथा संयोजन की दृष्टि से कुछेक कहानीकार अत्यन्त सजग रहे हैं। दीपचन्द बिहारी का नाम ऐसे लेखकों में लिया जाना चाहिए। इन कहानियों में कथानक के विषय पर्याप्त भिन्नता लिए हुए हैं। मॉरिशस को 1968 में जिस स्वाधीनता की प्राप्ति हुई, उसमें हिन्दी संघर्ष का माध्यम रही थी। इन सबका वर्णन कहानियों में मिलता है। इन कहानियों में वैज्ञानिक युग की यांत्रिकता और अमानवीयता के दुःख का रोना भी है साथ ही ''राजनीति,अवसरवादिता, युवा वर्ग का असंतोष, किशोर मन की समस्या, विज्ञान जन्य आतंक, ऐतिहासिक सन्दर्भ और स्वातन्त्र्य-चेतना जन्य अधिकारों की माँग से जुड़े हुए प्रसंग हैं।''[६८] कहानी के अन्य विषयों में जीवन मूल्य, भारतीय संस्कार, नारी समस्या, शहरी और ग्रामीण संस्कार, वेश्यावृत्ति, बेकारी, महँगाई, राजनीतिक भ्रष्टाचार, अजनबीपन, सामाजिक-

पारिवारिक सम्बन्धों में दरार, विवाह संस्था की असफलता, नारी-पुरुष- मनोविज्ञान, प्रेम विवाह, आशा-निराशा, मजदूर समस्या, अभाव और शोषण, नव चेतना, हक की लड़ाई, पर्यटन, भाषाई भेद, देश की सामयिक, आर्थिक, राजनीतिक, सांस्कृतिक और सामाजिक दशा आदि हैं।

प्रारम्भ में भावुकता से ओतप्रोत होने के बावजूद भी कहानियाँ उत्तरोत्तर प्रौढ़ और तथ्यात्मक होती गयी हैं। इनमें निम्न, मध्य और उच्च सामाजिक सभी वर्गों का वर्णन हुआ है। शिक्षित-अशिक्षित, ग्रामीण व शहरी मजदूर और नारी-पुरुष आदि सभी वर्गों को आधार बनाकर कहानियों की रचना की गयी है। राजनीतिज्ञों की आपसी मिलीभगत, नौकरशाहों की घूसखोरी, धार्मिक ठेकेदारों का नंगापन और सामाजिक मूल्यों में गिरावट को विस्तृत फलक पर चित्रित किया गया है।

मॉरिशसीय कहानीकारों पर अनेक भारतीय लेखकों जैसे शरतचन्द्र, प्रेमचन्द, फणीश्वरनाथ 'रेणु', कमलेश्वर आदि का प्रभाव भी देखने को मिलता है। समस्याओं का कोई निर्धारित सीमा या देश नहीं होता। इसीलिए कई समस्याओं की समानता भारतीय जीवन की समस्याओं से भी की जा सकती है। बहुभाषिक और बहुसंस्कृतिवादी देश होने के कारण और फ्रेंच तथा अंग्रेजी भाषा-साहित्य से भली-भाँति परिचित होने के कारण मॉरिशसीय कहानीकारों पर यूरोपीय सभ्यता का भी प्रभाव देखने को मिलता है। परन्तु अधिकांश कहानियों के पात्रों के नाम, सामाजिक धरातल, भाषा-संस्कृति, समस्याएँ आदि भारतीय चरित्रों से सम्पूर्ण समानता रखते नजर आते हैं।

मॉरिशसीय कहानीकारों की भाषा में भोजपुरी शब्दों का मिश्रण नजर आता है। जगह-जगह पर अंग्रेजी, फ्रेंच और क्रियोल के कुछ शब्द भी मिलते हैं। कहानी के पात्र अपनी पृष्ठभूमि के अनुकूल भाषा का प्रयोग करते हैं। कुल मिलाकर कहानी लेखन विकासशील है। यह प्रतिक्रियावादी नहीं मालूम पड़ता। भावुक प्रसंगों के वर्णन में भाषा की सटीकता देखने को मिलती है। मॉरिशस में पुरुषों से कम संख्या

में स्त्री लेखिकाओं ने लेखन कार्य किया है। भाव पक्ष में जितनी विविधता और प्रौढ़ता देखने को मिलती है, वह बात कला पक्ष में नहीं है। यह बात प्रारम्भिक संग्रहों में खटकने की हद तक है। अभिमन्यु अनत जैसे कुछेक कहानीकारों की कहानियों में भाव-बोध एवं कथ्य, शिल्प दोनों की चुस्ती और प्रखरता देखने को मिलती है।

मॉरिशसीय हिन्दी कहानियाँ तत्कालीन युगबोध को सहज, स्वाभाविक, सशक्त और यथार्थ रूप में अभिव्यक्त करती हैं। कहानियाँ यथार्थवादी हैं और कहानीकारों का आत्मविश्वास सराहनीय है। आज अनेक कहानीकार इस विधा में अपना योगदान दे रहे हैं। पुष्पा बम्मा, रामदेव धुरंधर, पूजानंद नेमा, मुकेश जी बोध, हेमराज सुन्दर, ईश्वर जागासिंह, जय जीऊत आदि नए कहानीकार कहानी की दिशा को आगे विकास के मार्ग पर ले जाने के लिए दृढ़ प्रतीत होते हैं। मॉरिशस में हिन्दी में रचना की दृष्टि से यह विधा फ़िलहाल सर्वाधिक संभावनाशील जान पड़ती है।

3.2.2.2.2 मॉरिशस का हिन्दी उपन्यास साहित्य :

'उपन्यास' लेखन मॉरिशसीय हिन्दी साहित्य की अपेक्षाकृत नवीन विधा है। इसके द्वारा हमें मॉरिशस के लोक जीवन और वहाँ की सामासिक संस्कृति की व्यापक जानकारी मिलती है। मॉरिशस की उपन्यास विधा पर दृष्टिपात करते हुए डॉ.श्यामधर तिवारी उपन्यासों के महत्व के बारे में लिखते हैं - ''उपन्यास विधा का महत्व अत्यन्त व्यापक है। इसकी व्यापक परिधि में जीवन की छोटी बड़ी घटनाएँ, सामाजिक जीवन की परिवर्तित हुई मानसिकता, चारित्रिक अन्तर्द्वन्द्व, मानवीय मूल्यों एवं उसकी विविध समस्याओं की सशक्त अभिव्यक्ति होती है। चूँकि इस विधा का फलक विस्तृत होता है, इसलिए इसके व्यापक कलेवर में जीवन के बहुविधि उद्देश्य-सन्देश स्वतः स्फूर्त हो उठते हैं।''[69]

विद्वानों, समीक्षकों और शोधार्थियों के मत वैविध्य के बावजूद अधिकांश ने चालीस पृष्ठों में प्रकाशित श्री कृष्ण बिहारी की कथा रचना 'पहला कदम' को ही

मॉरिशस का प्रथम हिन्दी उपन्यास माना है। इसका प्रकाशन सन् 1960 में हुआ। कुछ लोग इसे लघु उपन्यास मानते हैं। यह स्मृति के आधार पर आत्मकथा शैली में रचित है।

मॉरिशस में हिन्दी उपन्यासों की रचना का संसार बहुत बड़ा नहीं है। जो भी है उसका अधिकांश हिस्सा अभिमन्यु अनत के रचना जगत में सिमट आता है। "अभिमन्यु अनत ने सन् 1996 तक तेईस (23) उपन्यासों की रचना की। वास्तविक रूप से उपन्यास रचना का सूत्रपात उनकी प्रथम औपन्यासिक रचना 'और नदी बहती रही' से ही प्रारम्भ होता है। उनकी औपन्यासिक कृतियों का क्रमवार वर्णन इस प्रकार देखा जा सकता है - 'और नदी बहती रही' (1970), 'आन्दोलन' (1971), 'एक बीघा प्यार' (1972), 'जम गया सूरज' (1973), 'तीसरे किनारे पर' (1973), 'चौथा प्राणी' (1977), 'लाल पसीना' (1977), 'तपती दोपहरी' (1977), 'कुहारने का दायरा' (1978), 'शेफाली' (1979), 'हडताल कब होगी' (1979), 'चुन-चुन-चुनाव' (1981), 'अपनी ही तलाश' (1981), 'पर पगडंडी नहीं मरती' (1983), 'अपनी अपनी सीमा' (1983), 'गाँधीजी बोले थे' (1983), 'मार्क ट्वेन का स्वर्ग' (1986), 'फैसला आपका' (1986), 'गुड़िया पहाड बोल उठा' (1987), 'शब्द मंत्र' (1989), 'अतिचित्रित' (1990), 'और पसीना बहता रहा' (1993), 'लहरों की बेटी' (1996)"[70]

उन्होंने एक बाल उपन्यास 'जयगाँव का बहादुर' लिखा है। शिल्प व कला की दृष्टि से वे मॉरिशस के सबसे प्रौढ रचनाकार हैं। कथा वस्तु, चरित्र चित्रण, संवाद योजना, देश काल या वातावरण सम्बन्धी योजना, भाषा शैली तथा उद्देश्य आदि सभी दृष्टि से वे मॉरिशसीय हिन्दी साहित्य के महत्वपूर्ण कथाकार हैं। मॉरिशस समाज के विविध विषयों एवं रचनाओं प्रतिफलन उनके उपन्यासों में हुआ है। अपनी पहली औपन्यासिक रचना की प्रेरणा के बारे में अभिमन्यु अनत का मानना है - "मेरी प्रेरणा हमेशा मेरे अपने इर्द-गिर्द के दुख-दर्द के बीच से आती है। इस

प्रेरणा की मानसिक यातना ने ही मुझे उपन्यास लेखन की ओर प्रवृत्त किया और उसी का फल है यह मेरा पहला उपन्यास 'और नदी बहती रही।'"[7]

अभिमन्यु अनत के अनन्तर अन्य मॉरिशसीय उपन्यास लेखकों में रामदेव धुरंधर का नाम भी चर्चित हुआ है। सन् 1990 तक उनके पाँच उपन्यास प्रकाशित हुए हैं - 'सहमे हुए सच' (1980), 'चेहरों का आदमी' (1981), 'छोटी मछली बड़ी मछली' (1983), 'पूछो इस माटी से' (1986) और 'बनते बिगडते रिश्ते' (1990)।

अन्य महत्वपूर्ण मॉरिशसीय उपन्यासों में वासुदेव विष्णुदयाल का लघु उपन्यास 'रूप किशोर और सुजाता' (1962 से 66 तक 'जमाना' पत्रिका में प्रकाशित) दीपचन्द बिहारी का 'मसीहे नर्क जीते हैं' (1980), विष्णु दत्त मधु की 'फट गयी धरती' (1975), वेणी माधव रामखेलावन का 'अमर प्रेम' (1985), 'आनन्द देवी का 'कसूर किसका' (1985), अस्ताना सदा सिंह का 'मांसभक्षी' (1986), हीरा लाल जूगडी का 'सगाई' (1988) आदि हैं।

अन्य भाषाओं के भी कुछेक उपन्यास हिन्दी में अनूदित किये गये। ये उपन्यास विशेषकर फ्रेंच और अंग्रेजी भाषा से हिन्दी में अनूदित हुए। प्रसिद्ध फ्रेंच उपन्यासकार वाल्तेयर के 'कान्दीद' का हिन्दी में 'कान्दीद' नाम से अनुवाद ब्रजनाथ माधव वाजपेयी द्वारा सन् 1975 में किया गया। 'पॉल एण्ड वर्जिनी' नाम से प्रो.विष्णु दयाल ने सन् 1963 में 'वेर्नार्दे-से-प्येंर' के फ्रेंच उपन्यास 'पॉल एण्ड वर्जिनी' का अनुवाद किया। अंग्रेजी के 'जार्ज' उपन्यास का अनुवाद भी प्रो.विष्णु दयाल ने इसी नाम से सन् 1968 में किया। प्रह्लाद राम शरण का उपन्यास 'अमर प्रेम' भी 'पॉल एण्ड वर्जिनी' का ही अनुवाद है।

मॉरिशस में लिखित हिन्दी उपन्यासों की कथावस्तु में पर्याप्त विविधता मिलती है। अभिमन्यु अनत जिन समस्याओं का मुख्य रूप से वर्णन करते हैं उन्हें

इस प्रकार देखा जा सकता है - आजादी के बाद मूल्यों का हनन, राजनीतिक वेश्यावृत्ति, उसका छलाव और ऊब, भ्रष्टाचार, आदमी-आदमी के बीच बढ़ता चला जा रहा अन्तर, रिश्तों का टूटना, विसंस्कृतीकरण, घुटन, फिजूलखर्ची, दूषित भाषा नीति, महँगाई, जातिपाँति का कुचक्र, पूँजीपति देशों के प्रयोजन भरे सहयोग, बेकारी, हताशा, अधिकारों का हनन, अवमूल्यन, भाई-भतीजावाद, मंत्रियों की यात्राएँ, आजादी, आजादी के बाद की विषमताओं, असंगतियों, व्यथाओं की कहानी। ये उपन्यास मुख्य रूप से सामाजिक, राजनीतिक, ऐतिहासिक, विचार प्रधान और मनोवैज्ञानिक उपन्यासों के अन्तर्गत विवेचित किए जा सकते हैं।

उपन्यास साहित्य के कथानकों पर दृष्टिपात करने पर हमें ऐतिहासिकता के पीड़ा दायक स्वर, मॉरिशस और भारतीय संस्कृति, धार्मिकता, सामाजिक रीति-रिवाज, अन्धविश्वास, विसंस्कृतीकरण की समस्या के कारण बिगड़ता असंतुलित समाज, पर्यटन, मजदूरों-किसानों की स्थिति, नशाखोरी, घुडदौड, मॉरिशसीय तूफ़ान, मॉरिशसीय नारी के विविध रूप, यौन शोषण, वेश्यावृत्ति, तस्करी, राजनीतिक परिदृश्य, मॉरिशसीय जीवन पर आँधी का प्रभाव, युवा असंतोष, सरकारी तंत्र, आम जन-जीवन, साम्प्रदायिक सद्भाव, ईसाईकरण, हिन्दी की दशा, प्रकृति की खूबसूरती, प्रेम निरूपण, महँगाई, रंगभेद, नैतिक मूल्य हीनता, पुरानी और नई पीढ़ी के मध्य सोच का अन्तर, भारत भावना, आदर्शवाद, वैचारिक प्रश्नों की भरमार, उपभोक्तावादी संस्कृति, प्रदर्शन-प्रवृत्ति, मशीनी जिन्दगी, आर्थिक विपन्नता आदि के व्यापक एवं प्रखर रूप से वर्णन मिलता है।

स्वाधीनता से पूर्व और बाद के देश काल और वातावरण के सहारे सटीक भाषा प्रयोग द्वारा विविध शैलियों में सुनियोजित रूप में कथानक चरित्रों को अभिव्यक्ति प्रदान की गई है। इस तरह उपन्यास साहित्य अपनी यात्रा में प्रौढ़ता की ओर अग्रसर है।

3.2.2.2.3 मॉरिशसीय हिन्दी साहित्य की अन्य विधाएँ :

मॉरिशसीय हिन्दी साहित्य की अन्य विधाओं में नाटक, एकांकी, निबन्ध, जीवनी और हिन्दी आलोचना आदि को लिया जा सकता है।

मॉरिशस में नाटक के रूप में 'रामलीला' या 'रासलीला' जैसी चीज़ों का आरम्भ भारतीयों के प्रवास के समय से ही हुआ था, जिनका पाठ, गायन और मंचन लोग करते थे। पौराणिक आख्यान ही वहाँ के नाट्य कर्म का उद्‌भव माने जा सकते हैं। बाद में पारसी व्यावसायिक थियेटर कम्पनियों के मनोरंजन से भरपूर नाटकों के वहाँ प्रदर्शन हुए। ऐसे नाट्य मंचन की परम्परा के बाद रेडियो ने हिन्दी साहित्यिक नाट्य लेखन को बढ़ावा दिया। आगे चलकर दूरदर्शन एवं सरकारी तथा गैर सरकारी संस्थाओं ने भी इस कार्य में पूरा सहयोग दिया।

श्री जय नारायण द्वारा लिखित नाटक 'जीवन संगिनी' (1941) को मॉरिशस का प्रथम हिन्दी नाटक माना जाता है। डॉ. श्यामधर तिवारी के अनुसार "मनोरंजन और व्यावसायिक स्तर से परे, मॉरिशसीय समाज की समस्याओं से सम्पृक्त 'जीवन संगिनी' नाटक मॉरिशस की धरती पर लिखा गया प्रथम हिन्दी नाटक है।"[72] अभिमन्यु अनत के 'विरोध' (1977), 'तीन दृश्य' (1981), 'गूँगा इतिहास' (1985), 'रोक दो कान्हा' (1986) और 'भारत सम भाई' (1990), आस्तानन्द सदासिंह के 'आवाज' (1977), 'तू-तू' (1979) और 'थूक दिया भविष्य पर' (1981), आदि मॉरिशस के चर्चित नाटकों में हैं। हालाँकि नाटकों के लेखन में निरन्तरता का काल सन् 1960 के आसपास ही है, परन्तु इसके मंचन का इतिहास उतना ही पुराना है जितना भारतीयों के वहाँ जाने का दिन।

एकांकी लेखन भी नाटकों के साथ-साथ ही चला और दोनों का काल प्रायः समान है। ब्रजेन्द्र भगत मधुकर द्वारा रचित एकांकी 'आदर्श बेटी' (1951), को प्रथम एकांकी संग्रह माना जाता है। श्री मधुकर ने 'स्वतन्त्रता का सुप्रभात' (1953),

नामक दूसरे एकांकी संग्रह की भी रचना की। श्री ठाकुर दत्त के पाँच एकांकियों और एक प्रहसन के संग्रह का नाम 'पाँच एकांकी एक सपना' (1972) है। हीरालाल लीलाधर के संग्रह 'अनोखे अतिथि' (1974) और 'असहाय का सहारा' (1974) है। विभिन्न लेखकों के एक समवत संग्रह का नाम 'सात रंग एकांकी' (1986) है। श्री महेश रामजियाबन ने इसका संकलन किया है। अभिमन्यु का एकांकी संग्रह 'मरीशा गवाही देना' (1983) है। कुछ अन्य महत्वपूर्ण एकांकीकारों में अस्तानन्द सदासिंह, भानुमति नागदान, कृष्णलाल बिहारी, मुनीश्वर लाल चिन्तामणि, सोमदत्त बखोरी, रामदेव धुरंधर, लालदेव विकारी, ज्ञानेश्वर रघुवीर, धननारायण जीऊत, धनराजशम्भू, मधुकर एरण्डे और केश्ली कुमारी रागपत आदि प्रमुख हैं।

निबन्ध साहित्य की शुरुआत लिखित साहित्य की शुरुआत से मानी जा सकती है। सन् 1913 में 'हिन्दुस्तानी' में छपे प्रथम लेख 'सत्य होली' से लेकर आज तक का 'एक लम्बा सफर' निबन्ध साहित्य ने पार किया। ''हिन्दुस्तानी पत्रिका के अतिरिक्त 'मॉरिशस आर्य पत्रिका' (1911), 'मॉरिशस इण्डियन टाइम्स' (1920), 'मॉरिशस मित्र' (1924) आदि पत्रिकाओं में समसामयिक सामाजिक, राजनैतिक, धार्मिक-सांस्कृतिक आदि विषयों पर लेख निकलते थे। इस विधा में पण्डित रामवध का योगदान अविस्मरणीय है।''[73]

शुद्ध निबन्ध रचनाकार के रूप में सर्वाधिक प्रसिद्धि पं.वासुदेव विष्णुदयाल को प्राप्त हुई। उन्होंने ग्यारह निबन्ध संग्रह दिये हैं। उनमें से अनेक निम्नलिखित संकलनों में संग्रहीत हैं - 'कुछ महत्वपूर्ण गन्थ' (1956), 'विष्णुदयाल रचनावली' (1959), 'विष्णुदयाल लेखावली' (1965), 'वेद भगवान बोले' (1978), 'गीता का अद्‌भुत संदेश' (1978), 'वेद के अनुपम विचार' आदि। अन्य निबन्ध संग्रहों में पं.ठाकुर प्रसाद मिश्र का 'हिन्दू धर्म का उद्‌भव' (1969), राममणि त्रिपाठी की 'दिव्य दृष्टि' (1971), शिवलाल मोती का 'मोती निबन्ध माला' (1972), प्रसाद

गणपत का 'जीवन प्रदीप' (1966), अनिरुद्ध द्वारका का 'जगानी की जीत' (संवत् 2022), मुनीश्वर लाल चिन्तामणि का 'मॉरिशस का हिन्दी साहित्य तथा अन्य निबन्ध' (1972), डॉ.के हजारी सिंह का 'चिरंतन जीव मूल्य' (1978), बी.सोनू का 'त्रिवेणी से परी तालाब तक' (1978), हेमराज सुन्दर का 'ग्रेड्ज हिन्दी एसेज' (1982), अभिमन्यु अनत का 'आत्मविज्ञापन मंजूषा' (1987), और 'मॉरिशस : हिन्दी महासागर में एक नवोदित राष्ट्र' (1988), ठाकुर दत्त पाण्डेय का 'पंकज निबन्ध संग्रह' (1989) आदि प्रमुख हैं।

निबन्धों के प्रकाशन में पत्र-पत्रिकाओं का भी काफ़ी योगदान रहा। मॉरिशस का निबन्ध साहित्य एक विकसित विधा है। जीवन लेखन का कार्य भी वहाँ कम नहीं हुआ है। डॉ.श्यामधर तिवारी मानते हैं कि ''मॉरिशस के प्रथम जीवनीकार पं.आत्माराम विश्वनाथ थे और उनके चरित्र नायक थे - श्री मणिलाल डॉक्टर।''[74] तत्पश्चात् पं.आत्माराम द्वारा लिखित 'मॉरिशस के भारतीयों में नव-जीवन का प्रादुर्भाव' (1921-22), 'रानी लक्ष्मी बाई' (1928), तथा 'छत्रपति शिवाजी' (1928), की जीवनियाँ सामने आयीं। प्रो.वासुदेव विष्णु दयाल ने गाँधी और विनोबा के जीवन प्रसंगों को लेकर 'महात्मा और सन्त' (1955) लिखा। पंडित ब्रजनाथ माधव वाजपेयी ने 'पं.विष्णुदयाल : जीवन और कृतित्व' (1967) लिखा। टेकलाल गणेश ने 'डॉ.शिवसागर रामगुलाम' (1969) नाम से देश के महत्वपूर्ण राज नेता की जीवनी लिखी। श्री कृष्ण शर्मा और रामलखन शिवगोविन्द शर्मा ने भी 'डॉ.शिवसागर रामगुलाम' (1969) और 'नये मॉरिशस के निर्माता' (1975) जैसी पुस्तकें लिखीं। अभिमन्यु अनत ने 'जन आन्दोलन के प्रणेता प्रो.वासुदेव विष्णुदत्त' (1986) की जीवनी प्रकाशित करवायी। प्रह्लाद रामशरण द्वारा रचित 'मॉरिशस आर्य समाज के चमकते सितारे' (1987), उदयनारायण गंगू की 'एक समर्पित

जीवन : यज्ञमूर्ति पं.रामलगन रामस्वरूप (1988) और भारत कोड़िया की रचना 'मॉरिशस के आर्य समाज के उज्ज्वल रत्नः रामशरण मोती तथा वासुदेव विष्णुदयाल' (1990) आदि अन्य महत्वपूर्ण जीवनियाँ हैं।

उपरोक्त साहित्यिक विधाओं के साथ-साथ पत्र-पत्रिकाओं का विकास, बाल साहित्य का विकास, संस्मरण, यात्रा वृत्तांत, लोक साहित्य, साहित्य भेंटवार्ता, रिपोर्ताज, आत्मकथा, रेखाचित्र एवं आलोचना लेखन आदि के लिखित रूप भी मॉरिशस में विद्यमान हैं और विकास की दिशा में अग्रसर हैं।

* * *

संदर्भ सूची

1) प्रवासी भारतीयों की हिन्दी सेवा - डॉ. कैलाश कुमारी सहाय - पृ - 31

2) राजभाषा भारती - अप्रेल - जून 1995, पृ - 42.

3) मॉरिशस का हिन्दी कथा साहित्य (लाल पसीना के संदर्भ में) अप्रकाशित शोध ग्रन्थ - प्रेमचन्द्र, पृ - 16.

4) वहीं

5) वहीं

6) मॉरिशस में हिन्दी साहित्य का उद्‌भव और विकास - डॉ. श्याधर तिवारी - पृ - 14-15.

7) गगनांचल - मॉरिशस अंक, वर्ष 8,1985, पृ - 131.

8) राजभाषा भारती - अप्रेल - जून 1995, पृ - 42.

9) मॉरिशस का हिन्दी कथा साहित्य (लाल पसीना के संदर्भ में) अप्रकाशित शोध ग्रन्थ - प्रेमचन्द्र, पृ - 13.

10) प्रवासी भारतीयों की हिन्दी सेवा - डॉ. कैलाश कुमारी सहाय - पृ - 134.

11) वहीं, पृ - 149.

12) गगनांचल - मॉरिशस अंक, वर्ष 8,1985, पृ - 142.

13) विश्व में हिन्दी खण्ड-2 हरिबाबू कंसल, पृ - 213.

14) मॉरिशस में हिन्दी साहित्य का उद्‌भव और विकास - डॉ. श्याधर तिवारी - पृ - 46.

15) विश्व में हिन्दी खण्ड-1 हरिबाबू कंसल, पृ -51.

16) विश्व में हिन्दी खण्ड-2 हरिबाबू कंसल, पृ -214.

17) वहीं, पृ -217.

18) वहीं, पृ - 213.

19) वहीं, पृ - 233.

20) वहीं, पृ - 234.

21) स्मारिका, सातवाँ विश्व हिन्दी सम्मेलन, जून 2003, पृ -288.

22) वहीं, पृ -286.

23) वहीं, पृ -287.

24) विश्व में हिन्दी खण्ड-2 हरिबाबू कंसल, पृ -235.

25) मॉरिशस में हिन्दी साहित्य का उद्‌भव और विकास - डॉ. श्याधर तिवारी - पृ - 40.

26) वहीं

27) वसंत, जून 1991, पृ - 6.

28) मॉरिशस में हिन्दी साहित्य का उद्भव और विकास - डॉ. श्याधर तिवारी - पृ -49.

29) मॉरिशस का हिन्दी साहित्य - डॉ. लता,

30) वहीं, पृ - 16-17.

31) वहीं, पृ - 17.

32) गगनांचल - मॉरिशस अंक, वर्ष 8,1985, पृ -193.

33) वहीं

34) प्रवासी भारतीयों की हिन्दी सेवा - डॉ. कैलाश कुमारी सहाय - पृ -108.

35) वहीं

36) मॉरिशस का हिन्दी साहित्य - डॉ. लता, (पुस्तक के फ्लैप से उधृत)

37) वहीं, पृ - 17.

38) प्रवासी भारतीयों की हिन्दी सेवा - डॉ. कैलाश कुमारी सहाय, पृ - 134-135.

39) मॉरिशस का हिन्दी कथा साहित्य (लाल पसीना के संदर्भ में) अप्रकाशित शोध ग्रन्थ - प्रेमचन्द्र, पृ -24.

40) वहीं, पृ - 25 .

41) नया ज्ञानोदय - जनवरी 2004, पृ - 33.

42) वहीं, पृ - 37.

43) प्रवासी भारतीयों की हिन्दी सेवा - डॉ. कैलाश कुमारी सहाय, पृ -172.

44) मॉरिशस : हिन्द महासागर में एक नवोदित राष्ट्र - प्रह्लाद राम शरण - पृ - 86-87.

45) मॉरिशस में हिन्दी साहित्य का उद्भव और विकास - डॉ. श्याधर तिवारी - पृ - 47.

46) वहीं, पृ - 49.

47) वहीं , पृ - 52.

48) स्मारिका सातवाँ विश्व हिन्दी सम्मेलन, जून 2003, पृ - 280.

49) मॉरिशस में हिन्दी साहित्य का उद्भव और विकास - डॉ. श्याधर तिवारी - पृ - 55-56.

50) पंकज, सितंबर 1996, पृ - 21.

51) मॉरिशस में हिन्दी साहित्य का उद्भव और विकास - डॉ. श्याधर तिवारी - पृ - 75.

52) वहीं , पृ - 79.

53) प्रवासी भारतीयों की हिन्दी सेवा - डॉ. कैलाश कुमारी सहाय, पृ - 174.

54) मॉरिशस में हिन्दी साहित्य का उद्‌भव और विकास - डॉ. श्याधर तिवारी - पृ - 85.

55) अभिमन्यु अनत : एक बात चीत - डॉ. कमल किशोर गोयनका, पृ - 2.

56) मॉरिशस का हिन्दी कथा साहित्य(लाल पसीना के संदर्भ में) अप्रकाशित शोध ग्रन्थ - प्रेमचन्द्र, पृ -135.

57) मॉरिशस में हिन्दी साहित्य का उद्‌भव और विकास - डॉ. श्याधर तिबारी - पृ -100, 101.

58) वहीं, पृ - 112,113.

59) वहीं , पृ - 122.

60) मॉरिशस का हिन्दी साहित्य - डॉ. लता, पृ - 51.

61) मॉरिशस में हिन्दी साहित्य का उद्‌भव और विकास - डॉ. श्याधर तिवारी - पृ - 131.

62) वहीं

63) प्रवासी भारतीयों की हिन्दी सेवा - डॉ. कैलाश कुमारी सहाय, पृ - 176.

64) मॉरिशस में हिन्दी साहित्य का उद्‌भव और विकास - डॉ. श्याधर तिवारी - पृ -133.

65) वहीं, पृ - 178.

66) मॉरिशस का हिन्दी कथा साहित्य(लाल पसीना के संदर्भ में) अप्रकाशित शोध ग्रन्थ - प्रेमचन्द्र, पृ -37.

67) वहीं, पृ - 38.

68) मॉरिशस का हिन्दी साहित्य - डॉ. लता, पृ - 54.

69) मॉरिशस में हिन्दी साहित्य का उद्‌भव और विकास - डॉ. श्याधर तिवारी - पृ -136.

70) मॉरिशस का हिन्दी कथा साहित्य(लाल पसीना के संदर्भ में) अप्रकाशित शोध ग्रन्थ - प्रेमचन्द्र, पृ - 132,133.

71) अभिमन्यु अनत : एक बात चीत - डॉ. कमल किशोर गोयनका, पृ - 9.

72) मॉरिशस में हिन्दी साहित्य का उद्‌भव और विकास - डॉ. श्याधर तिवारी - पृ - 226.

73) वहीं, पृ - 281.

74) वहीं, पृ - 292.

चतुर्थ अध्याय

विश्व हिन्दी सम्मेलन और हिन्दी की अन्तर्राष्ट्रीयता

हिन्दी का अन्तर्राष्ट्रीय स्वरूप व्यापक है परन्तु यह मुखर रूप से उतना अस्तित्ववान और प्रचलित नहीं है जितना होना चाहिए। विराट् सम्मेलनों से देश या भाषा की राष्ट्रीय-अन्तर्राष्ट्रीय पहचान का दायरा विस्तृत और मजबूत होता है। विश्व हिन्दी सम्मेलन हिन्दी को अपनी पहचान मज़बूत करने के लिए न सिर्फ़ वैश्विक मंच प्रदान करता है बल्कि भारतीयता का प्रसार भी करता है। इससे हिन्दी सेवी, विचारक, हिन्दी साहित्यकार और भाषाविदों के मध्य आपसी संवाद भी कायम होता है।यह हिन्दी की प्रगति को एक नई ऊर्जा प्रदान करता है। अन्तर्राष्ट्रीय स्तर पर हिन्दी निरन्तर प्रगतिशील है। इसके रास्ते में अनेक समस्याएँ संभाव्य है। हिन्दी के सम्पूर्ण शीघ्र और सार्थक विकास के लिए इसके रास्ते में आने वाली समस्याएँ और उनके समाधान के उपाय ढूँढ़ने भी अपेक्षित हैं। विश्व मंच पर तत्सम्बन्धी समाज या उनके प्रतिनिधि से इसकी जानकारी प्रत्यक्ष रूप में प्राप्त होती है। इन सारी चीज़ों का विद्वतापूर्ण आकलन अथवा विश्लेषण हिन्दी की अन्तर्राष्ट्रीयता को सुदृढ़ करने की दिशा में सहायक होता है।

विश्व स्तर पर हिन्दी सम्मेलन के आयोजन से दो बातें साबित होती हैं। एक तो यह कि हिन्दी एक अन्तर्राष्ट्रीय भाषा है। दूसरी यह कि हिन्दी एक भारत जैसी विश्व के सबसे बड़े प्रजातंत्र की एक ऐसी विकासशील भाषा है, जो अपने महत्व को अन्तर्राष्ट्रीय मंच पर पूर्ण रूप से स्थापित करने की दिशा में प्रयत्नशील है। दोनों ही दृष्टियों से विश्व हिन्दी सम्मेलन हिन्दी भाषा और साहित्य की उपलब्धियों और संभावनाओं को ही प्रमाणित करते हैं। यह बात तो तय है कि विश्व हिन्दी सम्मेलन हिन्दी भाषा की अन्तर्राष्ट्रीयता, उपलब्धि, उसकी अपेक्षाओं और सीमाओं,

सम्भावनाओं को पहचानने पर प्रकाश डालते हैं। प्रयोग, आवश्यकता, आधुनिकता और वैज्ञानिकता की दृष्टि से यह बात और भी स्पष्ट हो जाती है कि इन सम्मेलनों के पीछे एक मजबूत आधार है। हिन्दी दुनिया भर में सर्वप्रायोगिक सार्वजनीन भाषाओं में एक है। अधिकाधिक प्रयोग के कारण ही हिन्दी आज सिर्फ हिन्दी भाषी क्षेत्रों तक सीमित न रहकर एक अरब की आबादी वाले देश भारत की राष्ट्रभाषा है। किसी न किसी रूप में संसार के करीब एक सौ बीस देशों में जानी-मानी जाती है।

अपनी अन्तर्राष्ट्रीयता के कारण ही आज तक भारत में तीन और विदेश में चार देशों में विश्व हिन्दी सम्मेलनों के कुल सात आयोजन किए जा चुके हैं। वैज्ञानिक भाषा एवं वैज्ञानिक उपादानों से लैस होकर यह आज कम्प्यूटर और इंटरनेट की भाषा बनकर उभर रही है। डॉ. आशा शुक्ल हिन्दी की अन्तर्राष्ट्रीयता के बारे में अपना विचार इस प्रकार प्रस्तुत करती हैं - "असल में, हिन्दी का स्वरूप जन्म से ही एक वैश्विक स्वरूप है। आज लगभग 20 देशों में भारतीय मूल के लोग रहते हैं। और लगभग 153 विश्वविद्यालयों में इस समय हिन्दी पढ़ाने की व्यवस्था है। हिन्दी का यह जो अन्तर्राष्ट्रीय स्वरूप उभर रहा है, वह आश्चर्यजनक रूप से चकित कर देने वाला है।"[1]

इस तरह विश्व के कई देशों में हिन्दी का कुछ-न-कुछ प्रयोग हो रहा है। अगर यही प्रयोग शिक्षण व्यवस्था, अर्थ व्यवस्था और संचार माध्यमों में धीरे-धीरे बढ़ता रहे तो वह दिन दूर नहीं कि अपनी वैज्ञानिक संरचनात्मकता के आधार पर हिन्दी निकट भविष्य में संयुक्त राष्ट्रसंघ में सर्वाधिक महत्व की भाषाओं में एक होकर आगे आए। भविष्य की हिन्दी या हिन्दी का भविष्य हिन्दी प्रेमियों, सम्बन्धित देशों और भारत के सम्मिलित प्रयास पर निर्भर करता है।

4.1 विश्व हिन्दी सम्मेलनों की आवश्यकता :

निस्संदेह आज हिन्दी अपने स्वरूप के दायरे को विस्तृत कर वैश्विक हो रही

है। विस्तार एक स्वाभाविक प्रक्रिया है। आज दुनिया के अनेकानेक देशों में हिन्दी भाषा और भाषा-भाषियों की पहुँच हो रही है। हिन्दी में साहित्यिक विकास, शिक्षण संस्थानों, विश्वविद्यालयों आदि में शोध स्तर पर इसका पठन-पाठन हिन्दी की प्रगति का सूचक है। परन्तु हिन्दी भाषा और साहित्य का वास्तविक वैश्विक स्तर आज भी अस्पष्ट ही है। इसके अपने कारण हैं। आज भी हिन्दी अपने लक्ष्य से दूर लगती है। निश्चित रूप से हिन्दी वालों की कुछ गलतियाँ या कमजोरियाँ भी इसके लिए जिम्मेदार हैं। विभिन्न देशों और शिक्षण संस्थानों से संबंधित हिन्दी का व्यवहार करने वाले लोगों में आपस में भी संवाद हीनता बनी रहती है। यह सोचनीय दशा है। विश्व हिन्दी सम्मेलन इस संवाद हीनता को तोड़ने में सहायक होते हैं। ये सम्मेलन हिन्दी प्रचार-प्रसार संबंधी अज्ञान, अबोधता, आशंकाओं, निराशाओं, आदि के सन्दर्भ में आशान्वित उत्तर तथा समाधान के विकल्प समझे जाते हैं। जब भी समुदाय या समाज किसी बात को लेकर हतोत्साहित होते हैं तो उनकी आपसी एकता ही उन्हें लड़ने का सामर्थ्य देती है।

ये विश्व हिन्दी सम्मेलन, नीति निर्धारण, विकल्प, निर्माण, विकास के सम्भावित रास्तों की खोज के साथ-साथ भारतीय सांस्कृतिक वैशिष्ट्य को अपेक्षित ऊर्जा और व्यापकता प्रदान करते हैं।

विश्व के स्तर पर व्यवहार में आने वाली भाषा के रूप में हिन्दी को देखने की माँग को दृष्टि में रखते हुए भी विश्व हिन्दी सम्मेलन की आवश्यकता का अनुभव किया गया। एक तरह से हिन्दी का वैश्विक प्रचार-प्रसार तथा हिन्दी से जुड़े लोगों को एकमंच देना विश्व हिन्दी सम्मेलनों का मूल ध्येय है।

'विश्व हिन्दी सम्मेलन' जैसे आयोजनों की अपनी वैश्विक गरिमा है। आज की भाषिक राजनीति' को देखते हुए हमें बाजारू राजनीति से ऊपर उठने की बात निश्चित करती होगी। आगे चलकर हिन्दी को भाषा की कठिन लड़ाई स्वयं लडनी है। इंग्लैण्ड को अब यह कहने और समझाने की आवश्यकता नहीं रही कि उसकी

भाषा को पढ़ने से हमें कौन-कौन से लाभ होने वाले हैं। हिन्दी को अपने देश में ही स्थापना के लिए जब जद्दो जहद से गुजरना पड रहा है। दूसरे देशों में मान्यता प्राप्त करने के लिए अभी भी हिन्दी को लम्बी संघर्ष-यात्रा तय करनी है।

ऐसे में हिन्दी की पक्षधरता में जब एक क़ाफ़िला इंग्लैण्ड, फीजी, सूरीनाम, ट्रिनिडाड, मॉरिशस या किसी भी दूरस्थ देश को पहुँचे तो उसकी आँखों के आगे वह अँधेरा आच्छादित रहेगा जो और किसी का अँधेरा न हो कर हिन्दी का अपना अँधेरा होगा। उस अंधेरे को चीरकर हिन्दी को प्रकाशमान करने का संकल्प निश्चित रूप से पहले स्थान पर हो। इस संकल्प से विश्व हिन्दी का मानचित्र स्पष्ट हो सकता है।

इस तरह ऐसे आयोजन निश्चित रूप से हिन्दी की वैश्विक स्थिति पर विचार के उपक्रम हैं। विश्व हिन्दी सम्मेलन हिन्दी की स्थितियों एवं परिस्थितियों का आकलन कर सकते हैं। साथ ही इस माध्यम से हम हिन्दी के वैश्विक स्वरूप का निर्धारण भी करते हैं। एक ऐसा आधार प्रदान कर सकते हैं, जिससे हिन्दी सम्बन्धी भारतीय वैश्विक नीति-निर्धारण में महत्वपूर्ण सहायता मिल सकती है।

4.2 विश्व हिन्दी सम्मेलन का इतिहास :

हिन्दी एक सरल, संस्कृत और समृद्ध भाषा है। इसका भाषिक और भौगोलिक क्षेत्र व्यापक और विस्तृत है। हिन्दी सिर्फ भारत में ही नहीं, अपितु संसार के अनेक देशों में लोकप्रिय भाषा है। उसे संसार के श्रेष्ठतम और समृद्ध भाषाओं में परिगणित किया जाता है। अन्तर्राष्ट्रीय धरातल पर पारस्परिक आदान-प्रदान के लिए हिन्दी एक सर्वथा सशक्त और सक्षम भाषा बनती जा रही है। अनेकानेक विदेशी हिन्दी विद्वान भी अनवरत रूप से हिन्दी साधना में संलग्न हैं। उनकी रचनाएँ भारत में और भारत से बाहर भी छपती, बिकती तथा पढ़ी जाती हैं। इस प्रकार हिन्दी की सेवा में अनेक पाश्चात्य भाषा वैज्ञानिकों, साहित्य प्रेमियों, शोध

कर्त्ताओं, पाठ्य पुस्तक निर्माताओं, वैयाकरणों और अनुवादकों का स्तरीय योगदान रहा है। हिन्दी भारतीय संस्कृति और सद्भावना का करनेवाली भाषा है। यह शिक्षा, मनोरंजन और खेल जगत की व्यापक माध्यम भाषा है। अपने सहज प्रवाह के कारण दुनिया भर में करोड़ों लोगों के मध्य सम्पर्क का काम करती है। हिन्दी के भूत, वर्तमान और भविष्य की वैश्विक स्थिति पर सम्पूर्ण विचार हेतु विश्व हिन्दी सम्मेलनों की श्रृंखला की शुरुआत हुई। सन् 1975 में प्रथम विश्व हिन्दी सम्मेलन का आयोजन किया गया। यह एक दूरगामी ऐतिहासिक कदम था। उसी श्रृंखला की कड़ियों के रूप में आज तक सात विश्व हिन्दी सम्मेलनों का आयोजन किया जा चुका है। क्रमवार रूप से इन सम्मेलनों से सम्बन्धित जानकारी प्राप्त की जा सकती है।

4.2.1 प्रथम विश्व हिन्दी सम्मेलन :

राष्ट्रभाषा प्रचार समिति, वर्धा के तत्त्वावधान में प्रथम विश्व हिन्दी सम्मेलन का आयोजन महाराष्ट्र के नागपुर शहर में हुआ था। यह सम्मेलन 10 जनवरी, 1975 से लेकर 12 जनवरी, तीन दिनों तक चला। सम्मेलन की अध्यक्षता तत्कालीन नवोदित राष्ट्र मॉरिशस के प्रधानमंत्री, सर शिवसागर रामगुलाम ने की थी। तत्कालीन भारतीय प्रधान मंत्री श्रीमती इंदिरा गाँधी ने इस सम्मेलन का उद्घाटन किया। स्वागताध्यक्ष महाराष्ट्र राज्य के मुख्यमंत्री श्री.वी.पी.नाइक थे। श्री अनन्त गोपाल शेबडे इसके महासचिव थे। भारतीय भाषाविदों, विद्वानों एवं लेखकों, प्रचारकों, कार्यकर्त्ताओं के साथ "विश्व भर के 30 देशों के लगभग 122 प्रतिनिधियों ने इसमें भाग लिया। ..... समारोह की अध्यक्षता करते हुए शिवसागर रामगुलाम ने कहा था कि हिन्दी भारत की राष्ट्रभाषा तो है, लेकिन हमारे लिए महत्व इस बात का है कि यह अन्तर्राष्ट्रीय भाषा है। मॉरिशस, गयाना, फीजी और अफ्रीका के कई देश यह मानते हैं कि भारत की राष्ट्रभाषा को अन्तर्राष्ट्रीय भाषा बनाने में उनका हाथ रहा है।"[2]

सम्मेलन में व्यापक रूप से हिन्दी की समस्याओं और उसकी अन्तर्राष्ट्रीय

स्थिति पर विचार विमर्श किया गया। गगनांचल के अक्तूबर-दिसंबर 1993 के अंक में डॉ.भक्तराम शर्मा लिखते हैं - ''हिन्दी की मूलभूत और व्यापक समस्याओं पर वैचारिक आदान-प्रदान का मंच प्रस्तुत करने हेतु सम्मेलन को सात विचार गोष्ठियों को निम्नलिखित तीन विषयों के अन्तर्गत विभाजित किया गया था -

1. हिन्दी की अन्तर्राष्ट्रीय स्थिति

2. विश्व मानव की चेतना, भारत और हिन्दी

3. आधुनिक युग और हिन्दी : आवश्यकताएँ और उपलब्धियाँ''[3]

इन तीनों विषयों के अन्तर्गत सात विचार गोष्ठियों में दुनिया भर के विद्वानों और प्रतिनिधियों ने भाग लिया जिनमें रूस के चेलीशेव, फीजी के श्री विवेकानन्द शर्मा, पं.जर्मनी के डॉ.लोहार लुत्से, गयाना के श्री रामलाल, सूरीनाम की श्रीमति कमला जगमोहन सिंह ट्रिनिडाड के शंभुनाथ कपिलदेव, केनाडा के डॉ.क्रिस्टोफर किंग अमेरिका की कु.कैरीन शोनर तथा कैम्ब्रिज (इंग्लैण्ड) के डॉ.मैक ग्रेगर ने हिस्सा लिया। इस सम्मेलन में लिए गए निर्णयों में तीन विशेष महत्वपूर्ण थे -

''1. संयुक्त राष्ट्र में हिन्दी को भी अधिकारिक भाषा के रूप में स्थान दिया जाए।

2. वर्धा में विश्व हिन्दी विद्या पीठ की स्थापना हो। और

3. विश्व हिन्दी सम्मेलन की उपलब्धियों को स्थायित्व प्रदान करने की दृष्टि से कोई ठोस योजना बनाई जाय ।''[4]

इस सम्मेलन के द्वारा एक ऐसी परम्परा की शुरुआत हुई जो निश्चित रूप में आने वाली पीढ़ी और हिन्दी के लिए एक प्रेरणा स्त्रोत का परिचायक बनी। यह एक महत्वपूर्ण और सफल आयोजन था। उल्लेखनीय है कि बाद में चलकर वर्धा में महात्मा गाँधी अन्तर्राष्ट्रीय विश्वविद्यालय की स्थापना हुई जिसका प्रथम कुलपति हिन्दी के विख्यात साहित्यकार अशोक वाजपेयी को बनाया गया।

4.2.2 द्वितीय विश्व हिन्दी सम्मेलन :

प्रथम विश्व हिन्दी सम्मेलन की सफलता, द्वितीय विश्व हिन्दी सम्मेलन के आयोजन की प्रेरणा और और शक्ति थी। नागपुर के प्रथम विश्व हिन्दी सम्मेलन ने प्रवासी भारतीयों, विशेषकर गिरमिटिया लोगों की प्रवास गाथा को पूरी दुनिया के सामने खोल कर रख दिया। उनके दासत्व संघर्ष और विकास की कहानी लोमहर्षक थी। दरअसल इन्हीं साधनहीन गिरमिटिया मजदूरों ने सैकड़ों वर्षों से हिन्दी की मशाल को अन्तर्राष्ट्रीय स्तर पर जलाए रखा है। इन देशों में मॉरिशस, फीजी, सूरीनाम आदि विशेष है। मगर मॉरिशस इनमें भी प्रमुख है। यह आज भी लघु भारत के नाम से विदित होता है। दूसरा विश्व हिन्दी सम्मेलन चार दिनों तक (28-31 अगस्त), सन् 1976 में महात्मा गाँधी संस्थान पोर्टलुई, मॉरिशस में हुआ। मॉरिशस के प्रधानमंत्री डॉ.सर शिवसागर रामगुलाम ने सम्मेलन का उद्‌घाटन किया। भारत के स्वास्थ्य एवं परिवार कल्याण मंत्री एवं भारतीय संस्कृति के प्रसिद्ध विद्वान डॉ.कर्णसिंह ने उद्‌घाटन समारोह की अध्यक्षता की। सम्मेलन के स्वाताध्यक्ष श्री दयानन्द वसन्त राय थे। इस सम्मेलन में मॉरिशस समेत भारत, इग्लैण्ड, जर्मनी, रूस, जाम्बिया, तंजानिया, मेडागास्कर, कीनिया, हंगरी, फ्रांस, स्वीडन आदि देशों के अनेक विद्वानों ने हिस्सा लिया। हरिबाबू कंसल के अनुसार ''भारत सरकार की ओर से 30 विद्वानों का एक सरकारी प्रतिनिधि मंडल भेजा गया था। इसके अतिरिक्त भारत के विभिन्न विश्वविद्यालयों, स्वैच्छिक हिन्दी संस्थाओं तथा निजी संस्थाओं के लगभग 150 विद्वान कलाकार आदि भी सम्मेलन में सम्मिलित हुए। ..... सम्मेलन में चार विचार सत्रों का आयोजन किया गया जिनमें निम्नलिखित प्रमुख विषयों पर विचार विनिमय हुआ :

1. हिन्दी की अन्तर्राष्ट्रीय शैली और स्वरूप
2. जनसंचार के साधन और हिन्दी
3. स्वैच्छिक संस्थाओं की भूमिका

4. विश्व में हिन्दी के पठन पाठन की समस्याएँ''[5]

मॉरिशस के सोमदत्त बखौरी, अभिमन्यु अनत, सूरज प्रसाद सिंह मंगर, सर जगतसिंह, भारत के हजारी प्रसाद द्विवेदी, भगवती चरण वर्मा, धर्मवीर भारती, अमृतलाल नागर, उपेन्द्रनाथ अश्क, एवं शेबडे, कमलेश्वर, राजेन्द्र अवस्थी जैसे साहित्यकार जापान के प्रो.के.दोई, चेकोस्लेवाकिया के प्रो.ओदेलेन स्मेकल, जर्मन संघीर गणराज्य के डॉ.लोगर लुत्से प्रमुख थे। विश्व हिन्दी सम्मेलन में पारित किए गए निम्नलिखित प्रस्तावों की जानकारी हरिबाबू कंसल अपनी पुस्तक 'विश्व में हिन्दी' में देते हैं -

1. ''सम्मेलन की यह धारणा है कि जनसंचार के सभी साधन जैसे रेडियो, टेलीविजन, फ़िल्म तथा अन्य प्रकार के वैज्ञानिक उपकरणों का हिन्दी के प्रचार प्रसार में उपयोग हो ताकि वह एक विश्व एक परिवार की उदात्त भावना का प्रचार-प्रसार कर सकें।
2. हिन्दी के प्रचार-प्रसार के लिए भारत, मॉरिशस, फीजी, ट्रिनिडाड, गयाना आदिदेशों की स्वैच्छिक हिन्दी संस्थाओं ने महत्वपूर्ण योगदान दिया है। इन सभी संस्थाओं को उनके देश की सरकारों द्वारा तथा जनता के द्वारा समुचित सहायता मिलनी चाहिए।
3. विश्व के अनेक देशों में हिन्दी के पठन-पाठन संबंधी अनेक समस्याएँ हैं। पाठ्य पुस्तकों, वैज्ञानिक उपकरणों आदि की समस्याएँ शीघ्र दूर की जानी चाहिए।
4. मॉरिशस में एक विश्व हिन्दी केन्द्र की स्थापना हो, जो विश्व की हिन्दी गतिविधियों का समन्वय कर सकें।
5. एक अन्तर्राष्ट्रीय पत्रिका भी प्रकाशित की जाय, जो भाषा के वातावरण का निर्माण करें जिसमें मानव विश्व का नागरिक बना रह सके और विज्ञान और अध्यात्म की महान शक्ति एक नए सामंजस्य का रूप धारण कर सके।
6. हिन्दी की स्वैच्छिक संस्थाओं के पाठ्यक्रमों में मॉरिशस के हिन्दी साहित्य का समावेश किया जाए।''[6]

द्वितीय विश्व हिन्दी सम्मेलन के अपने उद्घाटन भाषण में तत्कालीन मॉरिशसीय प्रधान मंत्री ने भारतीय भाषाओं के विकास क्रम के बारे में कहा -

''हमारा विश्वास है कि इन भाषाओं की रक्षा से हमारे देश की संस्कृति की रक्षा होती है। और इन संस्कृतियों के मेल से हम मॉरिशस में नई संस्कृति का निर्माण करेंगे, जिनमें सब का योगदान होगा। मेरा विश्वास है कि हिन्दी प्यार और एकता की भाषा है। यह हमेशा से जनता की भाषा रही है। भारत और मॉरिशस दोनों को स्वतन्त्र कराने में हिन्दी का हाथ रहा है।''[7]

इस तरह प्रथम विश्व हिन्दी सम्मेलन के बोध वाक्य 'वसुधैव कुटुम्बकम्' की स्वीकारोक्ति के साथ 'विश्व परिवार' की भावना सहित द्वितीय विश्व हिन्दी सम्मेलन सम्पन्न हो गया। बाद में चलकर मॉरिशस में विश्व हिन्दी सम्मेलन का केन्द्रीय कार्यालय स्थापित किया गया।

4.2.3 तृतीय विश्व हिन्दी सम्मेलन :

तृतीय विश्व हिन्दी सम्मेलन का त्रिदिवसीय आयोजन भारत की राजधानी नई दिल्ली में 28-30 अक्तूबर 1983 में हुआ। यह दूसरे विश्व हिन्दी सम्मेलन के सात साल बाद आयोजित किया गया। यह अब तक का सबसे बड़ा सम्मेलन था। ''इसमें भाग लेने वाले प्रतिनिधियों की कुल संख्या 6566 थी। यह हिन्दी की विशालता एवं सार्थकता ही थी कि उसमें न केवल भारत के विभिन्न क्षेत्रों से अनेक प्रतिनिधि आए अपितु विभिन्न देशों के 260 प्रतिनिधियों ने भी सक्रिय भाग लिया। सम्मेलन का उद्घाटन भारत की प्रधान मंत्री श्रीमती इंदिरा गाँधी ने किया। उद्घाटन समारम्भ के अध्यक्ष कैंब्रिज विश्वविद्यालय, इंग्लैण्ड के डॉ.आर.एस.मेग्रेगर थे।''[8]

इस सम्मेलन में प्रतिनिधियों की संख्या दो कारणों से अधिक थी, एक तो भारत में सम्मेलन होने से यहाँ के प्रतिनिधियों की प्रचुर संख्या थी, इसमें करीब 30 देशों के प्रतिनिधि आए थे। 110 घंटे के चर्चा-सत्रों हेतु जिन विचार गोष्ठियों का

आयोजन किया गया उन्हें दो भागों में विभाजित किया गया था।

क. खुला अधिवेशन और

ख. समानान्तर संगोष्ठियाँ

खुले अधिवेशन के अन्तर्गत निम्नलिखित विषयों पर विचार-विमर्श किया गया :

1. अन्तर्राष्ट्रीय भाषा के रूप में हिन्दी के प्रसार की संभावनाएँ और प्रयास

2. भारत के सांस्कृतिक सम्बन्ध और हिन्दी

3. मानव मूल्यों की स्थापना में हिन्दी की भूमिका; समानान्तर गोष्ठियों के सत्रों में निम्नलिखित विषयों पर चर्चा हुई :-

1. आधुनिक भारत में हिन्दी साहित्य की विकास शाखाएँ

2. आधुनिक भारत में हिन्दी भाषा की प्रगति

3. आधुनिक भारत में हिन्दी की वैज्ञानिक और तकनीकी प्रगति

4. देवनागरी लिपि : स्वरूप और सम्भावनाएँ

5. आधुनिक भारत में हिन्दी पत्रकारिता की प्रगति

6. हिन्दी के विकास में स्वैच्छिक संस्थाओं का योगदान

7. भारतीय मूल के जनसमुदाय में हिन्दी का प्रसार : समस्याएँ और सम्भावनाएँ

8. संयुक्त राष्ट्र संघ तथा अन्य अन्तर्राष्ट्रीय संगठनों में हिन्दी का प्रयोग : संभावनाएँ

9. हिन्दी और अन्य भारतीय भाषाएँ : आदान-प्रदान (तमिल, तेलुगु, कन्नड़, मलयालम)

10. हिन्दी और अन्य भारतीय भाषाएँ : आदान-प्रदान (मराठी, गुजराती और हिन्दी की उपभाषाएँ)

11.हिन्दी और अन्य भारतीय भाषाएँ : आदान-प्रदान (बंगला,

असमिया, उड़िया)

12. हिन्दी और अन्य भारतीय भाषाएँ : आदान-प्रदान (उर्दू, पंजाबी, कश्मीरी, सिंधी)

13. हिन्दी और अन्य भारतीय भाषाएँ : आदान-प्रदान (निषाद (मुंडा) एवं मिसंत) (भोर वर्मा परिवार)

14. हिन्दी और अन्य भारतीय भाषाएँ (प्राचीन भारतीय भाषाएँ - संस्कृत, पाली, प्राकृत, अपभ्रंश) ''[9]

इस अवसर पर 41 विद्वानों को सम्मानित किया गया। समापन समारोह की मुख्य अतिथि हिन्दी की प्रख्यात कवयित्री श्रीमती महादेवी वर्मा थी और लोक सभा अध्यक्ष श्री बलराम जाखड की अध्यक्षता थी। यह सम्मेलन पूर्व के सम्मेलनों की तुलना में अत्यन्त प्रभावशाली और महत्त्वपूर्ण था। यह हिन्दी की अन्तर्राष्ट्रीयता प्रमाणित करने में ऐतिहासिक रूप से कारगर सिद्ध हुआ।

4.2.4 चतुर्थ विश्व हिन्दी सम्मेलन :

तीसरे और चौथे विश्व हिन्दी सम्मेलन के आयोजन के मध्य का फ़ासला दस साल का रहा। इस तरह चतुर्थ विश्व हिन्दी त्रिदिवसीय सम्मेलन 2-4 दिसम्बर 1993 को मॉरिशस सरकार के कला संस्कृत, अवकाश एवं मंत्रालय सुधार संस्थाओं के तत्त्वावधान में किया गया। सम्मेलन का उद्‌घाटन मॉरिशस के प्रधानमंत्री श्री अनिरुद्ध जगन्नाथ ने किया। मॉरिशस के उपराष्ट्रपति श्री रवीन्द्र धनरावण, भारत के सरकारी शिष्ट मण्डल के नेता तथा महाराष्ट्र विधान सभा के श्री मधुकर राव चौधरी और केन्द्रीय गृह उपमंत्री श्री रामलाल राही आदि ने सभी को सम्बोधित किया। प्रधानमंत्री अनिरुद्ध जगन्नाथ ने घोषणा की कि मॉरिशस सरकार अपने देश के त्रिभाषा सूत्र के पक्ष में है इसके अन्तर्गत उन्होंने दो यूरोपीय और एक भारतीय भाषा को पढ़ने का आग्रह किया। ''25 देशों के लगभग 300

विदेशी विद्वान प्रतिनिधि वहाँ सम्मिलित हुए जिनमें सबसे बड़ा प्रतिनिधि दल भारत का था।''[10] विश्व हिन्दी सम्मेलन के सर्व प्रमुख विषय 'विश्व में हिन्दी' को लेकर विचार विमर्श किया गया। सम्मेलन की चर्चा के निम्न मुख्य उद्देश्य माने गए :

1. विश्व में हिन्दी के प्रचार-प्रसार को उत्साहित करना।
2. विश्व में हिन्दी भाषा तथा साहित्य की उपलब्धियों एवं सम्भावनाओं पर विचार विमर्श करना। और
3. हिन्दी के माध्यम से संस्कृति को आज के सन्दर्भ में देखते हुए संबल प्रदान करना तथा सांस्कृतिक अस्मिता को बनाकर रखने की दिशा में प्रयास करना।

इस सम्मेलन में पुनःपारित प्रस्ताव में आह्वान किया गया कि विश्व भर में बसे हिन्दी भाषी हिन्दी को संयुक्त राष्ट्र संघ में स्थापित करने की दृष्टि से अपनी-अपनी सरकारों से अनुरोध करें। अन्य प्रस्ताव के अन्तर्गत विश्व हिन्दी विद्यापीठ की स्थापना एवं मॉरिशस में विश्व हिन्दी सचिवालय बनाए जाने की माँग की गई।

1995-96 में ट्रिनिडाड में भारतीय मूल के लोगों के आगमन के 150 वर्ष पूरे होने के अवसर पर वहाँ के प्रतिनिधि ने ट्रिनिडाड में पाँचवाँ विश्व हिन्दी सम्मेलन आयोजित करने का प्रस्ताव रखा। इस प्रस्ताव का सर्वसम्मति से स्वागत किया गया।

इस सम्मेलन में इस बात पर ज्यादा जोर दिया गया कि सम्मेलन के निष्कर्षों तथा सिफ़ारिशों पर समुचित कार्यवाही करने के लिए कोई ठोस कदम उठाए जाने चाहिए। ऐसी मजबूत व्यवस्था सम्मेलन की आवाज को प्रभावशाली बनाती है।

4.2.5 पंचम विश्व हिन्दी सम्मेलन :

अब तक विश्व हिन्दी सम्मेलनों का स्थान भारत और मॉरिशस थे। इस बार स्थान परिवर्तन हुआ और विश्व हिन्दी सम्मेलनों की परम्परा को आगे बढ़ाते हुए

पाँचवे विश्व हिन्दी सम्मेलन का आयोजन कैरेबियन देश ट्रिनिडाड और टोबैगो की राजधानी पोर्ट ऑफ़ स्पेन में 4-6 अप्रैल, 1996 को किया गया। इसमें 33 देशों के प्रतिनिधियों ने भाग लिया। इस आयोजन को तत्कालीन भारतीय उच्चायुक्त प्रो.लक्ष्मन्ना, भारतीय सांस्कृतिक संबंध परिषद् की ओर से वेस्टइंडीज विश्व विद्यालय के हिन्दी प्राध्यापक प्रो.जगन्नाथन हिन्दी निधि ट्रिनिडाड के श्री चनका सीताराम और रवि महाराज के अथक परिश्रम और प्रयासों से सफलता प्राप्त हुई। ट्रिनिडाड एवं टोबैगो के प्रधानमंत्री वासुदेव पांडे स्वयं भारतीय मूल के थे। उन्होंने सरकार की तरफ़ से कुछ यात्रा सम्बन्धित रियायतें देकर प्रतिनिधियों की सुविधा का ख्याल रखा।

इस सम्मेलन में विमर्श हेतु विशिष्ट और नवीन मुद्दे प्रायः नहीं थे। यह सम्मेलन, वैज्ञानिक दृष्टि से विशेष था। यहाँ लोगों का ध्यान हिन्दी सॉफ्टवेयर की ओर आकृष्ट किया गया था। वहाँ के प्रधान मंत्री श्री वासुदेव पांडे ने अपने लिए हिन्दी सॉफ्टवेयर खरीदा। सबसे महत्वपूर्ण बात यह थी कि वेस्टइंडीज में शर्तबन्द भारतीय बंधुओं मजदूरों के आगम की 150 वीं वर्षगांठ मनाई जा रही थी। इस बार भारत के सरकारी शिष्ट मण्डल का प्रतिनिधित्व अरुणाचल प्रदेश के राज्यपाल श्री माता प्रसाद ने किया। देश-विदेश के अन्य प्रमुख विद्वानों में डॉ.ओदोनल स्मेकल, प्रो.हरिशंकर आदेश, डॉ.ब्रिस्की, श्री अभिमन्यु अनत और प्रो.चिनतिंगहान आदि सम्मिलित थे।

"इस सम्मेलन में हिन्दी भाषा, साहित्य, संस्कृति के विभिन्न पक्षों पर गोष्ठियाँ हुई, जिनमें हिन्दी की विश्वव्यापी यात्रा-प्रगति को नई स्फूर्ति और शान्ति प्राप्त हुई।"[11] सम्मेलन में विचार-विमर्श के उपरान्त पारित किए गए मन्तव्य इस प्रकार है "भारतवंशी समाज और हिन्दी के बीच समीकरण का समर्थन और विश्वभर के भारतीय मूल का समाज हिन्दी को अपनी सम्पर्क भाषा के रूप में स्थापित करेगा और एक विश्व हिन्दी मंच बनाने की दिशा में सार्थक प्रयास होगा मॉरिशस में एक स्थायी सचिवालय की स्थापना और क्रियान्वयन के लिए अन्तर-सरकारी समिति का

गठन, सभी देशों विशेषकर ऐसे देशों द्वारा जहाँ भारतीय मूल के लोग तथा प्रवासी बसते हैं, अपने देश में हिन्दी पठन-पाठन की व्यवस्था और हिन्दी भाषा को प्राप्त जनाधार है और उसके प्रति जनभावना को ध्यान में रखते हुए उन सभी देशों-जहाँ भारतीय मूल के लोग रहते हैं, कि स्वयं सेवी संस्थाओं, हिन्दी विद्वानों से आग्रह किया कि वे अपनी-अपनी सरकारों से हिन्दी को संयुक्त राष्ट्र की भाषा बनाने के लिए राजनायिक समर्थन देने का अनुरोध करे।''[12]

4.2.6 छठाँ विश्व हिन्दी सम्मेलन :

छठवें विश्व हिन्दी सम्मेलन का आयोजन हिन्दी दिवस के अवसर पर इसके स्वर्ण जयन्ती वर्ष के समय 14-18 सितम्बर, 1999ई. को लन्दन, इग्लैण्ड में किया गया। पिछली शताब्दी के इस अन्तिम हिन्दी महाकुम्भ में दुनिया भर के देशों के विद्वानों, साहित्यकारों, पत्रकारों और प्राध्यापकों तथा हिन्दी प्रेमियों ने हिस्सा लिया। हिन्दी की सहोदरता और समृद्धि पर प्रकाश डालते हुए प्रधान मंत्री श्री अटल बिहारी वाजपेयी ने अपने संदेश में कहा कि ''हिन्दी हमें स्वत्व से जोड़ती है, भारतीयता की ओर मोड़ती है और संकीर्णता को तोड़ती है। भारत का साहित्य, संगीत, सभ्यता और संस्कार अपनी भाषा में ही परिचित हुआ है। भारत की सभी भाषाएँ, भारत माता के आँगन की फुलवारी के समान हैं और संविधान द्वारा घोषित राज भाषा होने के नाते हिन्दी के पुरोधाओं पर यह दायित्व है कि वे इस फुलवारी को भी खींचे तथा हिन्दी को भारत की सर्वमान्य सम्पर्क भाषा के रूप में प्रतिष्ठित करने में सहायक वातावरण बनाएँ।''[13]

सम्मेलन का संयुक्त आयोजन यू.के. हिन्दी समिति, लंदन, गीतांजलि बहुभाषीय समुदाय बर्मिंघम, भारतीय भाषा संगम यॉर्क, नेहरू केन्द्र तथा भारतीय विद्याभवन लन्दन, एवं संपद बर्मिंघम द्वारा किया गया। इस अवसर पर 32 विद्वानों को सम्मानित किया गया जिनमें बारह भारतीय और अन्य दूसरे देशों के थे। डॉ.लक्ष्मी मल्ल सिंघवी, नरेश मेहता, श्रीलाल शुक्ल, मधुकरराव चौधरी, रामविलास

शर्मा, शौरि राजन (भारत), निकोल बलवीर (फ्रांस), लिंडा हेस (अमेरिका), दानूता स्ताशिक (पोलैण्ड), राजेन अरुण (मॉरिशस), सूर्यनारायण गोप (नेपाल), विवेकानंद शर्मा (फीजी), महातम सिंह (सूरीनाम), रवि महाराज (ट्रिनिडाड) और मनोहर पाण्डेय (इटली) आदि प्रमुख हैं।

यह सम्मेलन पाँच दिनों तक चला और इसमें प्रायः दो सौ लेख पढ़े गए। यह सम्मेलन आने वाली सन्ततियों को समर्पित था। इसीलिए मुख्य थीम के रूप में 'हिन्दी और भावी पीढ़ी' को शीर्षक रखा गया। सम्मेलन के दौरान हिन्दी भाषा, साहित्य, पत्रकारिता और तकनीकी आदि के साथ साथ विश्व हिन्दी और नई सदी की चुनौतियाँ आदि पर विस्तार से चर्चा की गई। सम्मेलन में कई प्रस्ताव पारित किए गए।

इस तरह आने वाली नई सदी में हिन्दी को विश्व भाषा बनाने की आकांक्षा और इसकी दिनोंदिन समृद्धि की कामना के साथ सैकड़ों प्रतिनिधियों के समागम का मेला स्कूल ऑफ़ ओरियण्टल एण्ड अफ़्रिकन स्टडीज, लंदन यूनिवर्सिटी के प्रांगण में सम्पन्न हुआ।

4.2.7 सातवाँ विश्व हिन्दी समेलन :

भारत, मॉरिशस, 'ट्रिनिडाड-टोबैगो', इंग्लैण्ड के बाद दक्षिण अमेरिका के हरित प्रदेश 'सूरीनाम' को सातवें विश्व हिन्दी सम्मेलन के आयोजन का स्थान चुना गया। भारत से प्रायः तीस हजार कि.मी की दूरी पर बसे सूरीनाम की राजधानी पारामारीबों में 5-9 जून, 2003 को विश्व हिन्दी सम्मेलन आयोजित किया गया। इसका आयोजन 'सूरीनाम हिन्दी परिषद ' 'ग्लोबल आर्गानाइजेशन फर फीप ऑफ इंडियन ऑरिजिन ', 'सूरीनाम विश्वविद्यालय ' 'माता गौरी फाउंडेशन ', 'सनातन धर्म महासभा ', 'विश्व हिन्दू परिषद ', 'आर्य दिवाकर ' और अन्य संबद्ध संगठनों द्वारा किया गया। इसे भारत और सूरीनाम दोनों सरकारों का समर्थन प्राप्त था। इसी दिन जून 5 को एक सौ तीस वर्ष पहले 1873 में सूरीनाम की धरती पर

शर्तबन्द भारतीय बंधुआँ मजदूरों का पहला गिरमिटिया दल यहाँ पहुँचा था। प्रायः साढ़े चार लाख की आबादी वाले इस देश की जनसंख्या का लगभग 35 प्रतिशत भारतीय मूल के लोगों का है। जून 6 को विश्व हिन्दी सम्मेलन की शुरुआत करते हुए सूरीनाम के राष्ट्रपति श्री रुनाल्डो रोनाल्ड वेनेत्सियान ने अपने उद्घाटन भाषण में कहा था ''सूरीनाम और भारत के बीच प्रगाढ़ आत्मीय सम्बन्ध है। दोनों देश अनेक अर्थों में एक दूसरे गहरे जुड़े हैं। दोनों के बीच पुराने भाषाई सम्बन्ध हैं। भाषा भावों की अभिव्यक्ति का सशक्त माध्यम होती है। हिन्दी की जननी संस्कृत की अपनी विशेषताएँ हैं। उसके साथ आज विश्व की प्रमुख भाषा के रूप में हिन्दी भी उभर रही है।''[14] विश्व के कोने-कोने के कई विद्वानों, पत्रकारों, अधिकारियों, संगठनों के प्रतिनिधियों आदि ने सम्मेलन में हिस्सा लिया। हिन्दी विद्वानों में फ्रांस की विदुषी ऐनी मोतो, नेपाल से प्रो.गोप, उजबेकिस्तान से प्रो.आजाद समातोब, फीजी से प्रो.सुब्रह्मणी, दक्षिण आफ्रीका से डॉ.रामविलास, तजाकिस्तान से प्रो.एच.रजाकोव, पोलैण्ड की वार्सा विश्वविद्यालय से क्रिस्तोफ ब्रिस्की, डॉ.दानूता स्तासिक एवं हंगरी डॉ.मारिया आदि ने भाग लिया।

सम्मेलन की मुख्य विषय वस्तु - 'विश्व हिन्दी : नई शताब्दी की चुनौतियाँ' विषय पर सार गर्भित विचार विमर्श किया गया। निम्नलिखित विषयों पर चर्चा की गई :

''1. विश्व हिन्दी के समक्ष चुनौतियों और समाधान

2. हिन्दी बोलियों में नया सृजन

3. विश्व हिन्दी एवं सूचना प्रौद्योगिकी की भूमिका

4. हिन्दी और प्रसारण

5. हिन्दी और पत्रकारिता

6. अर्थ व्यवस्था में हिन्दी की भूमिका

7. हिन्दी और शिक्षण व्यवस्था

8. भारतेतर देशों में हिन्दी का रचनात्मक परिदृश्य

9. हिन्दी में अनुवाद और सन्दर्भ साहित्य

10. भविष्य की हिन्दी और हिन्दी का भविष्य - एक परिसंवाद''[15]

सम्मेलन में देश-विदेश के हिन्दी सुप्रसिद्ध विद्वानों को सम्मानित किया गया। सम्मेलन के उद्देश्यों में निम्न बातों पर ध्यान दिया गया :

"1. अन्तर्राष्ट्रीय भाषा के रूप में हिन्दी की भूमिका को उजागर करना।

2. विभिन्न देशों में विदेशी भाषा के रूप में हिन्दी शिक्षण की स्थिति का आकलन करना और सुधार लाने के तौर तरीक़ों का सुझाव देना।

3. हिन्दी भाषा और साहित्य में विदेशी विद्वानों के योगदान को मान्यता प्रदान करना।

4. प्रवासी भारतीयों के बीच अभिव्यक्ति के माध्यम के रूप में हिन्दी का विकास करना।

5. विज्ञान और प्रौद्योगिकी, आर्थिक विकास और संचार के क्षेत्रों में हिन्दी के प्रयोग को बढ़ावा देना और सूचना प्रौद्योगिकी के क्षेत्र में हिन्दी का विकास।''[16]

सूरीनाम के राष्ट्रपति ने अपने संदेश में विश्व हिन्दी सम्मेलन के प्रतिनिधियों से हिन्दी के सम्बन्ध में ही कहा था ''भारतीय सांस्कृतिक परम्पराओं को जीवन्त रखने के लिए भाषा एक महत्वपूर्ण चाबी है। हिन्दी भारतीयता की नींव का पत्थर और धन-सम्पत्ति है जिसका अनुभव करते हुए हम विकास करना चाहते है। इस सम्मेलन में आए प्रतिनिधियों का आप लोग मार्गदर्शन करें। क्योंकि उत्साहवर्धक विचार हमें प्राचीन हिन्दी संस्कृति से प्राप्त होते हैं।''[17]

इस तरह पारीमारीबों में हिन्दी की अन्तर्राष्ट्रीयता का पुनः एक बार परिचय देते हुए यह सम्मेलन भारतीय संस्कृति का उदारतामूल मंत्र 'वसुधैव कुटुम्बकम्' की भावना के साथ सम्पन्न हुआ।

4.3 विश्व हिन्दी सम्मेलनों की उपलब्धियाँ :

इसमें कोई सन्देह की बात नहीं है कि आज तक आयोजित सातों विश्व हिन्दी सम्मेलनों की अपनी-अपनी उपलब्धियाँ रही हैं। भारतीय राजभाषा, राष्ट्रभाषा और सम्पर्क भाषा हिन्दी के विश्व स्तरीय सम्मेलन इसकी सीमा, समर्थता और आवश्यकता की परिधि को विस्तृत करने की दिशा में सफल प्रयत्न रहे हैं।

प्रथम विश्व हिन्दी सम्मेलन का आयोजन भारतीय प्रान्त महाराष्ट्र के नागपुर शहर में किया गया। इस विशाल सम्मेलन में प्रबुद्ध जनता ने इतना उत्साह दिखाया और विदेशी लोगों का हिन्दी भाषा के प्रति इतना प्रेम होगा, इस बात की जानकारी ने लोगों को आश्चर्य चकित कर दिया। इस सम्मेलन की एक उपलब्धि यह कि इस का आयोजन अहिन्दी भाषी लोगों ने एक अहिन्दी भषी क्षेत्र में बड़ी शान और सफलता के साथ किया। यह अहिन्दी भाषी क्षेत्रों की अहिन्दी भाषी जनता की प्रगाढ़ और अप्रचारित देश भावना एवं हिन्दी के प्रति अप्रतिम प्रेम की अभिव्यक्ति थी। सन् 1975 के प्रथम विश्व हिन्दी सम्मेलन (नागपुर) से लेकर आज के सात विश्व हिन्दी सम्मेलनों में नागपुर और दिल्ली में आयोजित दो और सम्मेलनों को छोड़कर बाकी पाँच के आयोजन विदेश में - मॉरिशस (दो बार - 1976 तथा 1993), ट्रिनिडाड टुबैगो (1996), इंग्लैण्ड (1999) और सूरीनाम (2003) - किए गए। इस तरह सही मायने में इसे अन्तर्राष्ट्रीय सम्मेलन के रूप में देखा जा सकता है।

विदेशों में बसे भारतीयों (विशेषकर अहिन्दी भाषियों) और हिन्दी प्रेमियों को इन सम्मेलनों में निमंत्रित कर उन्हें अपने पूर्वजों की भूमि और भाषा का दिग्दर्शन कराना उन्हें भारतीय सांस्कृतिक गौरव और आधुनिक प्रगति से परिचित कराना जरूरी था। यह बात विशेष रूप से नागपुर और दिल्ली में आयोजित सम्मेलनों के बारे में कही जा सकती है, जहाँ बाहर के प्रतिनिधियों का हिन्दी और भारत से प्रत्यक्ष और जीवंत परिचय हुआ। इन सम्मेलनों ने वैश्विक स्तर पर कई आयाम

अर्जित किए हैं। इन सम्मेलनों से विश्व बंधुत्व और विश्व कल्याण की भावना को बल मिला। हिन्दी के अन्तर्राष्ट्रीय स्वरूप पहचान करने में बहुत बड़ा बल दिया है। इससे हिन्दी भाषियों को अपनी भाषा और संस्कृति के प्रति अक्षुण्ण प्रेम और विश्वास की भावना को संबल मिला। 'सातवें विश्व हिन्दी सम्मेलन' से संबंधित अपने एक लेख में चित्रा मुद्‌गल कहती हैं ''पिछले छः विश्व हिन्दी सम्मेलनों में हमने वैश्विक स्तर पर हिन्दी की अस्मिता के कई आयाम अर्जित किए हैं - हिन्दी के वैश्विक कुटुम्ब का गठन हुआ है। यह उसकी शक्ति का द्योतक है और यह कोई मामूली उपलब्धि नहीं है। ..... सबसे बडी उपलब्धि तो यह है कि जिन कमियों की ओर विश्व हिन्दी सम्मेलनों के माध्यम से विश्व भर के विद्वानों द्वारा रेखांकन होता है, उसके परिष्करण के मुद्दे को चुनौती के रूप में ग्रहण किया जाता है।''*

एक भाषा के रूप में हिन्दी की उपेक्षा ज्यादा दिन तक नहीं की जा सकती। निस्संदेह विश्व हिन्दी सम्मेलनों के द्वारा अन्तर्राष्ट्रीय जगत में हिन्दी के लिए अनुकूल वातावरण की सृष्टि का द्वार खुलता है। 1975 के पहले सम्मेलन से लेकर पिछले वर्ष सन् 2003 के सातवें सम्मेलन तक विदेशों में हिन्दी का काफ़ी प्रचार हुआ। इसका प्रयोग और इसके प्रति लोगों के रुझान में परिवर्तन आया। न सिर्फ़ मौखिक बल्कि साहित्यिक वातावरण भी तैयार हुआ है। सूरीनाम में हुए सातवें विश्व हिन्दी सम्मेलन के अवसर पर 'सूरीनाम में सात दिन' नामक लेख में हिमांशु जोशी हिन्दी की बदलती हुई स्थिति के बारे में लिखते हैं - ''यहाँ दिनांक 5 जून, से 9 जून, 2003 तक आयोजित होने वाला यह 'सातवाँ हिन्दी महाकुम्भ' पिछले कुम्भों की अपेक्षा अधिक सार्थक लग रहा है। हिन्दी भाषा-भाषियों में आज पहले की अपेक्षा अधिक आत्म विश्वास झलक रहा है। गत सत्ताईस वर्षों में इसकी स्थिति में अनेक परिवर्तन हुए। एक गुणात्मक बदलाव यह आय कि विश्व की भाषाओं में इसकी स्थिति अधिक सुदृढ हुई। इसकी उपेक्षा किसी भी रूप में सम्भव नहीं।''* सम्मेलनों के द्वारा ही लोगों को पता चला कि बाहर के अनेक देशों के सैकड़ों विद्यालयों,

विश्व विद्यालयों और निजी तथा सरकारी संस्थाओं में हिन्दी का अध्ययन-अध्यापन और शोधकार्य होता है। विदेशों में इसके सैकड़ों-हज़ारों ज्ञाता विद्वान और लेखक हैं। सम्मेलनों में हिन्दी के प्रचार के कारण भी कई संस्थाओं द्वारा कई भाषाओं में हिन्दी की कृतियों का अनुवाद कार्य भी शुरू हुआ। मुख्य रूप से युनेस्को द्वारा हिन्दी कृतियों के विश्व की अन्य समृद्ध भाषाओं में अनुवाद करवाना। उदाहरण के तौर पर विश्व हिन्दी सम्मेलन के अवसर पर राष्ट्र संघ के शैक्षणिक, वैज्ञानिक और सांस्कृतिक संगठन (यूनेस्को) के उपनिदेशक के भाषण का एक अंश रखा जा सकता है - ''संसार के अन्य देशों में हिन्दी साहित्य का परिचय देने के लिए इस संगठन (यूनेस्को) ने हिन्दी की पुस्तक का कई विदेशी भाषाओं में अनुवाद करने का कार्यक्रम बनाया है। इसके अतिरिक्त वह हिन्दी में भी पुस्तकें प्रकाशित करता है। अब तक उसने तकनीकी तथा अन्य विषयों में 38 पुस्तकें प्रकाशित की हैं और 15 अन्य पुस्तकें प्रकाशित कर रहा है। यदि भारत प्रयास करें तो राष्ट्र संघ में हिन्दी को अपने कार्य की पाँच भाषाओं में स्थान दिला सकेगा।''[20]

विश्व हिन्दी सम्मेलनों से न सिर्फ़ हिन्दी भाषा और साहित्य का प्रचार-प्रसार होता है, बल्कि इससे देवनागरी लिपि का भी प्रचार होता है। कुल मिलाकर इन सम्मेलनों से आम आदमी के प्रभावित होने से लेकर अन्तर्राष्ट्रीय संगठनों तक का ध्यान हिन्दी की गतिविधियों और इसके महत्व पर जाता है। इस तरह हिन्दी का वैश्विक दायरा विस्तृत होता है और इसकी अन्तर्राष्ट्रीयता पुख्ता होती है। इस दृष्टि से ये सम्मेलन प्रेरक, स्पृहणीय और सफल रहे हैं।

इन सम्मेलनों के जरिये भारत का उन देशों से जहाँ-जहाँ हिन्दी भाषा-साहित्य का प्रयोग होता है, सम्बन्ध सुधार में सहायता पहुँचती है। यह बात मॉरिशस, ट्रिनिडाड और टोबैगो, फीजी, थाईलैण्ड, इंग्लैण्ड और सूरीनाम के संबंध में अधिक स्पष्ट है। सम्मेलनों के द्वारा व्यावसायिक, शिक्षा, राष्ट्रीय, बहुराष्ट्रीय क्षेत्रों

और साधारण जनमानस में हिन्दी प्रयोग के प्रति जागरूकता और उत्साह भी पैदा होता है। सम्मेलनों से पुरानी स्वैच्छिक संस्थाओं का उत्साहवर्द्धन और नवीन स्वैच्छिक संस्थानों को हिन्दी सेवा की प्रेरणा प्राप्त होती है और वे मिल-जुलकर आगे आती हैं तथा इसके आयोजन में हाथ बँटाती है। अगले सम्मेलन के सहारे पिछले सम्मेलनों की उपलब्धियों और योजनाओं को भी स्थायित्व मिलता है या उन्हें निश्चित दिशा प्रदान की जाती है।

अन्तर्राष्ट्रीय पत्रिका के प्रकाशन, विश्व हिन्दी पुरस्कार की स्थापना, युनेस्को में हिन्दी को मजबूती देने के प्रयत्न, मॉरिशस में विश्व हिन्दी सचिवालय और वर्धा में महात्मा गाँधी अन्तर्राष्ट्रीय हिन्दी विश्वविद्यालय की स्थापना विश्व हिन्दी सम्मेलनों की कुछ ठोस उपलब्धियाँ मानी जा सकती हैं।

इन सम्मेलनों से भारतीय प्रशासनिक कार्यालयों, विदेशों में भारतीय दूतावासों और राजनीतिज्ञों की कथनी और करनी के अन्तर का पर्दाफाश होता है। इससे कुछ लोगों की नींद अगर खुलती है तो हिन्दी का फ़ायदा ही होगा। सम्मेलन हिन्दी को एक सीमित दायरे से बाहर लाकर इसे वैश्विक परिप्रेक्ष्य में देखने का नजरिया भी हैं। इससे विश्व भाषा साहित्य और हिन्दी भाषा के कुछ तुलनात्मक अध्ययन और शोध तथा समीक्षात्मक ग्रन्थों के प्रकाशन का मार्ग भी प्रशस्त होता है। मीडिया, समाचार माध्यम तथा कम्प्यूटर जैसे माध्यमों में हिन्दी का प्रयोग भी हिन्दी के विस्तार और विकास पर निर्भर करता है। प्रायः सभी विश्व हिन्दी सम्मेलनों में इस बात पर जोर देकर विचार किया गया है। शायद इसी बात का फल है कि इंटरनेट पर इसका प्रयोग बढ़ा है। और कई कम्पनियों ने हिन्दी के पैकेजों की व्यवस्था की है।

हिन्दी के प्रकाण्ड विद्वान कैलाश चन्द्र पन्त ने 'राजभाषा' (अगस्त, 2003) पत्रिका में प्रकाशित अपने एक लेख 'चश्मा हटाकर विश्व हिन्दी सम्मेलन को देखें' में सातवें विश्व हिन्दी सम्मेलन की उपलब्धियों को निम्न रूप में रेखांकित किया है - ''हिन्दी सम्मेलन के माध्यम से बृहद् भारत की एक तस्वीर उभर कर सामने आई।

हिन्दी के सांस्कृतिक वैभव को सभी स्वीकार करते हैं। यह वैभव दो-चार नहीं बीस देशों में उपस्थित होने से हिन्दी सेवियों को नई ऊर्जा मिली - अपनी शक्ति का एहसास हुआ। इस एहसास को कमतर नहीं आँका जा सकता। विश्व हिन्दी सम्मेलन के माध्यम से भारत और विदेशों में हिन्दी सेवा में संलग्न लोगों के बीच संवाद स्थापित होता है। यह पारस्परिकता जिस दिन समग्र रूप लेगी उस दिन भारत विश्व मंच पर कम से कम बीस देशों के साथ खड़ा होने की ताकत जुटा लेगा। यह हिन्दी की और हिन्दी सम्मेलनों की सर्वाधिक महत्वपूर्ण उपलब्धि है।"[21]

इस तरह अगर ध्यान पूर्वक देखा जाय तो पता चलता है कि आज तक आयोजित किए गए सात विश्व हिन्दी सम्मेलनों में इसकी उपलब्धियाँ कम नहीं हैं। शायद आने वाले एक या दो विश्व हिन्दी सम्मेलन अपनी उपलब्धियों को और भी सुदृढ़ रूप से सामने रख सकेंगे।

4.4 विश्व हिन्दी सम्मेलन की सीमाएँ :

सन् 1973 के भारत (नागपुर) में हुए विश्व हिन्दी सम्मेलन से लेकर जून 2003 में सूरीनाम में सम्पन्न हुए विश्व हिन्दी सम्मेलन तक कुल मिलाकर सात विश्व हिन्दी सम्मेलनों का आयोजन किया जा चुका है। प्रायः सभी सम्मेलनों की अपनी उपलब्धियाँ एवं सीमाएँ रही हैं। ऐसा होना कोई आश्चर्यजनक बात भी नहीं है। किन्तु यह बात भी गले नहीं उतरती कि सम्मेलन अपनी उपलब्धियों एवं सफलता की जगह अपनी सीमाओं और आलोचनाओं के लिए अधिक जाने जायँ। प्रायः सभी सम्मेलनों से हमें कुछ न कुछ सबक़ जरूर मिली है।

सर्वप्रथम बात जो हमारे सामने आती है वह सम्मेलन के स्थान निर्धारण को लेकर। लेकिन प्रश्न उठता है किसे देश-स्थान, समय इसकी रूप रेखा आदि निर्धारित करने के हक हैं? और अंतिम मान्यता कहाँ प्राप्त होगी? यह बात आज तक अँधेरे में रही है। इस निर्धारण के पीछे आधार क्या होना चाहिए? इसका

आयोजन करने वाली संस्थाओं का भाषिक-साहित्यिक आधार एवं योग्यता अथवा सक्षमता भी एक महत्वपूर्ण पहलू है जिस पर विशेष ध्यान देना चाहिए।

आज तक सम्मेलनों का एक निश्चित अन्तराल तक निर्धारित नहीं किया जा सका है, भले ही इसके आयोजन की शुरुआत हुए तीस वर्ष बीत चुके हैं।

सम्मेलन की रूपरेखा विषय-उपविषय का चुनाव, प्रतिनिधि चुनाव, प्रतिनिधियों की दक्षता स्तर का निर्धारण, विषय स्तर, एवं ठोस भाषिक-साहित्यिक निर्णायक आयोजक दल के लोगों का चुनाव, कौन-सा मान्यता प्राप्त संस्था या प्रतिनिधि दल करता है यह बात भी रहस्यमय बनी रहती है। देशी-विदेशी लेखक, पर्चा पढ़ने वाले व्यक्ति-शोधार्थी आमंत्रित पत्रकार आदि की सुविधाएँ किसके द्वारा किस आधार पर मुहैय्या कराई जाएँगी इसके मापदण्ड इतने ढीले और संशयात्मक होते हैं कि सम्मेलन के स्तर पर बुरा असर पड़ता है।

सम्मेलन की अध्यक्षता हर बार कोई महान भाषाविद् या साहित्यकार न करके कोई न कोई नेता ही करता है भले ही उसे सम्पूर्ण कार्यक्रम की गतिविधि और सीमा का ज्ञान न हो। यह बौद्धिक आलस्य कब तक रहेगा पता नहीं। इसके द्वारा शायद यही बात बार-बार साबित करने की कोशिश की जाती है भाषा और साहित्य सत्ता का पुनरुत्पाद मात्र है।

मॉरिशस और ट्रिनिडाड टुबैगों में सम्पन्न विश्व हिन्दी सम्मेलन जैसे कुछेक सम्मेलनों को छोड़कर प्रायः हर जगह प्रतिनिधियों के रहने के कुप्रबन्ध से, खाने-पीने और यातायात आदि के प्रबन्ध में व्यवस्था तंत्र चरमरा जाता है। वांछित, अवांछित लोगों के बिना सूचित किए आने से अथवा संख्या में अधिक आने से भी ऐसी स्थिति पैदा हो जाती है। दुःख इस बात का है कि जो लोग हिन्दी की स्थिति पर विचार विमर्श करने, परामर्श देने, या पर्चा पढ़ने जाते हैं उन्हें अपने कर्तव्यों और हिन्दी की भलाई की बात कम सूझती है; ऐशो आराम और यात्रा आदि की बात ज्यादा सूझती है। इस तरह आजकल ऐसे सम्मेलन तफरीह की जगह मात्र बनकर

रह गए हैं। कुछ लोग मात्र उत्सव का आनन्द लेने के लिए जाते हैं।

विश्व स्तर के इस कार्यक्रम का प्रचार, इसके आयोजन के पहले अथवा बाद में शायद ही कहीं देखने को मिलता है। रेडियो दूरदर्शन के विभिन्न चैनलों, हिन्दी-अंग्रेजी आदि समाचार पत्रों में इसका विज्ञापन शायद ही जारी किया जाता है। कार्यक्रम की सूचना भी इन माध्यमों द्वारा खानापूर्ति के लिए एक दो पंक्तियों में कर दी जाती है। पता नहीं मीडिया इसके प्रति इतनी उदासीन क्यों रहती है? इसका समुचित प्रचार-प्रसार होना चाहिए। और इस पर लेख आदि लिखे जाने चाहिए। आम लेखक, शोधार्थी अथवा हिन्दी प्रेमी को भी इस बात का ज्ञान नहीं होता कि यह कब और कहाँ आयोजित किया जायेगा? इस तरह व चाहकर भी अपने विचार प्रस्तुत नहीं कर पाते। यह हिन्दी की गरिमा के अनुरूप नहीं है।

खैर प्राथमिक सूचना पुस्तिका तो ठीक तरह से कभी भी लोगों के सामने नहीं आ पाई परन्तु अभिलेखों एवं पढ़वाए सारे पत्रों-पर्चों का हासिल होना मुश्किल नहीं होना चाहिए। हिन्दी जैसे महान भाषा के भाषा और साहित्य का जो वैश्विक आकलन और निर्धारण होता है उसकी क्रमवार सूचना एवं प्रकाशन शायद ही उपलब्ध है। यह बात सोचनीय है।

अक्सर पिटी-पिटाई बातों का ही रोना रोया जाता है। वास्तविक समस्याओं को देखने एवं उन पर प्रकाश डालने का प्रयास कम दिखाई पड़ता है। समस्याओं का प्रस्तुतीकरण समाधान पर सदैव भारी रहता है। समाधान के सुझाव पर गंभीर विचार की आवश्यकता है। इन सारी बातों में सभी पीढ़ियों का योगदान होना चाहिए। प्रचार-प्रसार के दायित्व संबंधी प्रश्नों को जवाबदेही बनाना होगा।

बार-बार जिन स्थाई कार्यालयों, केन्द्रों अथवा अन्तर्राष्ट्रीय विश्वविद्यालय की बात होती रही है उनके स्थायित्व, उनकी शाखाएँ एवं उनके कार्य संचार पर सभी को समान रूप से ध्यान देना होगा। भारत सरकार एवं कार्यालय संबंधी सरकारें

जब तक तालमेल से कार्य नहीं करतीं हिन्दी के अन्तर्राष्ट्रीय विकास का मार्ग अवरुद्ध ही रहेगा। महात्मा गाँधी अन्तर्राष्ट्रीय हिन्दी विश्वविद्यालय की कई देशों में शाखाएँ होनी चाहिए और सम्मेलनों में इन सबके संयोजन की व्यवस्था के देखरेख के बारे में गंभीर सोच विचार करना होगा।

सम्मेलनों की सीमाओं का निराकरण आर्थिक सहयोग पर भी निर्भर करता है। भारत सरकार और जहाँ भी यह सम्मेलन आयोजित किया जाय वहाँ की सरकार मिलकर इस महा सम्मेलन हेतु प्रचुर अनुदान की व्यवस्था करें तो अधिकांश समस्याओं का निराकरण संभव हो सकता है। यह व्यक्तिगत एवं गैर सरकारी संस्थाओं के सहयोग से भी संभव है। इन सारी चीजों के बारे में 'मॉरिशस स्थित हिन्दी- सचिवालय ' और वर्धा में स्थापित 'महात्मागाँधी अन्तर्राष्ट्रीय हिन्दी विश्वविद्यालय ' को जिम्मेदारी दी जा सकती है। आज शुरुआती दौर में ही दोनों संस्थान सोचनीय दशा में हैं। सम्मेलन में ध्यान देना होगा कि किस तरह हिन्दी का आर्थिक एवं जीवनोपयोगी क्षेत्र से गहरा जुडाव स्थापित किया जाय।

विश्व हिन्दी सम्मेलनों का लेखा जोखा, इसकी प्राथमिक सूचना, सम्मेलन की पूर्ण जानकारी, इसकी आर्थिक आवश्यकता की पूर्ति और उसका सही विनियोजन एवं जवाबदेही निश्चित की जानी चाहिए। दुख की बात है कि आर्थिक मामले में पारदर्शिता कभी भी देखने को नहीं मिलती। विश्वविद्यालय अनुदान आयोग अगर चाहे तो यह जिम्मेदारी ले सकता है।

सम्मेलनों में हमें अपनी-अपनी विचारधाराओं के प्रतिपादन से बचकर हिन्दी भाषा-साहित्य के विकास के बारे में ज्यादा सोचने-विचारने की आवश्यकता है। सम्पूर्ण भारत की बात छोड़ कर संस्कृति के नाम पर मात्र हिन्दू संस्कृति की बात सही नहीं लगती। भारतीय संस्कृति का घेरा बहुत विराट है। वह किसी एक धर्म, जाति या भाषा से संबंधित नहीं है। हिन्दी की भारतीयता मात्र हिन्दू धर्म मानने

वालों की भारतीयता से बढ़कर है। यह अलग बात है कि प्रवासी भारतीयों में हिन्दी भाषा भाषी अधिक हैं। यह सम्मेलन राजनीतिक लाभ से प्रेरित होने पर अपनी सार्वभौमिकता खो सकता है। प्रस्तावों में वांछित बातों पर ही बहस होनी चाहिए। ऐसे सम्मेलनों में आमंत्रित लेखकों एवं विद्वानों का अतिरंजित आकर्षण-विकर्षण भी देखने को मिलता है। यह साहित्यिक विकास के मार्ग के रास्ते में बाधा पहुँचाता है और सम्मेलन में कडुवाहट का माहौल पैदा करता है। वे वजह, आशा से परे प्रस्ताव पारित करने से बचना होगा। जो प्रस्ताव आज तक पारित हुए हैं उन्हें कार्यान्वित किए या करवाए बिना आगे बढ़ना उनका अपमान होगा।

जिस उद्देश्य के साथ सन् 1975 में नागपुर से विश्व हिन्दी सम्मेलन की सार्थक और ऐतिहासिक शुरुआत हुई उसे सिद्ध करने के लिए आगे आयोजित होने वाले विश्व हिन्दी सम्मेलनों को अपनी संकुचित, दृष्टिहीन और भ्रामक सीमाओं को सफलता पूर्वक लाँघना होगा। सम्मेलन के आयोजन की संभावना तभी बलवती होगी जब इसके परिणाम आशाजनक एवं उत्साहवर्द्धक होंगे। अन्यथा विश्व हिन्दी सम्मेलन का आयोजन क्यों? जैसे प्रश्न चिडचिडाहट के साथ बार-बार पूछे जाते रहेंगे और वह भी उत्तर की अपेक्षा किए बगैर। शायद आठवें विश्व हिन्दी सम्मेलन में इन सारी बातों का ध्यान रखा जाएगा और उसे जटिलताओं से निकाल कर एक सरल और सही दिशा दी जायेगी, लेकिन पुनः वही सवाल हमारे सामने आता है कि आठवाँ विश्व हिन्दी सम्मेलन कब और कहाँ होगा?

4.5 विश्व हिन्दी सम्मेलन : अपेक्षाएँ और संभावनाएँ :

भाषा-साहित्य के वैश्विक क्षितिज पर हिन्दी जिस तीव्रता से उभर रही है वह इसकी जीवंतता का स्पष्ट प्रमाण है। विश्व हिन्दी सम्मेलनों ने हिन्दी के विश्वव्यापी स्वरूप को विशिष्ट पहचान दिलाने में अपनी सार्थक और सफल भूमिका का निर्वाह किया है। आज भारत समेत दुनिया के अन्य देश भी विश्व सम्मेलन की उपलब्धियों

के बाद इसे महत्व देने पर बाध्य हुए हैं। अपेक्षाओं का सागर अनंत होता है, फिर भी हिन्दी की प्रामुख्यता और विकास का जो स्वरूप विश्व हिन्दी सम्मेलनों से स्पष्ट होता है वह अपेक्षाओ की एक हद तक की पूर्ति और कई संभावनाओं का द्वार खोलता है। छठवें विश्व हिन्दी सम्मेलन (1999) के अवसर पर गगनांचल के सम्पादक श्री कन्हैया लाल नन्दन ने एक सम्पादकीय में हिन्दी के बारे में लिखा है कि ''अगली शताब्दी के द्वार पर हम स्वभाषा की शक्तिशाली दस्तक दे सकें, इसके लिए यह अपेक्षित है कि हम हिन्दी के विरोधियों के दाँव-पेंचों की खबर लें और हिन्दी की सत्ता को सत्यता का साँचा सौंपें। हिन्दी की शक्ति, ऊर्जा, सम्पन्नता, अस्मिता और उसकी चाहना का विश्वव्यापी रूप निखर कर सामने आए, इसके लिए अनेक संदिग्धताओं का कोहरा छाँटना जरूरी है और जरूरी यह भी है कि हम हिन्दी की अंतरंग दुर्बलताओं के 'सत्यानुरागों' से परिचित हो सकें।''[20] विश्व हिन्दी सम्मेलन हमें इससे परिचित कराते हैं।

आज तक कुल मिलाकर सात विश्व हिन्दी सम्मेलन आयोजित किए जा चुके हैं। प्रत्येक सम्मेलन में अपेक्षाओं की फेरिस्त में पिछले सम्मेलन से एक कदम आगे रहने की प्रवृत्ति दिखती है। अब प्रश्न उठता है कि ऐसे विश्व हिन्दी सम्मेलनों से हमें बहुत अपेक्षाएँ हैं पर क्या कुछ कर पाते हैं ऐसे सम्मेलन? कहाँ तक सफल होते हैं वे अपने उद्देश्य में और कितने खरे उतरते हैं वे हमारी अपेक्षाओं की कसौटी पर और किस तरह? इसकी तह तक जाने के लिए हमें सम्मेलनों के उद्देश्यों और कार्यों की परख करनी होगी। निश्चित रूप से सम्मेलनों के उद्देश्य पर उँगली उठाना संकुचितता ही नहीं बल्कि हानिकारक भी होगा। जहाँ तक उद्देश्य की बात है तो वह लिखित रूप से बार-बार दुहराई गई है। हिन्दी भाषा का संपूर्ण रूप से वैश्विक विकास ही सम्मेलनों का उद्देश्य समीचीन होता है। अगर सूक्ष्म दृष्टि से देखा जाय तो यही इन विश्व हिन्दी सम्मेलनों की अपेक्षाएँ एवं संभावनाएँ भी हैं।

विश्व भाषा का रूप ले चुकी हिन्दी मान्यता प्राप्त प्रतिष्ठित भाषा है। संख्या के बल पर यह दुनिया की किसी भी भाषा को पछाडने का दावा करने लगी है। ऐसी स्थितियाँ निश्चित रूप से अपेक्षाओं को जन्म देती है और अनगिनत संभावनाओं का मार्ग प्रशस्त करती है। विश्व हिन्दी सम्मेलन हिन्दी के अंतर्राष्ट्रीय स्वरूप का आकलन एवं निरीक्षण करने में सहायक होता है। भिन्न-भिन्न देशों के विद्वानों, लेखकों, भाषाविदों एवं शोधार्थियों तथा आम लोगों का निःस्वार्थ सहयोग एवं मार्गदर्शन हिन्दी भाषा के विकास के प्रति आशान्वित अपेक्षाओं और संभावनाओं के प्रति हमें आश्वस्त करता है। विश्व हिन्दी सम्मेलन कई भावी अपेक्षाओं और सम्भावनाओं का स्रोत है।

विश्व हिन्दी सम्मेलन के आयोजन द्वारा लोगों के उत्साह को नई ऊर्जा प्राप्त होती रहती है। इससे लोगों में हिन्दी भाषा-साहित्य के प्रति रुझान की संभावनाएँ बनी रहती हैं। भिन्न-भिन्न देशों की संस्कृतियों एवं लोगों के सान्निध्य की संभावनाएँ दिखाई पड़ती हैं। विश्व हिन्दी सम्मेलन हिन्दी भाषा के विराट संभावित श्रोता-पाठक वर्ग एवं प्रयोगधर्मी समाज पैदा करता है। हिन्दी भाषा से संबंधित वे सारी अपेक्षाएँ जो इसके विकास से संबंधित हैं, को एक बल मिलता है। इससे प्रचारकों-संस्थाओं एवं व्यक्तियों की निराशाओं का भार हल्का होता है। इन सम्मेलनों द्वारा कुछ ठोस संभावनाओं को आधार मिला है और संभावना है कि इसे व्यावहारिक रूप पाने में आसानी होगी। सम्मेलन हिन्दी की प्रगति की दिशा में सहायक हैं। इसके माध्यम से वर्त्तमान और भविष्य में आने वाली हिन्दी प्रयोग की व्यावहारिक कठिनाइयों के समाधान हेतु शीघ्र एवं सर्वोत्तम समाधानों पर विचार किया जाता है।

विश्व हिन्दी सम्मेलन हिन्दी की वैश्विक संभावनाओं एवं उसकी समस्याओं की मूलभूत पहलुओं पर समाधान का प्रस्तुतीकरण करता है। इसके अंतर्गत विश्व हिन्दी सम्मेलन को लोगों के मध्य स्थापित करने का प्रयास किया जा सकता है।

सम्मेलन के दौरान हिन्दी की पुस्तकों की प्रदर्शिनियाँ लगाई जा सकती हैं। इससे गैर-सरकारी और सरकारी संस्थाओं द्वारा और जुझारू प्रयास एवं संतोषजनक प्रयत्न की आवश्यकताओं की अपेक्षा की जाती है। आगे चलकर हिन्दी शोध-केन्द्र, लाइब्रेरियाँ, बाहर लिखे गए इतिहास का लेखा-जोखा, इंटरनेट पर इसके विकास, शब्द-कोशों एवं विदेशी पुस्तकों के हिन्दी तथा हिन्दी पुस्तकों का विदेशी अनुवाद आदि ऐसी संभावनाएँ हैं जिन्हें शीघ्रातिशीघ्र रूप देना चाहिए। तब कहीं जाकर विश्व हिन्दी सम्मेलन की अपेक्षाओं और संभावनाओं को कुछ हद तक संतुष्टि मिल सकती है।

* * *

संदर्भ सूची

1. राष्ट्र भाषा - अगस्त 2003, पृ - 10.
2. गगनांचल - अक्टूबर-दिसंबर, 2003, पृ - 10.
3. वहीं, पृ - 87.
4. वहीं, पृ - 87.
5. विश्व में हिन्दी, खण्ड -1, हरिबाबू कंसल, पृ - 30-31.
6. वहीं, पृ - 32.
7. गगनांचल - अक्टूबर-दिसंबर, 2003, पृ - 89.
8. विश्व में हिन्दी, खण्ड -1, हरिबाबू कंसल, पृ - 33.
9. वहीं, पृ - 33-34.
10. गगनांचल - जुलाई-सिबंदर, 1999, पृ - 61.
11. वहीं, पृ - 68.
12. वहीं, पृ - 57.
13. दक्षण समाचार, 13 अक्टूर 1999, पृ - 9.
14. राष्ट्र भाषा - अगस्त 2003, पृ - 4.
15. इंटरनेट से (www. vishwahindisammelan.nic.in).
16. वहीं
17. राष्ट्र भाषा - अगस्त 2003, पृ - 8.
18. वहीं, पृ - 7.
19. वहीं, पृ - 6.
20. पावण स्मरण (संपादक) पृ - 303.
21. राष्ट्र भाषा - अगस्त 2003, पृ - 13.

पंचम अध्याय

विश्व पटल पर हिन्दी की स्थिति

भाषा उन महत्वपूर्ण इकाइयों में एक है जो मानव जाति को एक सूत्र में पिरोकर रखती हैं। भाषा के स्वरूप का निर्धारण मानव समाज द्वारा होता है और मनुष्य तथा समाज की पहचान भाषा से होती है। इसीलिए प्रख्यात रूसी विद्वान मिखाइल बाख्तिन का कहना था कि भाषा ही समाज है। अतः मानव समाज का मनोवैज्ञानिक, ऐतिहासिक अथवा भौगोलिक परिवर्तन भाषा के स्वरूप को भी एक नया मोड़ देता है। मानव का स्थान परिवर्तन उसकी आवश्यकताओं और बाध्यताओं के कारण होता है। निश्चित रूप से भाषा मानव की सहचारिणी है। शौक़, आवश्यकता या कार्य की बाध्यता पड़ने पर जब मानव विश्व के दूसरे देशों में प्रस्थान करता है तो उसकी भाषा भी भौगोलिक विस्तार पाती है। कभी-कभी इच्छानुसार या आवश्यकतानुसार हम दूसरे देशों की भाषा का पठन-पाठन या उसमें गंभीर शोध-अध्ययन भी करते हैं।

पिछले डेढ़, पौने दो सौ वर्षों में वैश्विक पटल पर हिन्दी भाषा का विस्तार हुआ है। यह भारत के करोड़ों लोगों द्वारा बोली जाती है। यह भारत की आत्मा है। करोड़ों भारतीय दुनिया के अनेकानेक देशों में रह रहे हैं। उनमें से अधिकांश लोग आज भी इसका प्रयोग करते हैं। यह विश्व के कई देशों में बोली और पढ़ाई जाती है। अपने विराट वैश्विक स्वरूप के कारण ही दुनिया की तीसरी (चीन और स्पेनी भाषाओं के बाद) सर्वाधिक बोली जाने वाली भाषा है। संसार की प्रमुख और शक्तिशाली भाषाओं के मध्य अपना स्थान बनाने के लिए संघर्षरत हिन्दी की वैश्विकता का प्रमाण प्रस्तुत करते हुए 'आचार्य हजारी प्रसाद द्विवेदी स्मृति न्यास' के अध्यक्ष लक्ष्मीमल्ल सिंघवी जी कहते हैं कि ''हिन्दी विश्व के कोटि कोटि जनगण

का कंठ स्वर है। उनकी पहचान है, सांस्कृतिक अस्मिता का मुखर स्वरूप है, अन्तर्राष्ट्रीय संबंधों का सेतु है।''[1] हिन्दी की अन्तर्राष्ट्रीय स्थिति पर प्रकाश डालते हुए 'गगनांचल' पत्रिका के संपादक श्री कन्हैयालाल नन्दन अपने सम्पादकीय में लिखते हैं - ''पिछले दिनों विश्व की एक स्तरीय और अन्तर्राष्ट्रीय संस्था ने हिन्दी के अनेक रचनाकारों की कालजयी कृतियों के अनुवाद प्रकाशित करके अप्रत्यक्षतः हिन्दी की अन्तर्राष्ट्रीयता को प्रमाणित किया है।'[2] आगे वे कहते हैं कि ''यदि इस बात पर ध्यान दें तो हम पाएँगे कि हिन्दी मात्र एक राष्ट्रभाषा ही नहीं है, वरन् वह मनुष्यता की सर्वोच्च मानवीय अनुगूँजों की अभिव्यक्ति है, जो उसकी अति समृद्ध संस्कृति की धात्री है।''[3]

विश्व के मानचित्र पर अगर हिन्दी की तलाश की जाय तो पता चलता है कि सैकड़ों देशों में भारतीय प्रवासी निवास करते हैं। जहाँ भी भारतीय प्रवासी हैं वहाँ हिन्दी किसी न किसी रूप में जानी या प्रयोग में लाई जाती है। 'विश्व क्षितिज पर हिन्दी' नामक लेख में डॉ.जयन्ती प्रसाद नौटियाल मानते हैं कि ''हिन्दी विश्व के लगभग 73 देशों में स्थान बना चुकी है, भारत के प्रायः सभी विश्वविद्यालयों में तो हिन्दी पढ़ाई ही जाती है, इसके अलावा विश्व के 110 विश्वविद्यालयों/संस्थानों में हिन्दी का अध्ययन अध्यापन होता है। विश्व में जहाँ भी भारतीय मूल के निवासी हैं वहाँ किसी न किसी रूप में अर्थात् राजभाषा, सहभाषा, संस्कार की भाषा अथवा शास्त्रीय (प्राचीन) भाषा की हैसियत से विद्यमान है।''[4] इसी लेख में उन्होंने कुछ प्रमुख राष्ट्रों की सूची भी प्रस्तुत की है जहाँ हिन्दी किसी न किसी रूप में विद्यमान है। सूची निम्नवत है - अर्जेन्टाइना, बहरीन, बाँग्लादेश, भूटान, म्यानमार, कोस्टारिका, फिजी, ग्वाटेमाला गणतंत्र, गयाना, इण्डोनेशिया, कुवैत, मलेशिया, मॉरिशस, नेपाल, ओमान, पाकिस्तान, पेरु, कतर, सऊदी अरब, अमीरात, दक्षिण यमन, संयुक्त राज अमेरिका आदि। इन राष्ट्रों के बारे में उन्होंने विस्तार से जानकारी प्रस्तुत की है। कुछ अन्य ऐसे राष्ट्रों का भी ज़िक्र उन्होंने किया है जहाँ हिन्दी के महत्व को समझा जाता है और वहाँ अध्ययन -अध्यापन तथा प्रकाशन

होता है। इनमें ''रूस, संयुक्त राज्य अमेरिका, ब्रिटेन, तुर्की, स्पेन, तजानिया, स्वीडन, स्पेन, रोमानिया, पोलैण्ड, फिलिप्पीन्स, नार्वे, केन्या, लाइबेरिया, मेक्सिको, आस्ट्रेलिया, आस्ट्रिया बहरीन, बेल्जियम, जर्मनी, डेन्मार्क, चेकेस्लोवाकिया, चीन, कनाडा, बल्गेरिया, बेल्जियम, फिनलैण्ड, फ़्रांस, जर्मन, हॉलैंड, इटली, जपान है।''[5]

इसके साथ ही ही उन्होंने अनेक देशों में हिन्दी पढ़ाने वाले विद्यालयों/ संस्थानों और विश्वविद्यालयों की तालिका प्रस्तुत की है। (जिसे परिशिष्ट में देखा जा सकता है।)

5.1 विश्व पटल पर हिन्दी की स्थिति : अपेक्षाएँ और संभावनाएँ :

अन्तर्राष्ट्रीय स्तर पर हिन्दी की वर्तमान स्थिति मजबूत है। भले ही इसका अतीत काफ़ी संघर्षमय रहा हो परंतु भविष्य उत्साहवर्द्धक लगता है। आज इसकी वैश्विक स्थिति सम्माननीय और प्रगतिवान है। आज दुनिया भर में भाषिक और साहित्यिक रूप से हिन्दी का प्रचार-प्रसार बदस्तूर जारी है। विदेशों में बसे भारतीय मूल के लोगों की संख्या करोड़ों में है। इनमें प्रायः सभी का हिन्दी से विशेष लगाव है। अपेक्षागत रूप से बैठका, मंदिर, सामाजिक कार्य और धार्मिक सुअवसर को छोड़कर प्रशासन और शिक्षा के क्षेत्र में, विश्व स्तर पर हिन्दी को अभी भी महत्त्वपूर्ण और शक्तिशाली भाषा का पद प्राप्त करना है। आने वाले वर्षों में अन्तर्राष्ट्रीय स्तर पर भारत की कूटनीतिक प्रतिष्ठा में बढोत्तरी, भारतीयों के निरंतर अप्रवास और भारत का एक बड़ा व्यावसायिक बाजार बनने के साथ ही हिन्दी के विस्तार की संभावनाओं का द्वार खुला हुआ दिखाई पड़ता है।

कई देशों में भारतीय मूल के नेताओं के हाथों में सत्ता की बागडोर होने के कारण हिन्दी के उभरने और उसकी प्रतिष्ठा वृद्धि का अवसर बढ़ जाता है। विश्व हिंदी सम्मेलनों के सहारे वैश्विक स्तर पर हिन्दी की पत्रकारिता को भी व्यापक बल और प्रसार मिला है। पूर्व और मध्य एशियाई देशों से भारत का व्यापार बढ़ने के

कारण वहाँ हिन्दी के विकास की आशा भी बँधती है। दुनिया भर में कंप्यूटर प्रयोग की माँग बढ़ रही है। इससे विज्ञान सम्मत व्याकरण वाली भाषा की प्रधान्यता बढ़ेगी और निस्संदेह विज्ञान सम्मत व्याकरण होने के कारण हिन्दी के भविष्य में अगुवा बनने की संभावना है।

हिन्दी को चीनी के बाद विश्व के दूसरे स्थान की अधिकारिणी बताते हुए डॉ.संजय चौहान मानते हैं कि ''भारतीय मूल के लगभग एक करोड़ तीस लाख लोग दुनिया के 132 देशों में फैले हुए हैं। इसमें आधे से अधिक हिन्दी का प्रयोग करते हैं।''[6] 'गगनांचल' में छपे 'हिन्दी : अन्तर्राष्ट्रीय क्षितिज में' नामक लेख में हिमांशु जोशी ने लिखा है ''विश्व की तीसरी सबसे बड़ी भाषा कही जाती है हिन्दी। पिछली जनगणना (1991) के अनुसार भारत में हिन्दी भाषियों की कुल संख्या लगभग 46 करोड़ थी, जिनमें लगभग 19 करोड़ वे लोग थे जिनकी मातृभाषा हिन्दी न होते हुए भी उसे उसी तरह व्यवहार में लाने की क्षमता रखते हैं जैसे मूल हिन्दी भाषी। एक करोड़ बीस लाख भारतीय मूल के लोग विश्व के 132 देशों में बिखरे हुए हैं, जिनमें आधे से अधिक हिन्दी से परिचित ही नहीं, उसे व्यवहार में भी लाते हैं।''[7] उन्होंने कई देशों के नामों का उल्लेख भी किया है जैसे मॉरिशस, फिजी, सूरीनाम, गयाना, त्रिनिडाड आदि।

दरअसल वैसे देश जहाँ बंधुआ मजदूरों को शर्तबन्दी प्रथा के अंतर्गत ले जाया गया था हिन्दी को अपनी अस्मिता का परिचायक मानते हैं। इन्हें भारत की आजादी से पहले सन् 1834 से लेकर सन् 1921 तक ले जाया गया था। इन्हें खड़ी बोली हिन्दी भी ठीक से नहीं आती थी। हिन्दी बोलने वालों की दूसरों पौध आजादी के बाद विकसित देशों में जाकर बसने लगी। ये लोग डॉक्टर, इंजीनियर, वैज्ञानिक, व्यवसायी, लेखक, कलाकार, शिक्षाविद आदि थे। इनमें से अधिकांश आस्ट्रेलिया, अमेरिका, इंग्लैण्ड और यूरोप के अन्य देशों में जाकर जीविकोपार्जन के लिए गए। शर्तबन्द मजदूरों की संततियाँ आज अपने-अपने देशों की भाग्य निर्धारक हैं। आज भारतीयों और हिन्दी जानने वालों की एक बड़ी संख्या हमारे सम्मुख है।

विश्व भर में जहाँ हम हिन्दी की पहुँच और प्रयोग देखते हैं उनके नामों की एक लंबी श्रृंखला है। कुछ प्रमुख नामों में अमेरिका, ऑस्ट्रेलिया, इंग्लैण्ड, इंडोनेशिया, इटली, कजकिस्तान, कनाडा, कोरिया, गयाना, जर्मनी, जापान, डेन्मार्क, ट्रिनिडाड, थाइलेण्ड, नाइजीरिया, फाँस, फिनलैण्ड, फीजी, ब्राजील, बेल्जियम, रूस, वियतनाम, सिंगापुर, स्पेन, स्विट्‌जरलैण्ड, स्वीडन, हंगरी, हांगकांग, हालैण्ड, सोमालिया, मंगोलिया, कंबोडिया, श्रीलंका, अफगनिस्तान, पोलैण्ड, चीन, पेरू, स्पेन, नार्वे, आस्ट्रिया, तंजानियाँ, कोलंबिया, दक्षिण अफ्रीका, जाइरे, चिली, चेकोस्लोवाकिया, क्यूबा, पाकिस्तान, बाँग्लादेश, नेपाल, भूटान, तुर्की, न्यूजीलैण्ड, संयुक्त अमेरिका, ओमान, सऊदी अरब, कुवैत, कतार, नाइजीरिया, कीनिया, ईरान, डेन्मार्क, बहरीन आदि आते हैं।

5.1.1 हिन्दी और अन्तर्राष्ट्रीय संगोष्ठी एवं सम्मेलन :

विश्व पटल पर हिन्दी को स्थापित करने में अन्तर्राष्ट्रीय स्तर की गोष्ठियाँ एवं सम्मेलनों का भी सहयोग रहा है। देश-विदेशों में कई संस्थाएँ निष्काम भाव से हिन्दी के वैश्विक प्रचार-प्रसार के लिए लगातार प्रयत्न कर रही हैं। अन्तर्राष्ट्रीय स्तर के सम्मेलनों में कुछ प्रमुख इस प्रकार हैं - 'सूरीनाम हिन्दी परिषद' द्वारा सन् 1979 और सन् 1993 में अन्तर्राष्ट्रीय हिन्दी सम्मेलनों का आयोजन, 1992 में ट्रिनिडाड और टुबैगो में सन् 1992 तथा 1993 में स्कैण्डेनेविया साहित्य एवं संस्कृति मंच द्वारा नार्वे में 1988 में, नीदरलैण्ड में सन् 1993 में, मेन्चेस्टर-इंग्लैण्ड में और अमेरिका अन्तर्राष्ट्रीय हिन्दी समिति द्वारा सन् 2000 में आयोजित अधिवेशन आदि।

इनके अलावा आज तक आयोजित सातों विश्व हिन्दी सम्मेलन जिनका आयोजन नागपुर-भारत (1975) में, पोटलुंईस-मॉरिशस (1976) में, दिल्ली-भारत (1983) में, मॉरिशस भारत (199) में, पोर्ट ऑफ़ स्पेन-ट्रिनिडाड और टुबैगो (1996) में, लंदन-इंग्लैण्ड (1999) में और पारामारीबो-सूरीनाम (2003) में किया

गया, ने विश्व पटल पर हिन्दी की स्थिति को मजबूत किया है।

5.1.2 विश्वपटल पर हिन्दी की स्थिति और प्रचार संस्थाएँ :

हिन्दी को विश्व पटल पर स्थापित करने के पीछे कई सरकारी, ग़ैरसरकारी, भारतीय, प्रवासी भारतीयों की संस्थाएँ एवं अन्य विदेशी स्वैच्छिक संस्थाओं का प्रमुख सहयोग रहा है। मॉरिशस की आर्य समाज, हिन्दी लेखक संघ, आर्य परोपकारिणी सभा, तिलक विद्यालय, हिन्दी प्रचारिणी सभा और रविवेद प्रचारिणी सभा आदि प्रमुख हैं। सूरीनाम की सूरीनामी हिन्दी परिषद, जयप्रकाश हिन्दी संस्थान, संयुक्त राज्य अमेरिका की अन्तर्राष्ट्रीय हिन्दी परिषद, अन्तर्राष्ट्रीय हिन्दी समिति, कनाडा की हिन्दी परिषद, हिन्दी संघ, हिन्दी लिटररी सोसाइटी एवं मुकुल हिन्दी स्कूल आदि संस्थाएँ हिन्दी प्रचार में संलग्न हैं। गयाना में हिन्दी प्रचार सभा, इंग्लैण्ड में हिन्दी समिति, हिन्दी परिषद आदि प्रमुख हैं।

भारतीय संस्थाओं में 'राजभाषा प्रचार समिति वर्धा' और 'हिन्दी साहित्य सम्मेलन, प्रयाग' जैसी संस्थाओं ने बढ़ चढ़कर अपना योगदान दिया। अक्सर ऐसा देखा गया है कि विदेशों में स्थापित प्रायः सभी भारतीय राजदूतावास के अधिकारियों ने हिन्दी के प्रचार सरकारी सहयोग देने में उदासीनता बरती है, यहाँ तक कि हिन्दी के काम की उपेक्षा भी की है। इसमें कुछ अपवाद अवश्य हैं, इसके बावजूद संयुक्त राष्ट्र संघ तथा अन्य अन्तर्राष्ट्रीय संगठनों तक हिन्दी किसी तरह पहुँची। ''हिन्दी को संयुक्त राष्ट्र संघ की अधिकारिक भाषा बनाने के लिए संयुक्त राष्ट्र महासभा की प्रक्रिया निभाने वाली के नियम 51 में संशोधन करने के लिए प्रस्ताव अपेक्षित है।''[8] जिसके लिए गंभीर प्रयत्नों की अपेक्षा है। परंतु संयुक्त राष्ट्र के संगठन युनेस्को में हिन्दी सीमित रूप से प्रवेश पा चुकी है। अटल बिहारी वाजपेयी जैसे नेता संयुक्त राष्ट्र संघ को एकाधिकबार हिन्दी में सम्बोधित कर राष्ट्रीय स्वाभिमान का परिचय दे चुके हैं।

हिन्दी में रचना करने वाले अनेक विदेशी लेखक, कवि और विद्वान हैं जो अपने देश से बाहर दुनिया भर में प्रसिद्ध हुए हैं। हिन्दी भाषा और साहित्य के क्षेत्र में उनका योगदान स्थायी है। मॉरिशस के प्रो.वासुदेव विष्णुदयाल, ब्रजेन्द्र कुमार भगत 'मधुकर', सोमदत्त बखोरी, अभिमन्यु अनत, मुनीश्वर लाल चिन्तामणि, रामदेव धुरंधर और प्रह्लाद रामशरण, फीजी के श्री विवेकानन्द शर्मा और कमला प्रसाद, सूरीनाम की श्रीमती कमला जगमोहन सिंह, ट्रिनिडाड के शंभुनाथ कपिलदेव, अमेरिका की कुमारी कैरीन सोमर, इंग्लैण्ड के डॉ.मैकग्रेगर, सोवियत संघ रूस के डॉ.लिप्रोव्हस्की वारन्निकोव और डॉ.चेलिशेव, पोलैण्ड के डॉ.वृस्की और दानूता स्ताशिक आदि प्रमुख हैं। इनके द्वारा हिन्दी की प्रतिष्ठा बढ़ी और फैली है।

उपभोक्तावाद के इस जमाने में इलेक्ट्रॉनिक समाचार माध्यमों और मनोरंजन के चैनलों पर प्रसारित किए जा रहे विज्ञापनों, समाचारों एवं मनोरंजन तथा शिक्षाप्रद कार्यक्रमों द्वारा भी हिन्दी के प्रति लोगों की जागरूकता बढ़ी है। भारतीय खिलाड़ियों के बाहर जाने, बाहरी खिलाड़ियों के भारत में आकर खेलने, विदेशी छात्रों के भारत भ्रमण, शिक्षा अध्ययन के कारण भी हिन्दी की स्थिति दृढ़ होती है।

आज के वैश्वीकरण के युग में बाजार महत्वपूर्ण हो गया है। भारत की ओर बहुराष्ट्रीय कंपनियों और बड़े उत्पादक देशों ने एक ऐसे बड़े संभावित बाजार के रूप में देखा है जहाँ तमाम उत्पाद खप सकते हैं। अतः अधिकांश भारतीयों के बटुए तक पहुँचने के लिए हिन्दी माध्यम अपनाना जरूरी है। यह आर्थिक- व्यावसायिक बात उन्हें हिन्दी जानने पर मजबूर कर रही है। दुनिया के सबसे महँगे फुटबाल खिलाड़ी इंग्लैण्ड के बेखम के हाथों पर अपनी पत्नी विक्टोरिया का नाम लिखाना या क्रिकेट दुनिया के सबसे तेज आस्ट्रेलियाई गेंदबाज ब्रैटली का हिन्दी बोलने की कोशिश जैसी कुछ बातें भी कहीं न कहीं हिन्दी की वैश्विक स्थिति का पता देती है। मॉरिशस में विश्व हिन्दी के स्थायी सचिवालय की तथा वर्धा में हिन्दी अन्तर्राष्ट्रीय

विश्वविद्यालय की स्थापना इसके बढ़ते चरण और विकास की दो स्पष्ट निशानियाँ हैं।

आज हिन्दी का प्रयोग केवल वाणिज्य व्यवसाय के ही नहीं शिक्षा, विज्ञान, सूचना प्रौद्योगिकी, कम्प्यूटरीकरण, भाषिकीय एटलस, व्यावसायिक क्षेत्र, ब्राण्ड स्थापना, संवैधानिक कार्यान्वयन आदि के क्षेत्रों में भी हो रहा है। आज हम वैश्विक पटल पर हिन्दी के व्यापक उभरते हुए स्वरूप की सकारात्मक कल्पना कर सकते हैं। हिन्दी की भूमण्डलीकरण के प्रति आशावान और सकारात्मक दृष्टि रखते हुए विमलेशकांति वर्मा लिखते हैं - ''स्पष्ट है कि अन्तर्राष्ट्रीय पटल पर हिन्दी आज विश्व की एक प्रतिष्ठित भाषा के रूप में मान्यता प्राप्त भाषा है जो अपनी संख्या के बल के आधार पर तो विश्व की दूसरी प्रमुख भाषा है ही, वह विश्व की एक ऐसी भाषा है जिसे विश्व के किसी भी देश में बसे हुए भारतीय, चाहे वे मूलतः किसी भी भाषा के बोलने वाले रहे हों, हिन्दी को अपनी अस्मिता से जुड़ा हुआ मानते हैं, वे उसकी सुरक्षा तथा प्रतिष्ठा के प्रति निरन्तर सचेत हैं। .... हिन्दी आज भारत की ही भाषा ही नहीं, विश्व भाषा का स्थान ले चुकी है।''[9] हिन्दी के विश्व-भाषा बनने अर्थात् तकनीकी रूप से संयुक्त राष्ट्र संघ की भाषा बनने के रास्ते में कई समस्याएँ मुँह फैलाए खड़ी दीखती है। इन समस्याओं के समाधान हेतु सरकारी, गैर सरकारी और सामाजिक तीनों ही तंत्रों को जिम्मेदारी पूर्वक प्रयास करना होगा।

निस्संदेह चीनी भाषा विश्व की सर्वाधिक बोली जाने वाली भाषा है। दूसरे स्थान के लिए स्पेनी, हिन्दी और अंग्रेजी में होड़ है। यद्यपि इन भाषाओं के बोलने वालों की निश्चित संख्या नहीं बतायी जा सकती। फिर भी अनुमान लगाना कठिन नहीं। स्पेनी कई देशों में बोली जाती है, यथा स्पेन, कोलम्बिया, वेनेजुएला, ब्राजील, अर्जेंटीना, चिली आदि में। अंग्रेजी का प्रयोग ब्रिटेन, उत्तरी अमेरिका, आस्ट्रलिया, न्यूजीलैंड तथा छिटपुट रूप में दक्षिण अफ्रीका, भारत आदि में होता है।

शिक्षा संस्थानों में अध्ययन-अध्यापन की दृष्टि से महत्वपूर्ण होने के कारण हिन्दी दुनिया भर के संस्थानों, विद्यालयों एवं विश्वविद्यालयों में पढाई जाती है। परिशिष्ट में उन्हीं सारे नामों का उल्लेख किया गया है। इसमें भारतीय संस्थाओं, महाविद्यालयों या विश्वविद्यालयों की सूची नहीं दी गई है।

5.1.3 विश्वपटल पर हिन्दी की समस्याएँ

भले ही हिन्दी ने वैश्विक विस्तार पा लिया हो, परंतु आज भी यह संतोषजनक रूप से स्थापित नहीं हो सकी है। विस्तार के रास्ते में इसे कई समस्याओं का सामना करना पड़ा है। इन समस्याओं के दूर करने अथवा कम करने हेतु इस दिशा में कई आवश्यक और व्यावहारिक कदम उठाने की आवश्यकता है। इसके लिए विदेशों से सहयोग हेतु कई रचनात्मक संधियाँ एवं करार की आवश्यकता है। राष्ट्रीय और अंतर्राष्ट्रीय जैसे बहुपक्षीय सम्मेलनों से भी इस दिशा में मदद् मिल सकती है।

भाषा का वैश्विक महत्व स्वराष्ट्र में इसे प्राप्त होने वाले सम्मान पर निर्भर कर करता है। भारत की आजादी के बाद हिन्दी को जब राजभाषा का दर्जा दिया गया तब दुनिया के कई राष्ट्रों के विश्वविद्यालयों में इसके विभाग खोले गये। धीरे-धीरे भारत सरकार के राजभाषा संबंधी नियम और नीतियाँ नरम होती गयीं, जिसका असर दूसरे देशों पर भी पड़ा। देश में ही उचित सम्मान न पानेवाली भाषा के वैश्विक विकास की बात कितनी सार्थक होगी यह एक जटिल प्रश्न है। भारत सरकार को राजनीतिक मजबूरियों से दूर हट कर राजभाषा को सम्मान देते हुए उचित दर्जा प्रदान करना होगा। इससे हिन्दी के वैश्विक विकास को मजबूती प्रदान करने में सहयता मिल सकती है। भारतीय समाज विशेषकर, हिन्दी समाज भी कहीं न कहीं इसकी अवनति के लिए जिम्मेदार रहा है। युवा पीढ़ी में हिन्दी के प्रति उदासीनता का भाव इसके लिए हानिकारक है। हिन्दी के अंतर्राष्ट्रीय विकास से

संबंधित विभिन्न देशों में हो रहे अध्ययन-अध्यापन पर अधिक ध्यान दे होगा। शिक्षा को मात्र कक्षा तक सीमित न करके इसके सामाजिक एवं व्यावहारिक स्वरूप को उत्साहित करना होगा। इसका प्रयोग वार्तालाप के क्षेत्र में मौखिक रूप से अधिक करना होगा। हिन्दी भाषा शिक्षण में विशेष कर स्कूलों में इसके लिपि, व्याकरण, पाठन और वार्तालाप प्रयोग की जटिलता इसके विकास में बाधित है। इसको कृत्रिमता से दूर करके सरल बनाना होगा। स्कूलों में कुशल अध्यापन हेतु दक्ष अध्यापकों की नियुक्ति न हो पाना आज एक प्रमुख समस्या है।

विश्व में हिन्दी के कई रूप देखने को मिलते है। सूरीनाम में तो इसे 'रोमन लिपि' में लिखा जाता है। फीजी में 'फीजी बात' चलती है। मॉरिशस में भोजपुरी का रूप प्रबल है। सुविधा, सरलीकरण, बोधगम्यता और कुशल संप्रेषण हेतु इसका एक मानक स्तर न होना भी एक समस्या है। मानक हिन्दी के अपर्याप्त ज्ञान से इसके दूरगामी नकारात्मक परिणाम हो सकते है।

साहित्य के क्षेत्र में, विदेशों में रह रहें लोगों को भारत में हो रहे प्रकाशनों की सूचना और वहीं की सूचना भारत में उपलब्ध होने पर, लोगों की रुचि में बढ़ावा हो सकता है। हिन्दी के विकास में तेजी नहीं आ रही है क्योंकि इसकी व्यावसायिकता का मूल्य कम हुआ है। इसके सहारे नौकरी की प्राप्ति या अन्य वृत्तीय साधनों में विशेष फायदा नहीं हो रहा है। इससे लोग अपना ज्यादा समय और पैसा हिन्दी शिक्षण के पीछे व्यय नहीं करना चाहते। मीडिया और जनसंचार माध्यमों में हिन्दी की प्रबलता में कमी लोगों को हतोत्साहित करती है।

सरकार द्वारा हिन्दी प्रचार-प्रसार करनेवाली संस्थाओं और लोगों को उचित महत्व, प्रोत्साहन और आर्थिक सहायता नहीं मिल रही है। यह बात उन्हें निराश करती है। हिन्दी के लिए यह शुभ संकेत नहीं है। हिन्दी को औद्योगिकी-प्रौद्योगिकी एवं विज्ञान की भाषा के रूप में बढ़ावा न मिलना भी इसके विकास के मार्ग में

बाधाएँ उत्पन्न करता है। अनुवाद को भी कृत्रिमता से हटाकर सरल रूप देना होगा। जिससे लोग इसके प्रति उदासीन न रहें।

हिन्दी को अपनी अंतर्राष्ट्रीय स्थिति मजबूत करने के लिए अँग्रेजी से संघर्ष करना पड़ रहा हैं। इसे सहअस्तित्व का भाव अपनाना होगा। प्रायः सभी विदेशी भाषाओं में दुभाषी शब्द कोशों का न होना, शिक्षण हेतु पुस्तकों का अभाव, भारतीय दूतावासों के कर्मचारियों और उच्चाधिकारियों का दूतावास में हिन्दी को महत्व न देना इसके वैश्वक प्रचार-प्रसार में रुकावट डालता है। विश्व हिन्दी सम्मेलनों की अनिश्चितता और संयुक्त राष्ट्रसंघ में इसका शामिल न होना भी इसके अंतर्राष्ट्रीय स्वरूप को कम आंकना है। इसके अलावा भी हिन्दी के विस्तार में रुकावट डालनेवाली छोटी बड़ी अनेक समस्याएँ है ; जिन का समाधान किए बिना इस का प्रसार संभव नहीं। कमोवेश यही सारी बाते मॉरिशस में भी हिन्दी की स्थिति एवं समस्याओं पर लागू होती है।

* * *

संदर्भ सूची

1. स्मारिका - सातवाँ विश्व हिन्दी सम्मेलन, जून 2003, पृ - 5.
2. गगनांचल, जुलाई-सितंबर 1999, पृ - 10.
3. वही
4. राष्ट्रभाषा हिन्दी - जनवरी 2002, पृ - 7.
5. वही, पृ - 8.
6. राष्ट्रभाषा हिन्दी - नवंबर 2002.
7. गगनांचल, जुलाई-सितंबर 1999, पृ - 37.
8. विश्व में हिन्दी, खण्ड - 1, पृ - 46.
9. फीजी में हिन्दी : स्वरूप और विकास - विमलेशकांति वर्मा और धीरा वर्मा, पृ - 7.

उपसंहार

भारत विविधताओं से परिपूर्ण देश है। धर्म-सम्पद्राय के साथ भाषिक विविधता देश की प्रमुख विशेषता है। भारत दुनिया का ऐसा देश है जहाँ उसके अनेक प्रान्तों के विभाजन का आधार क्षेत्रीय भाषाएँ रही हैं। ''भारतीय संविधान में अनुसूचित 18 मुख्य भाषाएँ हैं और 418 सूचित भाषाएँ; इनमें से प्रत्येक भाषा बोलने वाले दस हजार से ऊपर हैं। हमारी आकाशवाणी 24 भाषाओं और 416 बोलियों में प्रसारण करती है। समाचार पत्र और पत्रिकाएँ कम से कम 38 भाषाओं में प्रकाशित होती हैं; स्कूलों में 67 भाषाएँ पढ़ाई जाती हैं और 80 भाषाओं में साहित्यिक कृतियाँ निकलती हैं। भारतीय संघ में आज 19 राज्य हैं, 6 संघ-शासित क्षेत्र-राज्य हैं। इनमें से अनेक का गठन भाषाई आधार पर सन् 1956 में किया गया था। .... भारत में सोलह सौ से अधिक भाषाएँ-बोलियाँ मातृभाषा के रूप में प्रचलित हैं। केवल हिन्दी के 48 रूप हैं।''[1] आज भाषाओं की संख्या 18 से बढ़कर 22 हो गई है और राज्यों की संख्या भी बढी है जबकि अन्य तथ्य प्रायः वे ही हैं। नई भाषाओं में मैथिली, संथाली, डोंगरी तथा बोडो को संसद ने संविधान के सौवें संशोधन के द्वारा अठारहवीं अनुसूची की भाषाओं में जोड़ दिया है। पहले की 18 भाषाएँ इस प्रकार हैं - हिन्दी, तेलुगु, बंगला, मराठी, तमिल, उर्दू, गुजराती, कन्नड़, मलयालम, उड़िया, पंजाबी, असमिया, कश्मीरी, सिन्धी, संस्कृत, कोंकणी, मणिपुरी और नेपाली। आजादी के पूर्व हिन्दी के प्रति नेताओं एवं प्रशासकों का जो झुकाव था, उत्तरोत्तर वह क्षीण होता गया है। साठ के दशक में राष्ट्रीय स्तर पर राजनीतिक विवाद खड़ा किया गया। नेताओं ने इस तरह का रवैया अपनाया कि मानो भारतीय भाषाओं का समूचा अस्तित्व और अस्मिता ख़तरे में है जान पडने लगा। हिन्दी एवं दूसरी भारतीय भाषाओं के प्रति लोगों में ऐसी भावना जगाने की दुर्नीति चलाई गई कि लगे कि अंग्रेजी की तुलना में हिन्दी समेत वे सभी अविकसित हैं। इसमें नेताओं

के साथ-साथ प्रमुख हाथ नौकरशाहों का भी था। भाषाओं का यह संकट विश्वसनीय नहीं लगता। यह बात सतही लगती है और अगर यह सच है तो यह भारतीय भाषाओं का नहीं बल्कि भारतीयता की अस्मिता के ऊपर मंडराने वाला संकट माना जा सकता है। भारतीय जनमानस, पूँजीपति, नेताओं एवं सरकार को इसके प्रति अधिक सकारात्मक रवैया अपनाना होगा। आजादी के बाद के प्रायः छः दशक बीत चुके हैं, परन्तु भारतीय भाषा नीति में आज भी तीव्रगामी नीतियों का अभाव एवं राजनीतिक अनिच्छा देखने को मिलती है। यह रुख कहीं न कहीं नवीन औपनिवेशिकता का आभास देता है।

हिन्दी को गुणात्मक स्तर पर सफलता के शीर्ष पर लाने के लिए इसकी लिपि के व्यापक प्रचार-प्रसार के गहन प्रयास चल रहे हैं। अपनी विविधता के कारण हिन्दी बहुरंगी सांस्कृतिक ढाँचे की सांस्कृतिक अभिव्यक्ति में सहायक है। भारत से बाहर फैली हिन्दी में इसका सर्वाधिक प्रयोग विभिन्न देशों में फैले गिरमिटिया (शर्तबन्द) मजदूरों की संततियों द्वारा होता है। सन् 2003 में जून 5 से 9 तक संपन्न होने वाले विश्व हिन्दी सम्मेलन के दौरान दिए गए अपने संदेश में सूरीनाम सभा के अध्यक्ष श्री रामदिएन सरोज ने कहा कि ''हिन्दी भाषा अपनी विविध बोलियों के लिए जानी जाती है। यह विविधता उसके बोलने वाले अनुबंधित मजदूरों के स्थान विविधता के कारण थी जिसमें भोजपुरी और अवधी बोलने वालों की प्रधानता थी। अनुबंधित मजदूरों द्वारा बोली जाने वाली उन भाषाओं में उर्दू भी एक थी।''[2] हिन्दी को मात्र एक भाषा मान कर नहीं छोड़ देना चाहिए। किस न किसी रूप में देश के तीन-चौथाई लोगों द्वारा प्रयोग में आने वाली भाषा हिन्दी भाषा राष्ट्रीय भावैक्यकता की भाषा है। संस्कृति का आधार है। भारतीय संविधान के अन्तर्गत अनुच्छेद 351 में इसके विकास के लिए आठवीं अनुसूची में सम्मिलित भाषाओं के रूप, शैली और पदों को आत्मसात करते हुए प्रमुख रूप से संस्कृत से और गौण रूप से अन्य भाषाओं के शब्द ग्रहण करते हुए इसकी संवृद्धि निश्चित की गई है। हिन्दी का प्रचार-प्रसार भारतीय संघ का कर्तव्य मानकर इसे राजभाषा का दर्जा

दिया गया है। सन् 1965 के बाद जो त्रिभाषा सूत्र प्रयोग में आया, वह अपना वांछित प्रभाव पूरी तरह नहीं डाल पाया। अंग्रेजों के ख़िलाफ़ देश की आजादी में सहायक हिन्दी भाषा का संघर्ष राजभाषा के रूप में अंग्रेजी से है। देश को आजादी दिलवाकर हिन्दी स्वयं अंग्रेजी के जाल में फँसी हुई है। इसे एक कुशल सह-अस्तित्व का रास्ता ढूँढ़ना होगा।

गैर-सरकारी प्रयोग एवं साधारण जनता द्वारा सम्पर्क भाषा के पद पर आसीन होने वाली हिन्दी का स्वरूप सुदृढ़ है। भारतीय आर्थिक व्यवस्था आगे चलकर हिन्दी प्रयोग की दिशा को निर्धारित कर सकती है। विश्व में एक बड़ा बाजार होने के कारण भारत, उसकी संस्कृति एवं भाषाओं को अनदेखा नहीं किया जा सकता। इसकी सरलतम वैज्ञानिकता ही इसकी शक्ति है। दुनिया भर के कई देशों में इसका फैलाव इसकी व्यापकता का परिचायक है। हिन्दी में जो सम्प्रेषणशीलता, वैज्ञानिकता एवं पौरुष्य है, वह सर्वत्र व्यापक है। इसी कारण हिन्दी का वैश्विक विकास निरंतर होता रहेगा। दुनिया भर की शिक्षण संस्थाओं में, विश्वविद्यालयों में हिन्दी के पठन-पाठन का दायरा विस्तृत और मजबूत बनाना होगा। यह सब कुछ करने से पहले भारतीय जनता तथा सरकार दोनों को सबसे पहले अपने पल्लू में झाँकना होगा। हिन्दी के भाषिक एवं साहित्यिक विकास में प्रत्येक धर्म, क्षेत्र एवं वर्ग का योगदान रहा है। भारत के साथ अन्तर्राष्ट्रीय स्तर पर स्वैच्छिक हिन्दी संस्थाओं के कार्य अनुकरणीय हैं। आज भी राज्य तथा केन्द्र सरकार द्वारा संचालित संस्थाओं के साथ स्वैच्छिक संस्थाएँ भी भारत के प्रायः सभी प्रान्तों में तदर्थ प्रयत्नशील हैं। हिन्दी की भाषिक अस्मिता, जैसा कि कुछ लोगों द्वारा मान ली गई है, किसी अलग समाज द्वारा जुड़ी हुई नहीं है। सभी भाषाओं की अस्मिता एक सामूहिक अस्मिता है। भारतीय संस्कृति एक है। वह बहुलतावादी है। इसका घेरा मात्र भारत तक ही सीमित नहीं है। वह विश्व भर में फैला हुआ है।

आज एक सांस्कृतिक अवरोध की सी स्थिति बन गई लगती है। यह बात महान सांस्कृतिक विरासत वाले देश भारत के लिए शुभ संकेत कतई नहीं है। ऐसी

पराधीनता शायद राजनीतिक पराधीनता से अधिक सोचनीय है। निस्संदेह ग्रहण की प्रवृत्ति गतिशील भारत का चरित्र है, परन्तु यह ग्राह्य भाव विवेकपूर्ण और मानवीय मूल्य सहित होना चाहिए। अपेक्षित भाषिक परिवर्तन भाषा को परिपुष्ट करने के लिए होने चाहिए। भाषा परिवर्तनशील होने के कारण विकास और ह्रास के दौर से गुजरती रहती है। स्वयं हिन्दी भाषा संस्कृत से लेकर खड़ी बोली तक अपने कई रूपों में हमारे सामने आई है। आदिकाल की भाषा का स्वरूप एवं प्रयोग भक्तिकाल से सम्पूर्ण समानता नहीं रखता। रीतिकाल तक हिन्दी भाषा में मुख्यतः पद्य साहित्य ही रचा गया। आधुनिक काल खड़ी बोली का काल है। आज समूचे हिन्दी साहित्य को मात्र खड़ी बोली की संरचना के माध्यम से समझा जा सकता है। इस तरह भाषा का संरचनात्मक रूप जिस तरह बदलता रहता है, उसी तरह उसके प्रयोग में भी उतार-चढ़ाव आते रहते हैं। इस तरह उसकी अस्मिता में भी कछ परिवर्तन अवश्यंभावी है।

भाषा का सीमा विस्तार, इसके प्रयोग करने वाले लोगों की आर्थिक, राजनीतिक और सामाजिक फैलाव की क्षमता पर बहुत हद तक निर्भर करता है। भारत की अन्तर्राष्ट्रीय पहुँच उसके राज तथा राष्ट्र भाषा हिन्दी के द्वारा अधिक सफल होगी। जीवन्तता लोगों का ध्यान आकर्षित करती है। हिन्दी में जीवन्तता है। वह लोगों का ध्यानाकर्षण कर भी रही है, परन्तु पृष्ठभूमि का पुख्ता होना आवश्यक है। इसके लिए हिन्दी को अपने घर में और मजबूती से सम्मानित होना होगा। हिन्दी के बढ़ते अन्तराष्ट्रीय कदमों को देखते हुए भूतपूर्व प्रधानमंत्री श्री अटलबिहारी वाजपेयी अपने एक संदेश में गर्व से कहते हैं कि ''यह बड़े गर्व की बात है कि आज हिन्दी विश्व के कोने-कोने तक पहुँच चुकी है। विदेशों में रह रहे हमारे भारतीय भाई-बहन, हिन्दी विद्वानों एवं मनीषियों ने हिन्दी भाषा का प्रचार- प्रसार करने में उल्लेखनीय योगदान दिया है। यह भी प्रसन्नता की बात है कि विश्व के कई विश्वविद्यालयों में आज हिन्दी का पठन-पाठन और इसके माध्यम से अनुसंधान कार्य हो रहे हैं। फिर भी आज जरूरत इस बात की है कि हमें विश्व स्तर पर

हिन्दी के व्यापक प्रचार एवं संवर्धन के लिए नये-नये उपाय खोजने होंगे ताकि हिन्दी अन्तर्राष्ट्रीय स्तर पर अपना विशिष्ट स्थान बना सके।''[3]

आज का युग विज्ञान एवं प्रौद्योगिकी का युग है। यह हिन्दी भाषा के लिए चुनौतीपूर्ण साबित होगा। हिन्दी को नये-नये आविष्कारों, विज्ञान एवं प्रौद्योगिकी के नवीन शब्दों की माँग को नयी अभिव्यक्तियों एवं पर्याप्त पारिभाषिक शब्दों से पूरा करने के लिए आवश्यक शब्दों का निर्माण करना होगा। इसके साथ भाषा को सर्वग्राह्य बनाने हेतु रुचिकर उपाय खोजने होंगे। समय आ गया है जब लेखकों, विद्वानों एवं मनीषियों में आपस में संवाद हो और सरस, उपयुक्त भाषा की माँग की चुनौती का सामना करने के लिए व्यावहारिक कदम उठाए जाएँ।

साहित्य की अपनी अलग गति है। वह मात्र वर्त्तमान न होकर अतीत और भविष्य के साथ स्वयं में संपूर्ण होती है। साहित्य बहुआयामी, बहुउद्देशीय एवं बहुकालिक होता है। सामयिक आवश्यकता का निर्दिष्ट समाधान उस भाषा के साहित्यकार उतनी जल्दी शायद ही दे सकेंगे जितनी जल्दी भाषाविद। अतः हिन्दी के भाषा वैज्ञानिकों की जिम्मेदारी अब हिन्दी और भारत तक ही सीमित न होकर वैश्विक बन गई है। संचार माध्यम, प्रौद्योगिकी, लिपि संयोजन या मानक लिपि निर्धारण, कोश निर्माण, शिक्षण एवं मनोरंजन, जगत् संवाद, सम्मेलन, संगोष्ठी आदि के सहारे आने वाले वर्षों में हिन्दी भाषा का स्वरूप निर्धारण करना एवं निखरना होगा। मन की आकांक्षा को व्यावहारिक रूप देने के लिए जिस जिजीविषा और जीवट की जरूरत है वह हिन्दी और हिन्दुस्तान दोनों में है। आवश्यकता है तो उसे स्वयं के अन्तर में देखकर परखने की।

आज हिन्दी की पचासों बोलियाँ न सिर्फ़ हिन्दुस्तान में बल्कि विदेशों में भी बोली जाती हैं। उनकी अपनी-अपनी विविधतापूर्ण शैलियाँ हैं। ब्रज, अवधी, भोजपुरी, राजस्थानी, छत्तीसगढ़ी जैसी बोलियाँ भारत, फीजी, मॉरिशस, सूरीनाम, अमरीका,

इंग्लैण्ड और दक्षिण अफ्रीका आदि देशों में बोली जाती हैं। सूरीनाम में इसकी लिपि रोमन है। इन्हें मॉरिशियन भोजपुरी, सरनामी हिन्दी तथा फीजी बात आदि नामों से जान जाता है।

अन्तर्राष्ट्रीय स्तर पर हिन्दी भाषा का मानक रूप खड़ी बोली है। इसी का सरकारी, गैर-सरकारी कार्यों में, पठन-पाठन में एवं सम्मेलन-गोष्ठी आदि में प्रयोग किया जाता है।

साहित्य के क्षेत्र में आदिकाल, भक्तिकाल, रीतिकाल और आधुनिक काल जैसे प्रायः निर्धारित नामकरणों में अंतिमकाल विविधतापूर्ण है। आज अनेक बोलियों में साहित्यिक सृजन का प्रायः लोप हो चला है। खड़ीबोली में रचनाएँ होती हैं। साहित्य की सभी विधाओं में प्रचुर मात्रा में रचनाएँ हो रही हैं। भारत के साथ विदेशों में काफ़ी साहित्य सृजन हो रहा है। सभी के विषय प्रायः समसामयिक एवं समस्या प्रधान हैं। गद्य लेखन, पद्य की तुलना में अधिक है। परंपरागत काव्यशास्त्रीय नियमों का पालन क्षीण होता जा रहा है। शैली खिचड़ी रूप ले रही है। इन सबके बावजूद अच्छी रचनाएँ प्रकाश में आ रही हैं। फिर भी प्रेमचंद, अज्ञेय, प्रसाद और पंत जैसे लोग आज के लेखकों एवं कवियों पर भारी हैं। आज के समाज में साहित्य के महत्व को लेकर कोई विशेष उत्साह नहीं दिखता। किसी-न-किसी कारण लेखक और कवि या तो समाज से दूर है या फिर लोग उन तक नहीं पहुँच पा रहे हैं। फल निश्चित रूप से उत्साहवर्द्धक नहीं है। इस अवरोध को तोड़ना होगा। अन्यथा इलेक्ट्रानिक युग में हिन्दी साहित्य अपनी महत्ता को कमजोर बना लेगा।

अन्तर्राष्ट्रीय स्तर पर हिन्दी की वर्तमान स्थिति के अस्तित्व के पीछे ठोस कारण हैं। इसकी क्षमता की पहचान होनी चाहिए, अन्यथा हिन्दी तकनीकी-जैसे क्षेत्रों में प्रगति के दौड़ में पिछड़ सकती है। देश का माहौल, आर्थिक एवं तकनीकी स्थिति तथा औद्योगिक विकास भाषा पर प्रभाव डालते हैं। भाषा के तदनुरूप शब्द

गढ़े जाते हैं या लिए जाते हैं। वस्तुपरक दृष्टि के अनुरूप तकनीकी भाषा को गढ़ना होगा। जिस तरह भक्ति आंदोलन के सम्मिलित स्वर ने हिन्दी को एकान्वित और संगठित करके इसकी श्रीवृद्धि की उसी प्रकार आज की आधुनिक प्रगति और माँग के अनुसार साहित्यकारों के साथ भाषा-वैज्ञानिक को एक साथ मिलकर हिन्दी भाषा को सशक्त रूप देना होगा जो जनसाधारण से लेकर अन्तर्राष्ट्रीय स्तर तक जुड़ सके। इसे व्यापक स्तर पर ग्राह्य बनाने के लिए प्रत्यक्ष एवं परोक्ष रूप से अन्य भारतीय भाषा और अंग्रेजी की शब्दावलियों को आत्मसात करना होगा। अन्य भाषाओं से शब्द ग्रहण के बारे में डॉ.सत्येन्द्र कहते हैं कि ''शब्दों को ग्रहण करने की कोई सीमा नहीं है। भाषा समृद्ध होना चाहती है, जितने भी शब्द हैं, वह उनको ग्रहण करना चाहती है, इसमें कोई शक नहीं है। प्रश्न यह है कि क्या हम ज्यों का त्यों ग्रहण करें या उसको बनाकर ग्रहण करें। पराये शब्दों को ग्रहण करते करते कहीं हिन्दी का मौलिक स्वरूप ही न खो जाए।''[4] उन्होंने आगे माना कि ''वे शब्द यदि बहुत उपयोग में आने वाले हैं, बहुत काम में आने वाले हैं, तो उनको हमें स्वीकार करना चाहिए। यदि उनके अनुकूल कोई दूसरे शब्द हमको ऐसे मिलते हैं जो उतने ही प्रिय हैं और उतने ही प्रचलित हैं या थोड़े बहुत कम का अन्तर हो तब भी हमको जो अधिक अपने लगते हैं, उनको हम अपने रूप में ग्रहण करें, या जो शब्द बदलते चले आ रहे हैं, उनको अपना रूप देकर ग्रहण करें।''[5] भावी विश्व-व्यवस्था में अन्य भाषाओं के साथ साथ हिन्दी का भी रूप परिवर्तित होगा। यह परिवर्तन हिन्दी भाषा और साहित्य के लिए कितना सकारात्मक होगा यह तो आने वाला समय ही बताएगा, परन्तु इसे सही दिशा देने के सारे प्रयास अभी से ही किए जाने चाहिए। हिन्दी भाषा के जोरदार विकास को लेकर प्रमुख रूप से जिन दो बातों का रोड़ा अटकाया जाता है, वे हैं - प्रथम, इससे देश बिखराव के रास्ते पर आ सकता है (अगर भारत सरकार ने इसे सब पर थोपने का प्रयास किया तो)। द्वितीय, इसे शिक्षा माध्यम बनाने पर भारत ज्ञान-विज्ञान के क्षेत्र में पिछड़ जाएगा। अगर यह सत्य है तो भारतीय सभ्यता के प्राचीन और आरंभिक तथ्य इससे सहमत

नहीं हैं। अगर अंग्रेजी ही देश की एकता और वैज्ञानिक उन्नति का मूलाधार है तो स्वयं इंग्लैण्ड और उसके उपनिवेश बिखरते नहीं या पूरा का पूरा इंग्लैण्ड ही वैज्ञानिकों की दुनिया होती। रूस, चीन, जापान, फ्रांस, जर्मनी, स्पेन, कोरिया आदि देशों की एकता और वैज्ञानिक विकास अवरुद्ध क्यों नहीं हुआ? नालंदा (ई.पू.चौथी शती), तक्षशिला (ई.पू.सातवीं शती), जैसे दुनिया के प्राचीनतम विश्वविद्यालयों में बिना अंग्रेजी के भी श्रेष्ठतम शिक्षा देना कैसे संभव हुआ? हाँ, अगर भाषा वैज्ञानिक लेखक, विद्वान-मनीषी, देश के राजनीतिक सत्ताधारी अफसरशाह और परभाषा प्रेमी, विद्यार्थी एवं जनता कर्तव्य विमूढ़ होकर हिन्दी भाषा के प्रति आलस्य पूर्ण अर्थहीन रवैया अपना लें तो कोई भी कारण हिन्दी के विकास में अवरोध के लिए काफ़ी है।

अज्ञानवश अथवा जान बूझकर किए गए असंगत तर्क हिन्दी प्रचार के नाम पर वस्तुतः दुष्प्रचार ही करते हैं। इस पर न भारत की जनता को और न ही भारत सरकार को ध्यान देना चाहिए। हिन्दी तकनीकी कार्यों एवं शिक्षा, विशेषकर ज्ञान विज्ञान की शिक्षा, के लिए सर्वथा समर्थ है। आशुलिपि के आविष्कारक पिटमैन ने स्वयं देवनागरी को दुनिया की सभी लिपियों में वैज्ञानिक एवं पूर्ण माना है। इसमें कोई सन्देह नहीं कि हिन्दी एक समृद्ध, सशक्त एवं विश्वव्यापी भाषा है। डॉ.कैलाश चन्द्र भाटिया के अनुसार - ''युनेस्को की मान्यता प्राप्त सात भाषाओं में हिन्दी भी है ओर यह बड़ी तेजी से अन्तर्राष्ट्रीय भाषा के रूप में स्थापित हो रही है। विश्व के सैंतीस देशों में एक सौ तीस विश्वविद्यालयों/संस्थाओं में हिन्दी के पठन-पाठन की व्यवस्था है।''[6]

हिन्दी के विकास के रास्ते में आने वाली अन्य बाधाओं में स्वयं हिन्दी भाषियों की उदासीनता, साधारण लोगों की किंकर्तव्यविमूढ़ता, साम्प्रदायिकता, संकुचित क्षेत्रवाद आदि की काली छाया देखने को मिलती है। आशावादी प्रोत्साहन, राष्ट्रभाषा संबंधी विचार, गंभीर सोच, संभावनाओं का यथार्थवादी दृष्टिकोण आदि के साथ नेताओं, विद्वानों, युवा पीढ़ी के लेखकों और विद्यार्थियों को पुरुषार्थ पूर्वक प्रयास

करने की आवश्यकता है। विदेशों में भी हिन्दी भाषा में अन्तर्निहित सांस्कृतिक तत्वों को उपेक्षित न करके हिन्दी भाषा को ठोस रूप दिया जा सकता है।

भारत और भारत के बाहर की रचनाओं का समान रूप में मूल्यांकन किया जाना चाहिए। प्रवासियों को सृजनहेतु उत्साह और सहयोग की आवश्यकता है, दुराव या अलगाव की नहीं। भाषा-संबंधी प्रश्न भी उनकी सत्तात्मक परिधि में ही हल किए जा सकते हैं। पिछले सात विश्व हिन्दी सम्मेलनों ने हिन्दी को विश्व यात्रा में सफल और स्थापित रूप प्रदान किया है। यह मूल रूप से भारतीयता की भावनाओं, आकांक्षाओं और विभिन्नताओं को ध्वनित करती रही हैं। सभी के सहयोग से इसके वैश्विक केन्द्र खोलकर भाषा-संबंधी परेशानियों को दूर करने का प्रयास करना होगा।

मॉरिशस जैसे देशों में जहाँ हिन्दी को लेकर उत्साहपूर्वक बातें की जाती रही हैं, भारत सरकार को भाषा-संस्कृति पर ज्यादा ध्यान देना होगा। उसे नजदीकी से इसका अवलोकन करना होगा। आवश्यक सहयोग देना होगा। निश्चित रूप से भारतीय सहयोग का कदम मॉरिशसीयों को भारतीयों के करीब लाएगा। ऐसा न सिर्फ़ भाषा-साहित्य के लिए बल्कि दोनों देशों के आपसी संबंध और जनता के लिए हितकारी होगा।

भारत सरकार को हिन्दी की अन्तर्देशीय भूमिका, अन्तर्राष्ट्रीय भूमिका, हिन्दी का व्यवहार एवं शिक्षण, संचार माध्यम में इसके प्रयोग, मनोरंजन के क्षेत्र में इसकी पहुँच, समाचारपत्र-पत्रिकाएँ, हिन्दी की पाठ्य-पुस्तकें, अन्तर्विश्वविद्यालयीन शिक्षण सुविधा, अन्य भाषाओं का हिन्दी में और हिन्दी का अन्य भाषाओं में शब्द कोश, हिन्दी की साहित्यिक कृतियों का विदेशी भाषाओं में अनुवाद, विदेशों में हिन्दी साहित्य का आलोचनात्मक अध्ययन, हिन्दी का कम्प्यूटरीकरण, इंटरनेट पर हिन्दी का व्यापक प्रयोग और भारतीय राजभाषा के रूप में हिन्दी को उचित और आदृत स्थान देने के लिए निःसंकोच और शीघ्र कदम उठाने होंगे। तब कहीं जाकर हिन्दी

को गरिमा की दमक प्राप्त होगी।

हिन्दी की अन्तर्राष्ट्रीयता में विश्व प्रचारित अंग्रेजी भाषा के शब्दों से भी हम लाभ उठा सकते हैं। निःसंदेह हिन्दी सिनेमा और दूरदर्शन के हिन्दी धारावाहिक और कार्यक्रमों ने पिछले दस सालों में देश भर में हिन्दी की एक लहर पैदा कर दी है। यह शुभ संकेत है। पत्रिकाओं की संख्या में बढोत्तरी हुई है।

वैश्विक स्तर पर इसका भाषिक और भौगोलिक दायरा बढ़ रहा है। इसे विश्व भाषा के रूप में लचीली बने रहना होगा। हिन्दी के अन्दर विश्वमन का भाव जितना जागरूक होगा उतनी ही हिन्दी की ग्राह्यता में विस्तार होगा।

इस तरह आगे चलकर हिन्दी को वाणिज्यिक, व्यावसायिक, प्रौद्योगिक, औद्योगिक, सामाजिक-सांस्कृतिक, आध्यात्मिक और साहित्यिक धर्म निभाना होगा। कहना न होगा कि इसकी संवृद्धि और फलश्रुति की कुंजी भारतीयों के हाथ में है। इस पर बहस करने, इसे अपनाने या मंजिल तय करने का समूचे भारतीयों के साथ विदेशी और प्रवासी हिन्दी भाषी एवं हिन्दी प्रेमी का समान अधिकार है। आशा है कि यही अधिकार, कर्तव्य का प्रेरक सिद्ध होगा। इस तरह हिन्दी का विकास एक लीक पर न होकर बहु-आयामी होता हुआ अग्रगामी दिखाई पड़ता है। इस तरह हम देखते हैं कि हिन्दी की अन्तर्राष्ट्रीय स्थिति के मूलाधार उसका क्षेत्रीय, राष्ट्रीय और अन्तर्राष्ट्रीय स्वरूप काफ़ी मज़बूत है। इसके सांस्कृतिक, धार्मिक, राजनीतिक, व्यापारिक, पारंपरिक, सरल स्वरूप, जनसांख्यिक अनुपात, मनोरंजन, साहित्यिक एवं भाषा की वैज्ञानिकता आदि प्रमुख आधार माने जा सकते हैं।

विश्व के कई देशों जैसे मॉरिशस, फीजी, सूरीनाम, अमेरिका, इंग्लैण्ड, हालैण्ड, रूमानिया, बांग्लादेश, नेपाल, बर्मा, जापान, रूस, नार्वे, जर्मनी, फ्राँस आदि देशों में पत्रकारिता के विकास के कारण वहाँ लिखे जाने रहे साहित्य की लम्बी रूपरेखा हमारे सामने दिखती है। यह पत्रकारिता एवं साहित्य लेखन परम्परा अगर

प्रोत्साहन पाती रही तो निश्चित रूप से हिन्दी भाषा और साहित्य के साथ-साथ इन देशों के साथ भारत देश के भी संबंध सुदृढ़ होंगे। यह क्षेत्र शोध के नए द्वार खोलेगा। भारत में प्रकाशित हिन्दी पत्र-पत्रिकाएँ जो विदेशों की जनता तक पहुँचती हैं, उन्हें रचनात्मक और गुणात्मक रूप से दिग्दर्शक बनना होगा जिससे महान भारतीय सांस्कृतिक चेतना का भी सकारात्मक विकास हो और लोगों में भाषा-संस्कृति के प्रति प्रेमभाव अंकुरित हो। भाषा से नजदीकी और नजदीकी से आत्मीयता का विकास होता है। इससे आपसी समस्या के हल की सैद्धांतिक और व्यावहारिक खोज सम्भव हो सकती है। हिन्दी भाषा की वैश्विकता को प्रोत्साहन देते हुए सन् 1996 में ट्रिनिडाड एवं टोबैगो में होने वाले विश्व हिन्दी सम्मेलन के अवसर पर भारत सरकार द्वारा प्रकाशित स्मारिका के लिए भेजे गए संदेश में तत्कालीन राष्ट्रपति श्री शंकर दयाल शर्मा ने इसकी सटीक स्थिति रूपायित की है - ''अपनी सहृदयता, सौहार्दता एवं समन्वय के गुण के कारण आज हिन्दी वहाँ (ट्रिनिडाड एवं टोबैगो) तथा विश्व के अन्य देशों में बसे भारत- वंशियों के बीच संपर्क की भाषा बन गई है। मुझे यह देख कर अच्छा लगा कि वहाँ भारतीय भाषाएँ, कला और संस्कृति के अपने विकास के द्वारा दोनों देशों के भावनात्मक संबंधों और घनिष्ठ बना रही हैं। हिन्दी भाषा इन सबको आपस में जोड़ने का यह महत्वपूर्ण दायित्व निभा रही है।''[7]

यह भी सत्य है कि आज मातृभाषा के रूप में हिन्दी का प्रयोग प्रायः पैंतालीस करोड़ से भी कम लोग करते हैं। परन्तु सम्पर्क भाषा के रूप में प्रायः दुगुने लोग इसका प्रयोग करने की क्षमता रखते हैं। यह संख्या दुनिया की किसी भी भाषा की महानता को पारिभाषित करती है। हिन्दी विश्व की जनता के सम्पर्क की भाषा बनने की राह पर है। इसका भविष्य उज्ज्वल है।

* * *

संदर्भ सूची

1. भारतीय भाषाएँ और राष्ट्रीय अस्मिता, संपादक-डॉ.मुकुन्द द्विवेदी, हिन्दी अकादमी, नई दिल्ली, प्र.सं.2001, पृ.55-56.
2. स्मारिका, सातवाँ विश्व हिन्दी सम्मेलन, पृ.xv.
3. स्मारिका, सातवाँ विश्व हिन्दी सम्मेलन, पृ.xv.
4. आजकल, अगस्त-1997, पृ.57.
5. आजकल, अगस्त-1997, पृ.57.
6. क्षितिज, आई.आई.टी. मुम्बई द्वारा प्रकाशित, मार्च, 2000, अंक-10, पृ.40-42.
7. स्मारिका - पांचवाँ विश्व हिन्दी सम्मेलन, 1996, (राष्ट्रपति संदेश).

परिशिष्ट - 1

'मॉरिशस का हिन्दी साहित्य' नामक पुस्तक में मॉरिशसीय पुस्तकों और लेखकों का प्रारम्भ से 1980 तक के नाम की सूची निम्नवत प्रकाशित की गई है-

क्र.सं.	पुस्तक	लेखक
1.	अलग बसेरा	ज्ञानेश्वर रघुवीर वैरागी
2.	अमर सेदंश	ब्रजेन्द्र भगत 'मधुकर'
3.	अभिशाप	परमेश्वर तिवारी
4.	अतिथि	हीरालाल लीलाधर
5.	आलोक	ठाकुर दत्त पाण्डेय
6.	आन्दोलन	अभिमन्यु अनत
7.	आर्य सभा मॉरिशस का इतिहास	मोहन लाल मोहित
8.	आर्य समाज मॉरिशस	धर्मवीर घूरा
9.	आर्य समाज का इतिहास	पूरन रामधन
10.	आकाश गंगा	पूजानन्द नेमा
11.	आदर्श बेटी	ब्रजेन्द्र भगत 'मधुकर'
12.	इन्सान और मशीन	अभिमन्य अनत
13.	ईश्वर प्रार्थना	पं.बौद्धनाथ पाण्डेय
14.	एक बीघा प्यार	अभिमन्यु अनत
15.	एक कहानी कुली की	ब्रजेन्द्र भगत 'मधुकर'
16.	और नदी बहती रही	अभिमन्यु अनत
17.	कुछ महत्वपूर्ण ग्रन्थ	वासुदेव विष्णुदयाल
18.	कुहासे का दायरा	अभिमन्यु अनत
19.	कवि सम्मेलन	इंडियन कल्चरल एसोशियेषन
20.	काव्य कली	ज्ञान दत्त

21. कृष्ण की वंशी	जदुनंदन शर्मा
22. कोयल की कूक	ठाकुर मणिलाल 'कन्हैया'
23. खामोशी के चीत्कार	अभिमन्यु अनत
24. गुंजन	ब्रजेन्द्र भगत 'मधुकर'
25. गोस्वामी तुलसीदास	ब्रजेन्द्र भगत 'मधुकर'
26. गीत मंजरी	मुनेश वासुदेव मोहन
27. गीता आदर्श माला	मुनिराम हरिदत्त
28. गीता माता	राम गुलाम गोकर्ण
29. गीता का अद्भुत संदश	वासुदेव विष्णु दयाल
30. गंगा की पुकार	सोमदत्त बखौरी
31. गाँधी स्मृति	हिन्दी लेखक संघ
32. चाचा राम गुलाम के संस्करण	सुरेश रामवर्ण
33. चिराग और तूफान	प्रेमचन्द मूली
34. चेतना	हेमराज सुन्दर
35. चौथा प्राणी	अभिमन्यु अनत
36. छन्द वाटिका	हरि प्रसाद रिसाल
37. जीवन प्रदीप	गणपत प्रसाद
38. जगार्ना की जीत	द्वारका अनिरुद्ध महेश
39. जीवन संगिनी	जयनारायण राय
40. जम गया सूरज	अभिमन्यु अनत
41. जय हिन्दी	ब्रजेन्द्र भगत 'मधुकर'
42. जार्ज	वासुदेव विष्णुदयाल
43. डॉ.शिवसागर रामगुलाम	कृष्ण शर्मा
44. डॉ.शिवसागर रामगुलाम	गणेश टेकलाल
45. डॉ.शिव सागर रामगुलाम की राजस्थान यात्रा	प्रह्लाद रामशरण

46. तरंगिनी	देवननन
47. तीसरे किनारे पर	अभिमन्यु अनत
48. तपती दोपहर	अभिमन्यु अनत
49. दिव्य दृष्टि	राम मणि त्रिपाठी
50. दीपावली	ठाकुर प्रसाद मिश्र
51. देश के फूल	मुनीश्वर लाल चिन्तामणि
52. नई कहानियाँ	अलीमन ईश्वर दत्त
53. नव निर्माण की बेला	मुनीश्वर लाल चिन्तामणि
54. नवीन हिन्दी	राम प्रकाश
55. नया अंकुर	धर्मवीर घूरा
56. निशा	ठाकुर दत्त पाण्डेय
57. नये मॉरिशस के निर्माता:शिवसागर रामगुलाम	पं. रमालगन शर्मा
58. नागफनी में उलझी साँसे	अभिमन्यु अनत
59. पॉल और वर्जिनी (मूल वर्नादस पियरे)	कई अनुवाद हो चुके हैं।
60. परल	ब्रजलाल रामदीन
61. पहला कदम	कृष्ण लाल बिहारी
62. प्रथम रश्मि	कालीचरण जनार्दन
63. प्रथम किरन	मुनीश्वर लाल चिन्तामणि
64. प्रवासी साहित्य	सुरेन्द्रनाथ वर्मा
65. प्रभात	हरिनारायण सीता
66. प्रवासी स्वर	सोमदत्त बखौरी
67. पुष्पांजलि	ठाकुर दत्त पाण्डेय
68. पूजा विधान	टेम्पल्स फेडरेशन
69. पाँच एकांकी एक सपना	ठाकुर दत्त पाण्डेय
70. फ्रेंच हिन्दी कोश	प्रो. वासुदेव विष्णुदयाल

71. फट गई धरती	विष्णुदत्त मधुचन्द्र
72. बाल शिक्षा	दर्शन बोनामाली
73. बिखरे सुमन	रामरत्न रिसाल मिश्र
74. बीच में बहती धारा	सोमदत्त बखौरी
75. भारत और मॉरिशस	प्रो.वासुदेव विष्णुदयाल
76. भारतीय साहित्य	प्रो.वासुदेव विष्णुदयाल
77. भगवान कृष्ण बोले	प्रो.वासुदेव विष्णुदयाल
78. भारत की संगीत कला	ईश्वर दत्त नन्दलाल
79. गीत संग्रह	पोखन रुद्रदत्त
80. भोजपुरी गीत	पोखन रुद्रदत्त
81. भजन माला	ज्वाला प्रसाद शर्मा
82. भजनांजली	सिननन हरिदेव
83. भक्ति प्रकाश	गोपीचन्द छतर
84. मॉरिशस में भारतीयों का इतिहास	हजारी सिंह
85. मॉरिशस का हिन्दी साहित्य तथा अन्य निबंध	मुनीश्वर लाल चिन्तामणि
86. मॉरिशस राष्ट्र गीत	बौद्धनाथ रामनाथ पाण्डेय
87. मॉरिशस में बाढ	गिरिजानन्द रंगू
88. मधुमास	ब्रजेन्द्र भगत 'मधुकर'
89. मधुकरी	ब्रजेन्द्र भगत 'मधुकर'
90. मधुचक्र	ब्रजेन्द्र भगत 'मधुकर'
91. मधु कलश	ब्रजेन्द्र भगत 'मधुकर'
92. मधुवन	ब्रजेन्द्र भगत 'मधुकर'
93. मॉरिशस भारती	विष्णुदत्त मधुचन्द्र
94. मॉरिशस की हिन्दी कविता	अभिमन्यु अनत
95. मॉरिशस में हिन्दी कहानी	अभिमन्यु अनत

96. मॉरिशस की लोककथाएँ	प्रह्लाद
97. मुझे कुछ कहना है	सोमदत्त
98. मैं हूँ कलियुगी भगवान	कृष्ण बिहारी
99. मुहब्बत की राहों में	ठाकुर चित्तरंजन
100. मेरी कोठरियाँ	प्रो.वासुदेव विष्णुदयाल
101. महात्मा गाँधी	प्रो.वासुदेव विष्णुदयाल
102. मॉरिशस के युद्ध में भारतीय योद्धा	प्रो.वासुदेव विष्णुदयाल
103. मणिलाल डॉक्टर	हीरा लाल गुप्त
104. मॉरिशस का भूगोल	पं.काशीनाथ
105. मॉरिशस में ईश्वर	पं.विश्वनाथ आत्माराम
106. मॉरिशस का इतिहास	पं.विश्वनाथ आत्माराम
107. मोती निबन्ध माला	मोती शिवलाल
108. मॉरिशस का इतिहास	बाबाजी इष्णु
109. मिनिष्टर	श्रीमती भानुमति नागदान
110. मॉरिशस द्वीप और उसकी भाषाओं का सर्वेक्षण	डॉ.रामेश्वर ओरू
111. मॉरिशस की भोजपुरी भाषाओं के सम्पर्क के के आलोक में भाषा वैज्ञानिक अध्ययन	डॉ.रामेश्वर ओरी
112. मॉरिशस हिन्दी भाषा का संक्षिप्त इतिहास	जयनारायण राय
113. मॉरिशस में प्रारंभिक आर्य जीवन का इतिहास	पं.रामलखन शर्मा
114. मॉरिशस में भारतीयों के आगमन की शताब्दी	संपादन.के.के.हजारी सिंह
115. रवि रश्मि	विष्णुदत्त मधुचन्द्र
116. रवि अंशु	लालभन बलराम
117. रणभेरी	ब्रजभूषण माथुर
118. रागिनी	ब्रजेन्द्र भगत 'मधुकर'
119. रसरंग	ब्रजेन्द्र भगत 'मधुकर'

120.रसवन्ती	ब्रजेन्द्र भगत 'मधुकर'
121.रसपुंज कुण्डलियाँ	लक्ष्मीनारायण चतुर्वेदी
122.लाल पसीना	अभिमन्यु अनत
123.लावांचिर की देन	प्रो.वासुदेव विष्णु दयाल
124.लिखो और लिखना सीखो	द्वारका अनिरुद्ध महेश
125.विरोध	अभिमन्यु अनत
126.वेद भगवान बोले	प्रो.वासुदेव विष्णु दयाल
127.विष्णु दयाल रचनावली	प्रो.वासुदेव विष्णु दयाल
128.विष्णु दयाल लेखावली	प्रो.वासुदेव विष्णु दयाल
129.विष्णु दयाल निबन्धावली	प्रो.वासुदेव विष्णु दयाल
130.व्यवहार प्रकाश	प्रो.वासुदेव विष्णु दयाल
131.विचार विदिका	सूर्य प्रकाश मंगर भगत
132.वरदान	केश्ली कुमार रागपत
133.वीणा वादिनी	इन्द्रदेव भोला
134.व्यावहारिक हिन्दी रचना	मुक्तेश्वर सोनू
135.व्यावहारिक व्याकरण	पं.रामसेवक
136.वर्त्तमान	लोचन विदेशी
137.वीर कृष्ण इतिहास मंजरी	गया सिहं राम खेलावन
138.विजयगान	ब्रजेन्द्र भगत 'मधुकर'
139.वीरगाथा	ब्रजेन्द्र भगत 'मधुकर'
140.शिव स्तोत्र विकम्	सनातन धर्म टेम्पल्स फेडरेशन
141.शेफाली	अभिमन्यु अनत
142.शादी से आबादी नहीं बरबादी	मोती तोरल
143.शान्ति निकेतन की ओर	मुनीश्वर लाल चिन्तामणि
144.शिशुबोध	पं.काशीनाथ

145.शताब्दी सरोज	लक्ष्मीनारायण चतुर्वेदी
146.स्वराज्य गीतांजलि	ब्रजेन्द्र भगत 'मधुकर'
147.स्वतन्त्रता का सुप्रभात	ब्रजेन्द्र भगत 'मधुकर'
148.शिवसागर रामगुलाम	ब्रजेन्द्र भगत 'मधुकर'
149.स्वागत गान	पं.बौद्धनाथ पाण्डेय
150.सनातन धर्मपाल प्रश्नोत्तरी	जगनारायण सिंह
151.साहित्य सौरभ	रामबोली कोमल
152.सागर पार	दीपचन्द बिहारी
153.स्वर्ग में क्या रखा है	दीपचन्द बिहारी
154.सुधा कलश	जयरूद दोसिया
155.सनातनीय विवाह के गीत	पं.बौद्धनाथ पाण्डेय
156.स्वास्थ्य शिक्षा	डॉ.शिव गोविन्द धगडू
157.सीता	लेखक-आविल लोभ (अनु.अरुणा)
158.संस्कृत सीखो	बख्तावर सिंह
159.संगीत सुधा	जानकी प्रसाद
160.संगीत प्रतियोगिता के गाने	नत्थू देवलाल
161.स्वस्थ रहो	ईष्णु बाबाजी
162.सुरभित उद्यान	हिन्दी लेखक संघ
163.सुबोध अलंकार वाटिका	अचरंज लालदेव
164.सत्संग पुष्प	सेवासंघ प्रकाशन
165.सत्संग सुमन	मोहनलाल मोहित
166.संत पुष्पमाला	किशुन लाल चिन्तामणि
167.सूरज का कहवा घर	लोचन विदेशी
168.हमारी मातृभूमि के सम्मान में	देववंश लाल रामनाथ

169.हास्य वाटिका	विष्णुदत्त मधुचंद्र
170.हिन्दी गौरव गान	ब्रजेन्द्र भगत 'मधुकर'
171.हमारा देव	ब्रजेन्द्र भगत 'मधुकर'
172.हिन्दू धर्म	ठाकुर प्रसाद मिश्र
173.हिन्दी अंग्रेजी अनुवाद	भुवनेश्वर सोनू
174.हिन्दी प्रवेशिनी	पुरुषोत्तमलाल गौर
175.हिन्दी व्याकरण	पं. राम अवध
176.हिन्दी की पहली पुस्तक	जदुनन्दन लाल शर्मा
177.हिन्दू मॉरिशस	पं.आत्माराम विश्वनाथ
178.हिन्दी के आधार स्तम्भ	मुनीश्वरलाल चिन्तामणि
179.हिन्दी पुस्तक	प्रो.वासुदेव विष्णुदयाल
180.हड़ताल कल होगी	अभिमन्यु अनत
181.त्रिवेणी	त्रिवेणी प्रकाशन
182.ज्ञान ज्योति	वेणीमाधव रामखेलावन
183.ज्ञान भजन माला	महावीर ज्ञानदत्त

मॉरिशस की हिन्दी पत्रपत्रिकाएँ

1.	हिन्दुस्तानी	1909
2.	मॉरिशस आर्य पत्रिका	1911
3.	मॉरिशस इण्डियन टाइम्स	1920
4.	मॉरिशस मित्र	1924
5.	आर्यवीर	1929
6.	सनातन धर्मांक	1933
7.	मासिक चिट्ठी	1942
8.	आर्यवीर जागृति	1945
9.	मजदूर	1945

10.	सैनिक	1946
11.	जनता	1948
12.	जमाना	1950
13.	मॉरिशस अमालगमेटेड	1953
14.	समाजवाद	1960
15.	कांग्रेस	1964
16.	बालसखा	1965
17.	नवजीवन	1969
18.	वसंत	1936
19.	वसंत (दुबारा)	1976
20.	अनुराग	1969
21.	प्रकाश	1964
22.	आभा	1974
23.	दर्पण	1974
24.	प्रेसीडेंसी कॉलेज पत्रिका	1971
25.	आर्य समाज का हीरक जयंती (विशेषांक)	1970
26.	स्मारिका आर्य महा सम्मेलन	1970
27.	हिन्दू महासभा (स्वर्ण जयंती विशेषांक)	1976
28.	द वैदिक जनरल (हिन्दी और अंग्रेजी दोनों की रचनाएँ	1976 .

('मॉरिशस का हिन्दी साहित्य' : डॉ. लता, पृ.119-25 से साभार उद्धृत)

परिशिष्ट - 2

विश्व के विभिन्न देशों में हिन्दी पठन-पाठन संबंधी संस्थाओं की सूची निम्नवत देखी जा सकती हैं। इसमें भारतीय शिक्षा संस्थाओं को शामिल नहीं किया गया है।

1. Australia आस्ट्रेलिया

1. South and West Asia Center Australian National University, Canberra, Up to PhD level
2. Department of Indonesian and Indian studies, University of Melbourne, Melbourne, Up to B.A. level
3. University of Sydney, 3 years Diploma course

2. Austria आस्ट्रिया

4. Institute of Indology, University of Vienna, Vienna, Diploma course

3. Argentina अर्जेंटिना

5. Interdisciplinary institute of Afro-Asian studies 2 years Diploma course

4. Afghanistan अफगनिस्तान

6. Kendriya Vidhyalay, Kalul
7. Embassy Kindergarten school, Elementary level
8. Asmai school, Elementary level
9. Shahid Joginder singh school, Elementary level

5. Bahrain बहरीन

10. State University, Gann

11. Local Indian schools conducting studies up to class XII

6. Belgium बेल्जियम

12. Indology department Catholic University, Louvian

4 years degree course

13. State University, Ghent, 4 years degree course

7. Bulgaria बुल्गारिया

14. University of Sofia, Sofia, Degree level

8. Bangladesh बंग्लादेश

15. India International School, up to VIIth level

(follows central school syllabus)

9. Bhutan भूटान

16. Hindi is taught in five schools, up to school level.

10. Canada कनाडा

17. University of British Columbia, Vancouver

All level proficiency

18. University of Toronto, Undergraduate level

19. University of Windsor, Introductory level

20. Mc gill University, Montreal

21. University of Regina, Luther college

22. Mukul Hindi school

23. Hindi Vidyalay (Schools in Toronto; two each in

Cambridge and Waterloo and one in Gulep also impart Hindi training up to 3rd standard.

11. China चीन

24. University of Beijing, Beijing, 5 years degree course

25. University of Nanjing, Nanjing.

12. Check Republic चेक गणराज्य

26. Charles University , Upto doctorate level

27. School of Languages, Pre-university course

13. Denmark डेन्मार्क

28. Studiospolu, Copenhagen, Elementary level

29. Institute of Indology, University of Arhus, Arhus. Up to research level

14. Ethiopia इथोपिया

30. Indian National School

31. Indian Community School

15. F.R.G. जर्मनी संघीय गणराज्य (पश्चिमी जर्मनी)

32. University of Mar burg, Me burg, Basic Hindi course

33. University of Mainy, Mainy, Upto M.A. and Ph.D. level

34. University of Goettingen, Goettingen Two years Hindi course

35. University of Bonn, Bonn, Up to Ph.D. (Conduct Translation course also)

36. University of Yuelingen, Yuelingen Upto M.A. level

37. University of Muencher, Muencher Basic, Intermediate and advance level
38. University of Bo chum, Bo chum 3 year courses for beginners
39. University of Hamburg, Hamburg Up to M.A.and Doctorate level.
40. Humboldt University, Berlin, 5 years diploma courses
41. Karl Marx University, Leipyg

16. Finland फिनलैण्ड

42. University of Helsink i, Helsinki Graduate and Post Graduate level

17. France फ्राँस

43. University of Paris, Paris III
44. Institute of National Des Language et Civilization oriental, Pates, Up to graduate level.
45. Nouvelles Frontiers Travel Agency, Paris.
46. Indian Book shop, 20 Rue, Descartes, Paris
47. Institute of Linguistics and Anthropology, University of Saint Davis, Reunion Island.

18. Fiji फीजी

48. Hindi is taught as second language in Indian schools and

in

several multi racial schools. At University level Hindi is not taught because of regional character.

19. Ghana घाना

49. Indian Community School, Monrovia

20. Guayana गयाना

50. University of Guyana, Georgetown.
51. Tagore Memorial schools, Berlue Elementary level.
52. Sine Path secondary school, Sheldon.
53. Hindi college, Lone and John

(Numbers of voluntary Organizations also conduct Hindi Classes)

21. Holland (Netherlands) हालैंड

54. University of Seiden
55. University of Utrecht
56. Hindi Parishad, Netherlands.

(Some voluntary organizations also conduct Hindi classes)

22. Hungary हंगेरी

57. Department of Indo-European languages, Eotves Lorand University, Budapest.
58. Cosma de koroni society, Budapest

Different proficiency level

59. University of Indo-European Language, Otbose, Eotues

60. Lorand University, Budapest.

23. Italy इटली

61. CESMEO, Institute for oriental studies, Yurin

Under graduate level

62. University of Rome (La Sapienya)

Under graduate level

63. University of Pisa, under graduate level

64. University of Naples, under graduate level

65. University of Venice, under graduate level

66. I.S.M.E.O., Rome, under graduate level

67. University of Milan, six months course

24. Iran ईरान

68. One school run b y local Gurdueara Managing Committee

and Hindi is taught up to 5th standard according to C.B.S.E.

Syllabus

25. Ireland आयरलैण्ड

69. Institute of Linguistics and Anthropology, University of

Foreign Studies

26. Japan जापान

70. Tokyo University of Foreign Studies, Tokyo
71. Kyoto University, Kyoto
72. Yorai University
73. Taisho University
74. Oteman Garvin University
75. Yarashora University
76. Osara University for foreign studies, 2734, Aomadani, Ooaya, Minoo-shi-osara 562.
77. Ohtani University, Kamifusa.
78. Kansai Universities for foreign studies, 16-1, Kitarathere -che Hirarata-shi, Tokyo
79. Takashoka University
80. Asia University for foreign studies, Osaka

27. Kenya कीनिया

81. Local secondary school

28. Kuwait कुवेत

82. New Indian School
83. Carmel School
84. Indian School

29. Liberia लैबेरिया

85. Indian Community school

30. Libya लिबिया

86. Indian Community school, Tripoli, X standard
87. Indian Community school, Benghazi, X standard
88. Indian Community school, Al-Khes, VIII standard
89. Indian Community school, Sabha, VIII standard

31. Mauritius मॉरिशस

90. Presidency college, Cure pipe
91. Presidency College, Riviera des Aiguilles
92. Mauritius college, Cure pipe
93. Eastern college, Central flacq
94. Flacq girls college, Central Flacq
95. Piton high school, Piton
96. Ambassador college, Bambons
97. Bambons College, Bambons
98. Hindu Girls college, Cure pipe road
99. Modern college, Central Flacq
100. D.A.V college, Port Louis
101. College ideal, Riviere du Rempart,

Approximately 840 schools including 185 Govt. schools

32. Mexico मेक्सिको

102. Colegio de Mexico, Mexico, Elementary level

33. Nepal नेपाल

103. Tribhuvan University, Kathmandu, Up to M.A. level

104. Padma Kanya Campus, Certificate level

105. Mahendra Vindeshwari Campus, Birat Nagar
Certificate and B.A. level

106. Ramswarup Ram sagar campus, Janarpur
Certificate and B.A. level

107. Thakur ram campus, Birganj, Certificate and B.A. level

108. Mahendra Campus, Nepalgunj, Certificate and B.A. level

109. Kirtipur centre of excellence, M.A. level

34. Norway नार्वे

110. Indo-Iranian Institute, University of Oslo, Oslo
Up to B.A. level

35. Nigeria नाइजीरिया

111. Indian language school, Lagos, X th standard

36. Oman ओमान

112. Indian School, Muscat, XII th standard

113. Indian School, Muttrah, XII th standard

114. Indian School, Salah, XII th standard

115. Indian School, Soharl, XII th standard

37. Phillippines फिलिपीन्स

116. University of Philippines, Manila

38. Pakistan पाकिस्तान

117. University of Karachi, Karachi, Hindi Diploma course

118. Punjab University, Lahore, Research Course

119. School of Modern Languages, Islamabad

39. Poland पोलैंड

120. University of Warsaw, Warsaw, Up to Post Graduate level

121. Jegellonian University, Krakow

122. Mickiewicz University, Poynam

40. Qatar कतार

123. MES Indian School

124. Ideal Indian School

41. Republic Of Korea कोरिया गणराज्य

125. HangkuK University of foreign studies, Seoul, Up to B.A. level

126. Pusan University of Foreign studies, Pusan

42. Romania रोमानिया

127. University of Bucharest, Bucharest

43. Russia रूस

128. Moscow state institute of international relations, Moscow

129. Lenin Grad University, Leningrad.

130. Institute of Asia and African Countries, Moscow.

131. Moscow Boarding school, No.19, X Standard.

44 Spain स्पेन

132. Center of African and Asian studies, Madrid University, Madrid, Up to Intermediate level

45. Srilanka श्रीलंका

133. Kalaniya University, Up to B.A. level

134. University of Sri Jayaulardhamepura, Colombo Up to B.A. level

135. Six private institutions

46. Sweden स्वीडन

136. Stockholm University, Stockholm Under graduate level

47. Somalia सोमालिया

137. Indian School, Mogodiscio, IXth standard

48. Suriname सूरीनाम

138. Approximately 100 schools run by voluntary organizations.

49. Saudi Arabia सऊदी अरब

139. Hindi is taught at various places in kingdom up to Xth standards and schemes are affiliated to C.B.S.E

50. Sanaa (Yemen Arab Republic) यमन अरब गणराज्य

140. Hindi is taught in Indian Embassy schools up to 6th standard and scheme follow C.B.S.E syllabus.

51. Tajikistan ताजिकिस्तान

141. Tajikistan State University, Tadjik.

52. Tanzania तंजानिया

142. Indian Expatriate study group, Dar-Es-Salaam (Follows all India high school syllabus), unto 10th level

143. International school of Tanganyika, Dar-Es-Salaam

53. Thailand थाइलैण्ड

144. Silpakorn University, Up to Post Graduate Level

145. Thai Bharat School, Up to secondary level

146. Sikh Vidyalaya, Bangkok, Up to Primary level

147. Thai Bharat cultural lodge, Upto Elementary level

54. Trinidad and Tobago त्रिनिडाड तथा टुबेगो

148. Hindi is taught in University of the W.I., St.Augustine Campus, Graduation level, On regular basis. Some Voluntary organizations also run Hindi classes.

55. Turkey तुर्की

149. Department of Indology, Ankara University, Ankara

56. U.K. यू.के.

150. Cambridge University

151. London University, Up to Ph.D level

152. York University

57. U.S.A. संयुक्त राज्य अमरीका (Different levels of proficiency)

153. University of California, Los Angeles, California 90024

154. Stanford University, Stanford, California 94305.

155. University of Hawaii Monoa, Honolulu, Hawaii, 96822.

156. American University, Washington, D.C.20016

157. University of Illinois 60680

158. University of Illinois at Urbana, Champaign, Illinois

159. University of Michigan, Ann Arbor, Michigan 18109

160. University of Minnesota, Minneapolis, Minnesota

161. University of Missouri Columlua, Missouri 65211

162. Cornell University of New York, Buffalo, New York

163. State University of New York, Buffalo, New York, 14260

164. State University of New York, Oneonta, New York, 13210 165. Syracuse University, Syracuse, New York 13210

166. Duke University, Durham, North Carolina 27706

167. Kent State University, Kent Ohio 44242

168. University of Pittsburgh, Pittsburgh, Pennsylvania, 15260 169. Brown University, Providence, Rhode Island 02912

170. University of Texas at Austin, Austin, Texas 78712

171. University of Virginia, Charlovesnille, Virginia 22903

172. University of Washington, Seattle, Washington. 98195

173. University of Wisconsin at Madison, Madison, Wisconsin

174. Institute of Integral Studies, San Francisco.

58. Uzbekistan उज्बेकिस्तान

175. Tashkent state university, Tashkent.

176. Tashkent Boarding School, Tashkent

59. United Arab Emirates संयुक्त अरब अमीरात

177. Abu Dhalu Indian School, 12th level

178. Indian Islahi Islamic School, 12th level

179. Indian School, Al Ain 10th level

180. St. Joseph school, 9th level

181. Indian High School, Dubai

182. Gul Indian School, Dubai

183. Our Own India High School, Dubai

184. Central School, Dubai

185. Sharjah Indian School

186. Sharjah Public School

187. Children Pavilion

(All schools located at Abu Dhabi, a few schools in Al Khaimah, Umm al quwain)

60. Yougoslavia यूगोस्लाविया

188. Zegret University, Post Graduate level

इस सूची को संपूर्ण नहीं कहा जा सकता क्योंकि इसके बाद भी अनेक विश्वविद्यालयों ने हिन्दी पाठ्यक्रम चालू किया है और नई संस्थाएँ भी बनी हैं जहाँ हिन्दी को विषय के रूप में अपनाया गया है।

* * *

संदर्भ ग्रन्थ सूची

हिन्दी

1. अभिमन्यु अनत : एक बात चीत, डॉ. कमल किशोर गोयनका, ज्ञान भारतीय प्रकाशन, रूपनगर, दिल्ली, प्र.सं. 1985,
2. अस्वीकृति में उठे हाथ ; (संपा), हेमराज सुन्दर, नटराज प्रकाशन, नई दिल्ली. प्र.सं. 2002,
3. तेरे दान किए गीत व अन्य कविताएँ, डॉ. स्मेकल ओदोलेन, समकालीन प्रकाशन, नई दिल्ली, प्र.सं. 1982,
4. दस्तकः मारिशस से हिन्दी कविताएँ, सुमति बुधन, नटराज प्रकाशन, नई दिल्ली प्र.सं. 1998.
5. प्रवासी भारतीयों की हिन्दी सेवा, डॉ. कैलाश कुमारी सहाय
6. फीजी में हिन्दी : स्वरूप और विकास, विमलेश वर्मा और धीरा वर्मा , पीताम्बरा प्रकाशन अशोक नगर, नई दिल्ली, प्र.सं. 2000.
7. बारहवीं शताब्दी के राजकाज में हिन्दी, रामबाबू शर्मा ,केन्द्रीय हिन्दी संस्थान, आगरा प्र.सं. 1980.
8. भारतीय साहित्य का समेकित इतिहास, डॉ. नगेन्द्र, नेशनल पब्लिशिंग प्र.सं. 1983.
9. भारतीय गणतन्त्र में हिन्दी: दशा और दिशा, विमलेशकान्ति वर्मा , नेहरू स्मारक स्मृति संग्रहालय तथा पुस्तकालय प्र.सं. 2002.
10. भारतीय भाषाएँ और राष्ट्रीय अस्मिता (संपा) मुकुन्द द्विवेदी, हिन्दी अकादमी समुदाय भवन, नई दिल्ली प्र.सं. 2001.
11. भारतीय भाषाओं के साहित्य का संक्षिप्त इतिहास, गोपाल शर्मा, केन्द्रीय हिन्दी निदेशालय दिल्ली प्र.सं. 1974.
12. भाषाविज्ञान, डॉ. भोलानाथ तिवारी किताब महल इलहाबाद प्र.सं. 1978.

13. भाषाविज्ञान (हिन्दी भाषा और लिपि), डॉ. दानबहादुर पाठक 'वर', डॉ. मनहर गोपाल भार्गव, प्रकाशन केन्द्र प्रकाशन केन्द्र, लखनऊ.

14. मॉरीशस का इतिहास, प्रह्लाद रामशरण, समानान्तर प्रकाशन नई दिल्ली प्र.सं. 1988.

15. मॉरीशस का हिन्दी कथा साहित्य, प्रेमचन्द अप्रकाशित, एम.फिल शोध ग्रन्थ 1998.

16. मॉरीशस का हिन्दी साहित्य, डॉ. लता जय भारती प्रकाशन इलहाबाद प्र.सं. 1992.

17. मॉरीशस के हिन्दी उपन्यासों का मूल्यांकन, डॉ. हेमराज निर्मम प्रेम प्रकाशन मंदिर दिल्ली प्र.सं. 1993.

18. मॉरीशस में हिन्दी साहित्य का उद्‌भव और विकास, डॉ. श्यामधर तिवारी विनसार पब्लिशिंग.कं. दिल्ली प्र.सं. 1997.

19. मॉरीशस : हिन्दी महासागर में नवोदित राष्ट्र, प्रह्लादराम शरण, समानान्तर प्रकाशन नई दिल्ली प्र.सं. 1988.

20. मॉरीशशीय हिन्दी साहित्य एक परिचय, (मॉरिशस का गद्य साहित्य) डॉ. मुनीश्वर लाल, चिन्तमणि हिन्दी बुक सेन्टर नई दिल्ली प्र.सं. 1996.

21. राजभाषा हिन्दी :विकास के विविध आयाम, डॉ. मलिक मुहमद प्रवीण प्रकाशन नई दिल्ली प्र.सं. 1986.

22. राष्ट्रभाषा के संघर्ष भरे पच्चीस वर्ष, कैलाश जोशी सैलाना मध्यप्रदेश राष्ट्र भाषा रंगमंच, प्र.सं. 1982.

23. विश्व में हिन्दी खण्ड -1 & विश्व में हिन्दी खण्ड -2 हरिबाबू जोशी सुधान्सु बन्धु वसन्त विहार, दिल्ली प्र.सं. 1995.

24. स्मारिका सांतवाँ विश्व हिन्दी सम्मेलन (संपा), कमल किशोर गोयनका, भारतीय सांस्कृतिक संबंध परिषद जून 2003.

25. संपर्क भाषा हिन्दी, भोलानाथ तिवारी और कमल सिंह प्रभात प्रकाशन नई दिल्ली प्र.सं. 1987.

26. विश्व हिन्दी की यात्रा (संपा), लल्लन प्रसाद व्यास, वाणी प्रकाशन नई दिल्ली प्र.सं. 1979.
27. हिन्दी और हम, विद्यानिवास मिश्र, ग्रन्थ अकादमी नई दिल्ली प्र.सं. 2001.
28. हिन्दी की विश्व यात्रा (संपा), डॉ. सुरेश ऋतुपर्ण नई दिल्ली प्र.सं. 2001.
29. हिन्दी के प्राचीन प्रतिनिधि कवि, द्वारिका प्रसाद सक्सेना, दशम संस्करण 1986.
30. हिन्दी के विकास में अपभ्रंश का योगदान, डॉ. नामवर सिंह दिल्ली प्र.सं. 1989.
31. हिन्दी नई चाल में ढ़ली एक पुनर्विचार (संपा), पुरुषोत्तम अग्रवाल, संजय कुमार देशकाल प्रकाशन दिल्ली प्र.सं. 2000.
32. हिन्दी भाषा एवं साहित्य का विकास, डॉ. भगवत शरण चतुर्वेदी
33. हिन्दी भाषा विकास और स्वरूप, डॉ. कैलाश चन्द्र भाटिया, मोतीलाल चतुर्वेदी, ग्रन्थ अकादमी नई दिल्ली प्र,सं. 2001.
34. हिन्दी मत और अभिमत, विमलेश कान्तिवर्मा, प्रकाशन विभाग सूचना और प्रसारण मंत्रालय, सं. 1996.
35. हिन्दी विकास और संम्भावनाएँ, डॉ. कैलाशचन्द्र भाटिया भारत सरकार नई दिल्ली 1996.
36. हिन्दी विविध व्यवहारों की भाषा, डॉ. सुवास कुमार वाणी प्रकाशन नई दिल्ली प्र.सं. 1994.

अँग्रेजी

1. A Nation without National Language, Gopal Rao Ekbote (Chef Justice Retd), Hindi Prachara Sabha, Hyderabad, edt. 1984.
2. Atlas of the world Language, first Published in 1994, by Rout ledge, sec 4, South Asia Section, Editor-R.E Asher, 29 West, 35th street New York. 110001.

3. Indenture & Exite The Indo Caribbean Experience, Edited by Frank Birbal singh.
4. Global Indian Diaspora, Yesterday, today and tomorrow, by Jagat k.Motvani, etal, pub. by New Delhi; Global Organization of people of Indian origin (GOPIO) 1993.
5. Hindi in Mauritius, Somdath Buchoury, The Royal printing Port Louis Mauritius, edt. 1977.
6. Hinduism in Caribbean, Ramcharan Gosine, First edit.1997. Pub. Premier Printing Company Ltd.
7. Indian Communities abroad Themes and Literature, by. Ravindrakumar Jain, Pub. Ajay Kumar Jain, Manohar Publisher and distributors. New Delhi.
8. Introduction to the Constitution, Durga Das Basu, Prentice Hall of India Pvt.Ltd. New Delhi.13th edt. 1990.
9. Language Law National Integration, by. Jenifer Marie Bayer, Central Institute of Indian Language. Maysore. 1979.(CIIL Occasional Monograph Series, 36).
10. Language Movements in India, edt. E. Annamalai, Central Institute of Indian Language. Maysore. 1979.
11. Social Development in Mauritius, S.R. Meheta, Wiley Eastern Ltd. N. Delhi. edt. 1981.
12. Sojourn to Settlers: Indian Migrants in the Caribbean and the America, by. Mahen, Gosine and Dhanpaul Naraine, USA. Windsor Press, f.e. 1999.

13. The coolie connection: From the Orient to the Occident, by Mahen Gosine, New York, Windsor Press, f.e. 1992.

14. Voices from Indenture : Experience of Indian Migrants in the British Empire, Leicester University Press, London and New York, 1996.

पत्र-पत्रिकाएँ

हिन्दी

1) अभिनव प्रसंग, अप्रैल-जून 1994.

2) आजकल, अगस्त, दिसंबर 1976, 94.

3) कादम्बिनी, जनवरी 1999.

4) गगणांचल, 1993, 1996, 1999.

5) चिंतन-सृजन, जनवरी, मार्च 2004.

6) दिनमान (दैनिक), 29 अगस्त, सितंबर 4,12, 18, 1971.

7) दिनमान, (रविवार संस्करण) 14 जनवरी 1984.

8) दक्षिण समाचार, अक्टूबर 13, 1999.

9) धर्मयुग, जनवरी 12, 1975.

10) नया ज्ञानोदय, जनवरी, फरवरी, 2004.

11) नवनीत हिन्दी डाइजेस्ट, जनवरी 1984.

12) पंकज, सितंबर 1996.

13) पावन स्मरण, अप्रैल-जून 1985.

14) भाषा, मार्च-जून 1975.

15) मधुमती, अगस्त 1993.

16) राजभाषा, अगस्त-जून 1985.

17) राष्ट्र भाषा, अगस्त 2003.

18) राष्ट्र भाषा संदेश (पाक्षिक) मई 30, 2004.

19) वागर्त, अगस्त 2004.

20) विवरण पत्रिका, सितंबर 1994, जनवरी 1995.

21) शब्द शिल्पियों के आस पास, जनवरी 2003.

22) विश्व हिन्दी दर्शन, जनवरी-मार्च, 1991.

23) विश्वा, अप्रैल 1997.

24) समकालीन भारतीय साहित्य, सितंबर-अक्टूर, 2002.

25) सरस्वती, फरवरी 1975.

26) साहित्य अमृत, जुलाई 2002.

27) हंस, जनवरी 1996.

28) हिन्दी प्रचार वाणी, अक्टूबर 2004.

29) हिन्दी मिलाप (दैनिक) सितंबर 14, 2004.

30) हिन्दुस्तान (दैनिक) 23 अक्टूबर 1983.

31) क्षितिज, मार्च 2000.

अँग्रेजी

1. Employment News, Sep. 27-3rd Oct. 2003.
2. Indian Review, Commemorative the 151st Anniversary of the arrival of Indians to Trinidad, 1845-1996 (Special Issue).
3. Manorama Year Book 2004.
4. The Hindu, (Daily) Aug.4, 2003.
5. The Times of India, Jan. 9, 2003, and Jan. 9, 2004.

अन्य संदर्भ

Internet : www. vishwahindisammelan.nic.in

Interview : डॉ. दानुता स्ताशिक, वार्सा यूनिवर्सिटी, पोलैन्ड.

प्रो. कृष्ण मूर्ति, लंदन, इंग्लैण्ड.